# एक ऐतिहासिक झूठः पाषाण युग

अगर कोई गलती आपके नजर में आई तो
हमें फौरन बताइये। हम उसे सुधार लेंगे।

प्रस्तावना

क्या आप जानते हैं कि **700,000** साल पहले, लोग समुद्रों में बहुत अच्छी तरह बने हुए जहाजों में यात्रा करते थे**?**

या क्या आपने कभी सुना है कि "प्राचीन गुफ़ावासी" के रूप में वर्णित लोगों के पास वैसी ही विकसित कलात्मक योग्यता और समझ थी, जैसी कि आज के कलाकारों के पास है?

क्या आप जानते हैं कि 80,000 साल पहले जीवित और विकासवादी "बंदर-मानव" के रूप में चित्रित नींदरथलों ने संगीत के उपकरण बनाए थे, कपड़ों और सहायक सामग्रियों से आनंद लेते ते, और पीड़ा देने वाली गरम रेत पर साँचों के सैंडल पहनकर चलते थे?

इस बात की पूरी संभावना है कि आपने इनमें से किसी भी तथ्य के बारे में नहीं सुना होगा। इसके विपरीत, आपको इन लोगों के बारे में ग़लत जानकारी मिली होगी कि ये आधे बंदर थे और आधे मानव, पूरी तरह से सीधे नहीं खड़े हो सकते थे, उनमें शब्द बोलने की योग्यता नहीं थी और केवल अजीब घड़घड़ाहट की आवाज़ें करते थे। इसका कारण यह है कि पिछले 150 सालों से आप जैसे लोगों पर यह झूठ थोपा जा रहा है।

इसके पीछे यह इरादा है कि भौतिकवादी दर्शन को ज़िंदा रखा जाए, जो रचनाकार के अस्तित्व से इंकार करता है। इस धारणा के अनुसार, जो अपने रास्ते में आने वाले सभी तथ्यों को तोड़ती-मरोड़ती है, ब्रह्मांड और तत्व अनंत हैं। दूसरे शब्दों में उनकी कोई शुरुआत नहीं है, और इसलिए कोई रचयिता नहीं है। इस अंधविश्वास का तथाकथित वैज्ञानिक आधार विकास का सिद्धांत है।

क्योंकि भौतिकतावादी दावा करते हैं कि ब्रह्मांड का कोई रचयिता नहीं है, अतः उन्हें इस बात का अपना खुद का स्पष्टीकरण प्रदान करना होगा कि धरती पर जीवन और अनगिनत प्रजातियाँ कैसे अस्तित्व में आईं। इस उद्देश्य के लिए उन्होंने विकास के सिद्धांत को लागू किया। इस सिद्धांत के अनुसार, ब्रह्मांड में सारा क्रम और जीवन अचानक संयोग से अस्तित्व में आया। प्राचीन युग में कुछ निर्जीव तत्व संयोग से जुड़ गए और उनसे जीवित कोशिका पैदा हुई। लाखों सालों के ऐसे संयोगों के परिणावस्वरूप प्राणी अस्तित्व में आया। और अंत में मानव आया, जो विकासपरक शृंखला का अंतिम चरण था।

मानव का शुरुआती इतिहास – जो तथाकथित रूप से लाखों संयोगों के बदलावों के परिणावस्वरूप अस्तित्व में आया जिनमें से हर पिछले के मुकाबले असंभव था – इस परिदृश्य में ठीक बिठाने के लिए तोड़ा-मरोड़ा गया है। विकासवादियों के खाते के अनुसार, जिसमें कोई भी सबूत नहीं है, मानव का इतिहास इस प्रकार हैः जैसे कि जीवन ने सबसे प्राचीन जीव से आदमी तक प्रगति की है, जो सबसे अधिक विकसित है, इसी तरह मानव का इतिहास भी सर्वाधिक प्राचीन समुदाय से सर्वाधिक शहरी समाज तक विकसित हुई होगा। लेकिन इस अनुमान के पीछे किसी तरह का कोई सबूत नहीं है। यह मानव के इतिहास को भौतिकतावादी दर्शन और विकास के सिद्धांत के दावों के अनुसार तैयार किए जाने का भी प्रतिनिधित्व करती है।

विकासवादी वैज्ञानिकों – अपने अनुमानित विकासवादी प्रक्रिया के दावे को साबित करने के लिए कि यह एक कोशिका से अनेक कोशिकाओं के प्राणि के रूप में विकसित हुआ, और फिर बंदर से मानव – ने मानव का इतिहास लिखा है। इसके लिए उन्होंने "गुफा-मानव युग" और "पत्थर युग" जैसे काल्पनिक युगों का आविष्कार किया है और "प्राचीन मानव" की जीवन शैली का वर्णन किया है। इस झूठी बात का समर्थन करते हुए कि मानव और बंद एक ही समान पूर्वज से पैदा हुए हैं, विकासवादियो ने अपने दावों को साबित करने के लिए नई खोज शुरू कर दी है। वे अब पुरातात्विक खुदाई के दौरान मिले हर पत्थर, तीर के सिरे या बर्तन की इस रोशनी में व्याख्या करते हैं। लेकिन आधा-बंदर, आधा-आदमी प्राणियों के अंधेरी गुफाओं में बैठे, फ़र पहने, और बोलने की सुविधा रहित चित्र और जीवंत प्रस्तुतियाँ सब काल्पनिक हैं। पुराकालीन आदमी कभी थी ही नहीं, और पत्थर युग भी कभी नहीं था। वे कुछ और नहीं बल्कि विकासवादियों द्वारा मीडिया के एक भाग की मदद से पेश किए गए भ्रामक दृश्य हैं।

ये सभी संकल्पनाएँ भ्रम हैं, क्योंकि विज्ञान में हाल की तरक्की ने – ख़ास तौर से प्राणिविज्ञान, जीवाश्म विज्ञान, सूक्ष्म-प्राणिविज्ञान और नृतत्व शास्त्र में - विकास के सभी दावों का पूरी तरह से ध्वंस कर दिया है। इस विचार को अमान्य मान लिया गया है कि प्रजातियों का विकास हुआ और वे "बाद के" एक दूसरे के रूपों में बदलीं।

इसी तरह से, मानव भी बंदर-जैसे प्राणि से विकसित नहीं हुआ। मानव उसी दिन से मानव था, जिस दिन से वह अस्तित्व में आया, और उस दिन से ही उसमें परिष्कृत संस्कृति थी। इसलिए, "इतिहास का विकास" भी कभी नहीं हुआ।

इस किताब में इस बात के वैज्ञानिक सबूत हैं कि "मानव विकास के इतिहास" की संकल्पना झूठ है, और हम दिखाएँगे कि कैसे रचना के तथ्य को अब नवीनतम वैज्ञानिक खोजों से समर्थन मिल रहा है। मानव संसार में विकास के कारण नहीं आया, अपितु भगवान, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ की त्रुटिहीन रचना के कारण आया है।

अगले पृष्ठों में, इसके वैज्ञानिक और ऐतिहासिक सबूतों के बारे में आप खुद पढ़ सकते हैं।

## परिचय

विकासवादी ऐतिहासिक दृष्टिकोण मानवता के इतिहास का अध्ययन इसे अनके भागों में बाँटकर करता है, जैसे कि वह खुद मानव के तथाकथित विकास के क्रम के साथ करता है। पत्थर युग, कांस्य युग और लौह युग जैसी काल्पनिक संकल्पनाएँ विकासवादी कालक्रम के महत्वपूर्ण अंग हैं। क्योंकि यह काल्पनिक तस्वीर स्कूलों और टेलीविज़न और अख़बारों की कहानियों में पेश की जाती है, इसलिए

ज़्यादातर लोग इस काल्पनिक तस्वीर को बिना सवाल किए मान लेते हैं और कल्पना करते हैं कि मनुष्य कभी ऐसे युग में रहा है जब केवल प्राचीन पत्थर के औज़ारों का प्रयोग होता ता और प्रौद्योगिकी अज्ञात थी।

लेकिन जब पुरातात्विक निष्कर्षों और वैज्ञानिक तथ्यों की परिक्षण किया जाता है, तो बहुत अलग तस्वीर उभरती है। आज के समय तक जो निशान और अवशेष चले आए हैं - औज़ार, सुइयाँ, बाँसुरी के टुकड़े, गहने और सजावट – दिखाते हैं कि सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से, मनुष्य ने इतिहास के सभी कालों में हमेशा सभ्य जीवन जिया है।

सैंकड़ों-हज़ारों साल पहले, लोग घरों में रहते थे, खेती करते थे, सामान का लेन-देन करते थे, कपड़े बनाते थे, खाते थे, रिश्तेदारों के पास जाते थे, संगीत में रुचि लेते थे, पेंटिंग बनाते थे, बीमार का इलाज करते ते, पूजा करते थे और, संक्षेप में, आज की तरह ही सामान्य जीवन जीते थे। लोग जो भगवान द्वारा भेजे गए फ़रिश्तों की बात सुनते थे जिससे कि उसमें, जो केवल एक ही है, में विश्वास हो सकते, जबकि दूसरे लोग मूर्तियों की पूजा करते थे। भगवान में विश्वास रखने वाले लोग उसके द्वारा दिए गए आदेशों के नैतिक मूल्यों का पालन करते थे, जबकि अन्य अंधविश्वासो और असामान्य कामों में लगे रहते थे। इतिहास में सब समय, जैसे कि आज, ऐसे लोग रहे हैं, जो भगवान के अस्तित्व को मानते थे, और साथ ही अधार्मिक और नास्तिक भी रहे हैं.

निश्चित रूप से, समूचे इतिहास में, ऐसे लोग भी रहे हैं जो सरल, अधिक प्राचीन स्थितियों में जीवन बिताते थे और साथ ही सभ्य जीवन बिताने वाले समाज भी थे। लेकिन इससे किसी भी रूप में तथाकथित इतिहास के विकास का सबूत नहीं बनता, क्योंकि जबकि दुनिया का एक भाग अंतरिक्ष में शटल भेज रहा है, वहीं दूसरे भागों में ऐसे लोग हैं जो बिजली के बारे में नहीं जानते। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि जिन लोगों ने अंतरिक्ष यान बनाए हैं, वे मानसिक या भौतिक रूप से अधिक उन्नत हैं – और उन्होंने विकासवादी सड़क पर और आगे प्रगति कर ली है और वे सांस्कृतिक रूप से अधिक विकसित बन गए हैं – और न यह कि दूसरे लोग कहानी के बंदर-मानव के नज़दीक हैं। ये बातें केवल संस्कृतियों और सभ्यताओं में अंतर का संकेत करती हैं।

विकासवादी पुरातात्विक खोजों का हिसाब नहीं दे सकते

जब आप किसी विकासवादी के मानव के इतिहास का परीक्षण करते हैं, तो आपको इस बात का विस्तृत वर्णन मिलेगा कि कैसे मुनुष्य के तथाकथित प्राचीन पूर्वज अपना रोज़मर्रा का जीवन कैसे बिताते थे। जो भी इन विश्वस्त, आधिकारिक शैली से प्रभावित होगा, लेकिन जिसे विषय की अधिक जानकारी नहीं होगी, वह मान लेगा कि ये सब "कलात्मक पुनर्रचनाएँ" वैज्ञानिक सबूतों पर आधारित हैं। विकासवादी वैज्ञानिक ये विस्तृत विवरण इस प्रकार देते हैं, मानों वे हज़ारों साल पहले वहाँ थे और उन्हें यह सब देखने का मौका मिला था। वे कहते हैं कि जब हमारे तथाकथित पूर्वजों – जो अब अपनी दो टाँगों पर खड़ा होना सीख चुके थे और उनके पास अपने हाथों से करने के लिए कुछ नहीं था – ने पत्थर से औज़ार बनाना शुरू किया, और बहुत लंबे समय तक उन्होंने पत्थर और लकड़ी से निर्मित के अलावा, किसी और औज़ार का प्रयोग नहीं किया। बहुत समय के बाद ही उन्होंने लोहे, तांबे, और पीतल का प्रयोग करना शुरू किया। लेकिन ये ब्यौरे विकासवादी पूर्वधारणाओं की रोशनी में तथ्यों की ग़लत व्याख्या पर आधारित हैं, न कि वैज्ञानिक सबूतों पर।

इस किताब में *पुरातत्वविज्ञानः एक बहुत छोटा सा परिचय,* पुरातत्व वैज्ञानिक पॉल बाहन का कहना है कि मानव विकास का दृश्य कुछ और नहीं बल्कि परियों की कहानी है, जहाँ इतना सारा विज्ञान इतनी

सारी कहानियों पर आधारित है। उन्होंने बल दिया है कि उन्होंने "कहानी" शब्द का प्रयोग सकारात्मक अर्थ में किया है, लेकिन फिर भी, वे एकदम यही हैं। इसके बाद वे अपने पाठक को तथाकथित मानव विकास की पारंपरिक विशेषताओं पर विचार करने के लिए कहते हैं: भोजन पकाना और खेमे की आग, अंधेरी गुफाएँ, तौर-तरीके, औज़ार बनाना, बूढ़ा होना, संघर्ष और मौत। वे आश्चर्य करते हैं कि ये परिकल्पनाएँ कितनी तो हड्डियों और वास्तविक अवशेषों पर आधारित हैं, और कितनी साहित्यिक शर्तों पर?

बहन अपने उठाए गए सवाल का खुले रूप में उत्तर देने में संकोच करते हैं: अर्थात, यहै कि मानव का तथाकथित विकास "साहित्यिक" शर्त पर आधारित है न कि वैज्ञानिक।

दरअसल, इस हिसाब में बहुत से अनुत्तरित प्रश्न और तार्किक विसंगतियां हैं, जिसे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं पहचान सकता जो विकासवादी सिद्धांत के अनुसार सोचता है। उदाहरण के लिए, विकासवादी पत्थर युग का उल्लेख करते हैं, लेकिन यह समझाने में असफल रहते हैं कि उस समय के उपकरणों में उकेरा कैसे जाता था और उन्हें आकार कैसे दिया जाता था। इसी तरह, वे यह कभी भी स्पष्ट नहीं कर सकते है कि पंखों वाले कीड़े पहले कैसे उड़ने लगे, हालाँकि उनका कहना है कि उन्हें पकड़ने के लिए डायनोसोर ने पंखों का विकास किया और उड़ने लगे। वे पूरा सवाल ही भूल जाना पसंद करते हैं, और चाहते हैं कि दूसरे भी ऐसा ही करें।

लेकिन पत्थर को आकार देना और उकेरना आसान काम नहीं है। एक पत्थर को दूसरे से घिसकर औज़ार को एकदम सही नियमित और रेज़र धार देना असंभव है, जैसी की हम तक पहुँचे अवशेषों में मिलती है। ग्रेनाइट, बसाल्ट या डोलेराइट जैसे कठोर पत्थरों को स्टील की फ़ाइलों, लेथ और प्लेन का प्रयोग करके ही आकार देना संभव है, वरना वे टूट जाएँगे। इसी तरह यह भी स्वाभाविक है कि दसियों हज़ार साल पहले के कंगन, बालियाँ और कंठहार पत्थरों के औज़ारों का प्रयोग करके नहीं गढ़े गए होंगे। इन चीज़ों में छोटे-छोटे छेद पत्थरों से नहीं बनाए जा सकते। उन्हें खुरचने से नहीं सजाया जा सकता। इन चीज़ों की पूर्णता दर्शाती है कि कठोर धातु से बनाए गए अन्य औज़ारों का प्रयोग किया गया होगा।

अनेक पुरातत्व वैज्ञानिकों और वैज्ञानिकों ने परीक्षण करके यह देखने की कोशिश की है कि क्या इन प्राचीन कला-कृतियों की रचना उन स्थितियों में हो सकती है, जो कि विकासवादी बताते हैं। उदाहरण के लिए, प्रोफ़ेसर क्लौज़ शिमित टर्की में गौबेक्लि टेपे के पत्थरों के खंडों की नक्काशी पर ऐसा ही प्रयोग किया था, जिनके बारे में अनुमान है कि वे लगभग 11,000 साल पुराने हैं। उन्होंने शिल्पकारों को वैसे औज़ार दिए जैसे कि विकासवादियों का दावा था कि उस समय प्रयोग में लाए गए होंगे, और उनसे कहा कि समान चट्टानों पर वैसी ही नक्काशी करें। लगातार दो घंटों के काम के बाद, सभी शिल्पकार जो काम कर पाए वह बहुत अस्पष्ट था।

आप इसी तरह का प्रयोग अपने घर पर भी कर सकते हैं। ग्रेनाइट जैसा कठोर पत्थर का टुकड़ा लें और उसे तीर के वैसे सिर में बदलने की कोशिश करें जो कि 100,000 साल पहले रहने वाले लोग प्रयोग करते थे। लेकिन आप ग्रेनाइट के टुकड़े और पत्थर के अलावा कुछ और इस्तेमाल नहीं कर सकते। आपके ख्याल से आप इसमें कितने सफल हो सकेंगे? क्या आप वैसी ही वस्तु बना सकेंगे जिसमें वैसी ही बारीक नोक, एकसारता, चिकनापन और पॉलिश हो, जो कि ऐतिहासिक चीज़ों में मिली है? आइए इससे भी आगे जाएँ; ग्रेनाइट का एक मीटर वर्ग का टुकड़ा लें, और उस पर पशु का चित्र बनाए जिसमें गहराई का भाव पैदा हो। उस चट्टान को एक अन्य कठोर पत्थर के टुकड़े से घिसकर आपको क्या

नतीज़े मिल सकेंगे? साफ़ तौर से, स्टील और लोहे से बने औज़ारों के बिना न तो आप सरल सा तीर का सिरा बना सकते हैं, और आपकी पत्थर की नक्काशी भी बहुत कम असरदार होगी।

पत्थर को काटना और पत्थर पर नक्काशी अपने आप में विशेषज्ञता के क्षेत्र हैं। फ़ाइलें, लेथ और अन्य औज़ार बनाने के लिए ज़रूरी प्रौद्योगिकी आवश्यक है। इससे यह प्रदर्शित होता है कि जिस समय ये चीज़ें बनाई गई थीं, "प्राचीन" प्रौद्योगिकी बहुत विकसित थी। दूसरे शब्दों में, विकासवादियों का ये दावे मिथ हैं कि केवल सरल पत्थर के उपकरण ही ज्ञात थे, और कि कोई प्रौद्योगिकी अस्तित्व में नहीं थी। इस तरह की "केवल पत्थर" युग कभी अस्तित्व में था ही नहीं।

तथापि, इस बात पर पूरी तरह से विश्वास किया जा सकता है कि पत्थरों को काटने और आकार देने के लिए इस्तेमाल किए गए स्टील और लोहे के औज़ार आज के समय तक बचे नहीं रह सके। प्राकृतिक रूप से नमी और अम्ल के वातावरण में, सभी तरह की धातुओं के औज़ारों में जंग लग जाता है और फिर वे क्रमशः गायब हो जाते हैं। बस उन पत्थरों की चिप और टुकड़े ही बचे रहेंगे, जिनके साथ उन्होंने काम किया था, क्योंकि उनके गायब होने में बहुत समय लगता है। लेकिन इन टुकड़ों की परीक्षा करने और यह सुझाने कि उस समय के लोगों ने केवल पत्थर का ही प्रयोग किया था, वैज्ञानिक तर्क नहीं हैं।

निश्चित रूप से, अब अनेक विकासवादी यह स्वीकार करते हैं कि पुरातात्विक निष्कर्ष डार्विनवाद का एकदम समर्थन नहीं करते। विकासवादी पुरातत्व वैज्ञानिक रिचर्ड लीके ने माना है कि विकास के सिद्धांत के संदर्भ में पुरातात्विक निष्कर्षों, ख़ास तौर से पत्थर के औज़ारों का हिसाब देना असंभव है।

दरअसल, पुरातत्व संबंधी रिकार्डों में डार्विनवादी प्राक्कल्पनों की अनुपयुक्तता के ठोस सबूत मिल जाते हैं। यदि डार्विनवादी पैकेज सही थे, तो हमें बाइपेडेलिटि, प्रौद्योगिकी, और दिमाग के बढ़े हुए आकार के सबूत पुरातत्व संबंधी और जीवाश्म के रिकार्डों में एक साथ मिलने चाहिए थे। ये हमें नहीं मिलते। पूर्व ऐतिहासिक रिकार्ड का एक पहलू ही इस प्राक्कल्पना को ग़लत साबित करने के लिए काफ़ी हैः पत्थर के औज़ारों का रिकार्ड। [1]

काल्पनिक विकासवादी कालक्रम

इतिहास का वर्गीकरण करते समय, विकासवादी वस्तुओं की व्याख्या अपने रूढ़ सिद्धांतों के अनुसार ही करते हैं। जिस काल के दौरान कांसे की कला-कृतियों की रचना हुई थी, उसे वे कांस्य युग कहते हैं, और सुझाव देते हैं कि लोहे का प्रयोग बहुत हाल ही में शुरू हुआ था – यह उनके इस दावे पर आधारित है कि ज़्यादातर प्राचनी सभ्यताओं को धातुओं की जानकारी नहीं थी।

जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है कि लोहे, स्टील और अन्य अनेक धातुओं पर जल्दी ही जंग लग जाता है और वे पत्थर की तुलना में बहुत जल्द नष्ट हो जाती हैं। कांसे जैसी कुछ धातुएँ जिन पर मुश्किल से जंग लगता है, अन्य धातुओं की तुलना में अधिक लंबे समय तक बची रह सकती हैं। इसलिए यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि खुदाई से निकली कांसे से बनी चीज़ें ज़्यादा पुरानी होंगी और लोहे से बनी चीज़ें हाल के समय की होंगी।

इसके अलावा, यह कहना भी तार्किक नहीं है कि जो समाज कांसा बनाता था, वह लोहे के बारे में नहीं जानता था, और यह कि जिस समाज को कांसा बनाने की तकनीकी जानकारी थी उसने दूसरी धातुओं का इस्तेमाल नहीं किया होगा।

कांसा को बनाने के लिए तांबे में टिन, आर्सेनिक और एंटिमोनी के साथ थोड़ी मात्रा में जस्ता मिलाया जाता है। जो कोई भी कांसा बनाता है, उसे तांबे, टिन, आर्सेनिक, जस्ते और एंटिमोनी जैसे रासायनिक तत्वों की कामकाजी जानकारी ज़रूर होनी चाहिए, और जानना चाहिए कि इन्हें किस तापमान पर गलाना है, और उसके पास भट्टी होनी चाहिए जिसमें इन्हें गलाकर मिलाया जा सके। इस सब जानकारी के बिना, ऐसी सफल मिश्रधातु का बनाना कठिन है।

शुरू नें, कच्ची तांबा धातु पुरानी, कठोर चट्टानों में पाउडर या क्रिस्टल के रूप में मिला है (जिसे "देशीय तांबा" भी कहा जाता है) जो समाज तांबे का प्रयोग करता है, पहले तो उसे तांबे को इन चट्टानों में पाउडर के रूप में पहचानने की जानकारी होनी चाहिए। इसके बाद उसे तांबा खोदने, उसे हटाने और ऊपर ज़मीन पर ले जाने के लिए खान बनानी होगी। यह साफ़ है कि ये सब काम पत्थर और लकड़ी के औज़ारों का प्रयोग करके नहीं किए जा सकते।

तांबे की कच्ची धातु को पिघलाने के लिए इसे लाल गरम लपट पर रखा जाना चाहिए। तांबे को पिघलाने और शुद्ध करने के लिए ज़रूरी तापमान 1,084.5°C (1,984°F) है। ऐसे उपकरण या फुँकनी की ज़रूरत भी थी, जो आग में सम गति पर हवा फूँक सके, जिससे कि वह समान स्तर पर रहे। तांबे के साथ काम करने वाले समाज को ऐसा उच्च ताप पैदा करने के लिए भट्टी ज़रूर बनानी होगी और आग में इस्तेमाल के लिए कढ़ाई और पकड़ बनाने होंगे।

तांबे के साथ काम करने के लिए ज़रूरी तकनीकी ढाँचे का यह संक्षिप्त सार है – जो अपने आप में ऐसी कोमल धातु हो जो लंबे समय तक धारदार नहीं बनी रह सकती। टिन, जस्ता और अन्य तत्वों को मिलाकर कड़ा कांसा बनाना और भी परिष्कृत है, क्योंकि हर धातु को अलग-अलग प्रक्रिया की ज़रूरत होगी। ये सब तथ्य दिखाते हैं कि जो समुदायों खनन में लगे थे, मिश्र धातुएँ बना रहे थे और धातुओं के साथ काम कर रहे थे, उनके पास विस्तृत जानकारी ज़रूर रही होगी। यह दावा न तो तार्किक है और न ही स्थायी है कि ऐसी समग्र जानकारी रखने वाले लोगों ने कभी भी लोहे की खोज नहीं की होगी।

इसके विपरीत, पुरातात्विक खोजें दिखाती हैं कि विकासवादियों का यह दावा कि बहुत प्राचीन समाज को धातु की जानकारी नहीं थी, ग़लत है। इन सबूतों में ऐसी खोजें शामिल हैं - 100,000-साल पुराने धातु के बर्तनों के अवशेष, 2.8-साल पुराने धातु के तीर, एक लोहे का पात्र जिसके 30 करोड़ साल पुराना होने का अंदाज़ा है, मिट्टी पर कपड़े के टुकड़े जो 27,000 साल पुराने हैं, और मैगनिसियम और प्लैटिनम के हज़ारों साल पहले के निशान, जिसे यूरोप में केवल कुछ सौ साल पहले ही सफलतापूर्वक पिघलाया जा सका है। ये बिखरे हुए अवशेष, खुरदरे पत्थर युग, पॉलिश पत्थर युग, कांस्य और लौह युग जैसे विभाजन को पूरी तरह से नष्ट कर देते हैं। लेकिन अनेक वैज्ञानिक प्रकाशनों में प्रकट होने वाली इन खोजों के बड़े भागों को विकासवादी वैज्ञानिकों ने या तो नज़रअंदाज़ कर दिया या संग्रहालयों के तहखानों में छिपा दिया। सच्चे तथ्यों के स्थान पर, शानदार विकासवादी कहानियों को मानव के इतिहास के रूप में पेश किया गया।

**विश्वास करने वालों ने सभ्यता को समूचे इतिहास में जीवित रखा है**

इतिहास के पूरे चक्र में, भगवान ने लोगों को सच्चे रास्ते पर लाने के लिए अपने दूत भेजे हैं। कुछ लोगों ने इन दूतों के आदेश माने हैं और भगवान के अस्तित्व और एकत्व में विश्वास किया है, जबकि अन्य लोग लगाता इससे इंकार करते रहे हैं। मानव जब पहली बार अस्तित्व में आया, तो उसने एक और एकमात्र भगवान में विश्वास करना, और हमारे भगवान के रहस्य के खुलासे के द्वारा सच्चे धर्म

के नैतिक मूल्यों सीखा। इसलिए, विकासवादियों का यह दावा ग़लत है कि प्रारंभ के समाज एक और एकमात्र भगवान में विश्वास नहीं रखते थे। (इस विषय पर इस किताब में आगे और ब्यौरा दिया जाएगा।)

कुरान में यह खुलासा किया गया है कि कैसे, इतिहास के सभी कालों में, भगवान ने दूत भेजकर लोगों का आह्वान किया कि धार्मिक नैतिक मूल्यों पर भरोसा करें और उन पर अमल करें:

मानवीयता एकल समुदाय था। फिर भगवान ने अच्छी ख़बर लाने और चेतावनी देने के लिए फ़रिश्ते भेजे, और उनके साथ उसने सच्चाई की किताब भेजी जिससे कि लोग अपने फ़र्क़ के बारे में तय कर सकें। केवल नहीं जिन्हें यह दी गई, एक दूसरे से जलन रखते हुए अपने तक स्पष्ट संकेत आने तक इसके बारे में फ़र्क़ करते रहे। फिर, उसकी अनुमति से, भगवान ने उनके फ़र्क़ के बारे में उनका निर्देशन किया जो सच्चाई में भरोसा रखते थे। भगवान हर उस व्यक्ति को मार्गदर्शन करता है, जिसे चाहता है। (सूरत अल-बकरा: 213)

अन्य छंद खुलासा करता है कि हर समाज के सदस्यों को चेतावनी देने, भगवान के अस्तित्व और एकत्व की याद दिलाने, और धार्मिक गुणों का पालन करने के लिए उनका आह्वान करने के लिए, अपने दूत भेजता है:

... ऐसा कोई समुदाय नहीं है जिसमें चेताने वाले नहीं आए। (सुरह फ़ातिर: 24)

हालाँकि हमारे भगवान ने लोगों के पास दूत और पवित्र किताबें भेजीं, लेकिन कुछ लोग ग़लतफ़हमी में डूब गए, उन्होंने सच्चे धर्म के गुणों की ओर पीठ कर ली और असामान्य अंधविश्वास अपना लिए। कुछ लोगों ने अधार्मिक विश्वास बना लिए और धरती, पत्थर, लकड़ी, चाँद या सूरज, और यहाँ तक कि तथाकथित शैतान आत्माओं की पूजा करने की उलटी रीति अपना ली। आज भी, सच्चे धर्म को मानने वालों के साथ-साथ, ऐसे लोग भी हैं जो आग, चाँद, सूरज या लकड़ी से बनी मूर्तियों की पूजा करते हैं। कुछ लोग हमारे भगवान के साझेदारों का वर्णन करते हैं, हालाँकि वे उसके अस्तित्व और विशिष्टता के बारे में पूरी तरह से जानते हैं। फिर भी हमारे भगवान ने उनके पास दूत भेजे हैं, उन्हें वे ग़लतियाँ बताई हैं, जिनमें वे फँस गए हैं, और उनका अंधविश्वासों का त्याग करके सच्चे धर्म के अनुसार जीवन बिताने का आह्वान किया है। और इतिहास के सभी कालों में, आस्तिक और नास्तिक रहे हैं, वे जिनके दिल में शुद्ध भरोसा रहता है और वे जो उलटे रास्ते पर नीचे चले गए हैं।

समूचे इतिहास में, फ़रिश्तों के साथ रहने वाले आस्तिक लोगों ने बहुत सभ्य स्थितियों में उच्च-गुणवत्ता के जीवन का आनंद लिया है। वे नोआह, अब्राहम, जोसेफ़, मोसेस और सोलोमन (उन सबको शांति मिले) जैसे फ़रिश्तों के दिनों में परिष्कृत सामाजिक व्यवस्था के भीतर रहे हैं, जैसे कि वे आज रहते हैं। सभी युगों में, आस्तिकों ने पूजा की है, व्रत रखे हैं, भगवान द्वारा बनाई गई सीमाओं का पालन किया है, और साफ़ और नियमों का जीवन जिया है। पुरातात्विक खोज उन लोगों के सर्वोत्तम, सबसे भले और साफ़ मानकों के जीवन का खुलासा किया है जो भगवान पर पवित्र विश्वास रखते थे। फ़रिश्तों और सच्चे आस्तिकों ने अपने समय में उपलब्ध उसकी रज़ामंदी के उपयुक्त तरीकों से बेहतरीन उपायों का इस्तेमाल किया है।

निमरुद के समय में फ़रिश्ते अब्राहम ने (अ.) और उन्होंने जो उनमें भरोसा करते थे, सभी प्रौद्योगिकी संबंधी तरक्की का सबसे बेहतर तरीके से प्रयोग किया। फ़रोह के समय की तकनीकी जानकारी का इस्तेमाल फ़रिश्ते जोसफ़, मोसेस, आरोन (उन सबको शांति मिले) और उस समय के सच्चे भरोसा

रखने वालों ने किया। फ़रिश्ते सोलोमन (अ.) के समय में भवन-निर्माण, कला और संचार के क्षेत्रों में हासिल की गई उच्चतम स्तर की प्रौद्योगिकी की उपलब्धि का सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण तरीके से नियोजन किया गया। हमारे भगवान ने फ़रिश्ते सोलोमन (अ.) पर संपत्ति और शान का जो आशीर्वाद बरसाया था, उसने पीढ़ियों को आतंकित किए रखा।

हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि सैंकड़ों हज़ारों साल पहले के लोगों, और आज रहने वाले लोगों के पास जो सूचना और तरीके हैं, वे सब भगवान का आशीर्वाद हैं। जिन लोगों ने सैंकड़ों हज़ारों साल पहले सभ्यता की नींव रखी, जिन्होंने दसियों हज़ारों साल पहले गुफाओं में सुंदर पेंटिंग बनाईं, जिन्होंने पिरामिड और जिगुरात बनाए, जिन्होंने पत्थर के विशाल स्मारकों का निर्माण किया, और जिन्होंने पेरू की उच्चतम ऊँचाई पर महान संरचनाएँ बनाईं, उन्होंने वह सब भगवान की प्रेरणा और शिक्षा से किया। जो लोग आज उप-आण्विक कणों का अध्ययन करते हैं, जो अंतरिक्ष में शटल भेजते हैं और जो कंप्यूटर सॉफ़्टवेयर लिखते हैं, वे ऐसा इसलिए कर पाते हैं कि ईश्वर की ऐसी इच्छा है। मानव की रचना के समय से उसके पास जो भी जानकारी रही है वह भगवान के आशीर्वाद से रही है, और जिस भी सभ्यता की उसने स्थापना की है वह भी उसी तरह से हमारे भगवान का काम रहा है।

भगवान ने आदमी को कुछ नहीं से बनाया और उसके पूरे जीवन में वह उसे विभिन्न परीक्षण और आशीर्वाद देता रहता है। हर दिया जाने वाला आशीर्वाद भी परीक्षण ही है। जो लोग यह जानते हैं कि जो सभ्यता, प्रौद्योगिकी और उपाय उनके पास हैं, वे सब दरअसल भगवान का आशीर्वाद हैं, वे भगवान को धन्यवाद देते हैं, जो उन पर अपना आशीर्वाद और बढ़ा देता हैः

और जब हमारे भगवान ने घोषणा कीः "यदि आप एहसानमंद होंगे, तो मैं निश्चित रूप से आपको और ज़्यादा दूँगा..." (सुरह इब्राहिमः 7)

भगवान अपने पवित्र सेवकों को इस संसार और यहाँ के बाद दोनों जगह सुखदायक जीवन का आनंद लेने का इंतजाम करता है। इसका कुरान में खुलासा किया गया हैः

जो भी अच्छा काम करता है, चाहे पुरुष हो या महिला, जो भरोसा करता है, हम उसे अच्छा जीवन देंगे और उनके कामों पर सर्वोत्तम तरीके से क्षतिपूर्ति करेंगे। (सुरत अन-नह्लः 97)

इस छंद के प्रकटीकरण के अनुसार, समूचे इतिहास में मुसलिमों के पास उस युग के बेहतरीन साधन थे, जिसमें वे रहे थे, और उन्होंने सुख का जीवन बिताया। स्वाभाविक रूप से, कुछ की कठिनाइयों और परेशानियों से परीक्षा भी ली गई, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि वे मुश्किल, पुरातन दशाओं में रहे और उन्होंने सभ्य, मानवीय जीवन नहीं बिताया। और जिन लोगों ने भगवान से इंकार किया और अपने इंकार में जिद किए रहे, जो उचित नैतिक मूल्यों के साथ नहीं रह पाए और जो धरती पर भ्रष्टाचार ले आए, उनका अंत हमेशा निराशा में हुआ, चाहे वे अपनी सभ्यता में कितने भी धनवान, सुविधापूर्ण और उन्नत रहे हों। इसके अलावा, उनमें से अनेक ने शायद आज के समय के समाज में उपलब्ध प्रौद्योगिकियों से भी उन्नत प्रौद्योगिकियों का आनंद लिया होगा। इसका भी कुरान में खुलासा किया गया हैः

क्या उन्होंने धरती का भ्रमण नहीं किया और अपने से पहले के लोगों का अंत नहीं देखा? उनके मुकाबले उनमें ज़्यादा ताकत थी और उन्होंने उनके मुकाबले में ज़्यादा ज़मीन पर खेती की और उस पर रहे। उनके संदेश भी उनके पास अधिक साफ़ संकेतों में आए। भगवान ने उन्हें कभी भी ग़लत नहीं किया; पर उन्होंने खुद को गलत कर लिया। (सुरत अर-रमः 9)

**सांस्कृतिक संग्रह किसी विकासपरक प्रक्रिया का कोई उदाहरण नहीं है**

विकासवादियों का मानना है कि पहले मानव आधे बंदर प्राणि थे जिनकी दिमागी और शारीरिक विशेषताएँ समय के अनुसार विकसित हुईं, उन्होंने नई योग्यताएँ हासिल कीं, और इस कारण से सभ्यता का विकास हुआ। इस दावे के अनुसार, जो किसी भी वैज्ञानिक सबूत पर आधारित नहीं है, हमारे प्राचीन पूर्वजों ने पशुओं का सा जीवन बिताया, मानव बनने पर ही वे सभ्य बने, और अपनी मानसिक क्षमताओं के विकास होने के साथ ही उनमें सांस्कृतिक प्रगति हुई। प्राचीन मानव की काल्पनिक छवि, जिसमें शरीर पूरी तरह से फ़र से ढँका हुआ है, या जानवर की खाल लपेटे वह झुका हुआ आग जलाने की कोशिश कर रहा है, या कंधे पर ताज़ा मारे हुए जानवर को लादे पानी के पास चलता हुआ, या अपने साथियों के साथ इशारों और गुर्राहट से संप्रेषण की कोशिश करता हुआ, इस अवैज्ञानिक दावे के आधार पर झूठी पुनः रचनाएँ हैं।

जीवाश्म का रिकार्ड इस फंतासी का समर्थन नहीं करता। सभी वैज्ञानिक खोजें इस निष्कर्ष की ओर संकेत करती हैं कि आदमी को कुछ नहीं से, आदमी के रूप में बनाया गया था, और जिस दिन से उसे बनाया गया है उसी दिन से वह मानव का जीवन बिता रहा है। पुरातात्विक खोजें विकासवादियों के कालक्रम का इस तरह से समर्थन नहीं करतीं। उस समय की खोजें, जब विकासवादियों का दावा है कि आदमी बस बोलना सीखा था, दिखाती हैं कि मानव के पास रसोई थी और वह पारिवारिक जीवन का आनंद लेता था। उस समय की खुदाई में सजावटी चीज़ें और पेंट करने की कच्ची सामग्री मिली है, जब विकासवादियों का कहना है कि मानव कला से अनभिज्ञ था। इस किताब के बाद के अध्यायों में विस्तार से अनेक उदाहरणों पर विचार किया जाएगा।

ये सब खोजें खुलासा करती हैं कि मानव ने कभी भी पशु जैसा प्राचीन जीवन नहीं बिताया। असभ्य युग कभी नहीं रहा जब सभी लोग पत्थर और लकड़ी के उपकरणों का प्रयोग करते थे। भरोसा करने वालों ने हमेशा मानव की जीवन शैली जी है और कपड़ों, प्लेटों, कटोरों, चम्मचों और काँटों का उसी तरह से इस्तेमाल किया है जैसे कि मानव को करना चाहिए। लोग हमेशा उन्हीं स्थितियों में रहे हैं, बोले हैं, भवन बनाए हैं और कलाकृतियों की रचना की है, जो मानवों के उपयुक्त है। स्थापित सामाजिक व्यवस्थाओं में डॉक्टर, अध्यापक, दर्ज़ी, इंजीनियर, वास्तुकार और कलाकार रहे हैं। भगवान की प्रेरणा से, लोगों के पास कारण रहा है और अच्छी चेतना ने हमेशा धरती पर आशीर्वाद का बेहतरीन प्रयोग किया है।

निश्चित रूप से, जैसे-जैसे प्रौद्योगिकी का विकास हुआ है और लोगों ने ज्ञान इकट्ठा किया है, स्वाभाविक रूप से प्रौद्योगिकी संबंधी बदलाव भी हुए हैं। तत्कालीन स्थितियों के अनुसार नए उपकरणों का विकास हुआ है, वैज्ञानिक खोज हुई हैं, और सांस्कृतिक बदलाव आए हैं। तथापि, इतिहास के अनुसार ज्ञान के इकट्ठा होने और प्रौद्योगिकी संबंधी प्रगति से यह अर्थ नहीं निकलता कि कोई विकास हुआ है।

ज्ञान का इकट्ठे होते रहना पूरी तरह से स्वाभाविक है। प्राथमिक स्कूल में, अपने उच्च स्कूल के सालों में और विश्वविद्यालय में व्यक्ति विभिन्न स्तर की शिक्षा का आनंद लेता है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन भर ज्ञान को लगातार इकट्ठा करता है, तो इसका यह मतलब नहीं है कि वह अनियमित प्रभावों के माध्यम से लगातार विकास और तरक्की कर रहा है। समाज के जीवन पर भी समान गतिशीलता लागू होती है। समाज की ज़रूरतों के अनुसार नई खोजें भी होती हैं, नई प्रणालियों का आविष्कार होता है और उनका बाद की पीढ़ियों द्वारा सुधार किया जाता है। लेकिन यह विकास कि प्रक्रिया नहीं है।

**सभ्यताएँ उलटती हैं और साथ ही प्रगति करती हैं**

डार्विनवाद का मानना है कि आदमी – और इसलिए उसकी संस्कृति – आधारभूत, आदि, जनजातीय चरणों से सभ्यता की ओर गति करती है। तथापि, पुरातात्विक खोजें दिखाती हैं कि मानव इतिहास के पहले दिन से ही, समाज में वह समय रहा है, जिसमें बहुत उन्नत संसिकृतियाँ रही हैं, लेकिन दूसरी संस्कृतियाँ पिछड़ी हुई रही हैं। निश्चित रूप से, अधिकतर समय में बहु धनवान और साथ ही पिछड़ी हुई सभ्यताएँ रही हैं। इतिहास के पूर समय में, एक समय के अधिकतर समाजों में प्रौद्योगिकी और सभ्यता के बहुत अलग-अलग स्तर रहे हैं जिसमें बहुत ही सामाजिक और सांस्कृतिक अंतर रहे हैं – जैसा कि आज भी है। उदाहरण के लिए, हालाँकि आज उत्तरी अमेरिकी महाद्वीप दवाई, विज्ञान, निर्माण कला और प्रौद्योगिकी के मामले में बहुत उन्नत है, लेकिन दक्षिण अमेरिका में प्रौद्योगिकी की दृष्टि से काफ़ी पिछड़ा हुआ है, जिसका बाहर की दुनिया के साथ कोई संपर्क नहीं है। दुनिया के कुछ भागों में अत्यधिक उन्नत छायांकन तकनीकों और विश्लेषण द्वारा रोगों की पहचान की जाती है, और उनक बहुत आधुनिक अस्पतालों में इलाज किया जाता है। लेकिन दुनिया के अन्य भागों में, ऐसा माना जाता है कि रोग बुरी आत्माओं के असर से पैदा होते हैं, और रोगी को ठीक करने की कोशिशों में ऐसी बुरी आत्माओं को भगाने के समारोह शामिल हैं। ईसा पूर्व 3,000 के आसपास रहने वाले सिंधु, प्राचीन मिस्र और सुमेरियाई जैसे समाजों में, ऐसी संस्कृतियाँ थीं, जो आज के समय की जनजातियों से अतुलनीय रूप से और यहाँ तक की अत्यधिक विकसित समाजों से भी समृद्ध थीं। इसका अर्थ यह है कि इतिहास के सभी कालों में, अत्यधिक उन्नत सभ्यताओं के समाज बहुत पिछड़े हुए समाजों के साथ जीवित रहे हैं। हज़ारों साल पहले विद्यमान कोई समाज वास्तव में 20 वीं शताब्दी के समाज से अधिक विकसित रहा हो सकता है। यद दिखाता है कि विकासवादी प्रक्रिया के भीतर कोई विकास नहीं रहा है – दूसरे शब्दों में, आदिकाल से सभ्यता के काल तक।

इतिहास के समय से, निश्चित रूप से, सभी क्षेत्रों में बड़ी तरक्कियाँ हुई हैं, और विज्ञान और प्रौद्योगिकी में बहुत छलांग और विकास हुए हैं, इसके लिए संस्कृति और अनुभव के इकट्ठा होने को धन्यवाद। तथापि, इन बदलावों को "विकासवादी" प्रक्रिया कहकर वर्णन करना न तो यह तर्कपूर्ण है और न ही वैज्ञानिक, जैसा कि विकासवादी और भौतिकतावादी करते हैं। जैसे कि आज के मानव और हज़ारों साल पहले जीवित रहे मानव की कोई भौतिक विशेषताओं में कोई अंतर नहीं है, इसलिए बुद्धि और क्षमताओं के मामले में भी कोई अंतर नहीं है। यह विचार कि हमारी सभ्यता अधिक उन्नत है, क्योंकि 21 वीं शताब्दी के आदमी के दिमाग की क्षमता और बुद्धि अत्यधिक विकसित है, एक ख़राब दृष्टिकोण है, जो विकासवादी प्रचार के परिणाम स्वरूप आया है। तथ्य यह है कि बहुत अलग-अलग क्षेत्रों के लोगों की आज भिन्न संकल्पनाएँ और संस्कृति हो सकती हैं। लेकिन यदि किसी देशीय ऑस्ट्रेलिया के पास वैसा ही ज्ञान न हो जैसा कि अमेरिका के वैज्ञानिक के पास है, तो इसका यह अर्थ नहीं है कि उसकी बुद्धि या दिमाग काफ़ी विकसित नहीं हो पाया है। हो सकता है कि ऐसे समाजों में पैदा हुए अनेक लोग बिजली के अस्तित्व से परिचित न हों, लेकिन वे फिर भी अत्यधिक बुद्धिमान हो सकते हैं।

इसके अलावा, विभिन्न सदियों में विभिन्न ज़रूरतें पैदा हुई हैं। फ़ैशन के हमारे मानक वैसे ही नहीं हैं, जैसे कि प्राचीन मिस्रियों के थे, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि हमारी संस्कृति उनकी संस्कृति से अधिक विकसित है। जबकि 21 वीं सदी में गगनचुंबी इमारतें सभ्यता की निशानी हैं, मिस्र के काल में सभ्यता के सबूत पिरामिड और फ़ीनिक्स थे।

महत्व उस दृष्टिकोण का है, जिससे तथ्यों की व्याख्या की जाती है। इस पूर्व-धारणा से शुरू करने वाला व्यक्ति कि तथ्य तथाकथित विकासपरक विकास का समर्थन करते हैं, अपने द्वारा प्राप्त सभी जानकारी को इसी पूर्वग्रह की रोशनी में मूल्यांकन करेंगे। इसलिए वह अपनी धारणाओं का काल्पनिक कहानियों से समर्थन करने की कोशिश करेगा। जीवाश्म हड्डियों के टुकड़ों के आधार पर, वह अनेक विवरणों का अनुमान लगाएगा जैसे उस क्षेत्र में रहने वाले लोग अपना रोज़मर्रा का जीवन कैसे बिताते थे, उनके पारिवारिक जीवन की संरचना और उनके सामाजिक संबंध, जो उसकी पूर्व धारणा के अनुकूल होंगे। हड्डियों के उन टुकड़ों के आधार पर वह निष्कर्ष निकालेगा कि उनसे संबंधित जीवित लोग केवल आधे सीधे थे और गुर्राते थे, वे बालों से ढँके हुए थे और पत्थर के औज़ारों का प्रयोग करते थे – इसलिए नहीं कि वैज्ञानिक सबूत ऐसा सुझाते हैं, बल्कि उसकी विचारधारा की यही ज़रूरत है। वास्तव में, जो तथ्य मिलते हैं वे ऐसे दृश्य बिल्कुल नहीं उभरता। यह काल्पनिक तस्वीर डार्विनवादी मानसिक की व्याख्या के द्वारा सामने आती है।

फ़िलहाल, जो पुरातत्व वैज्ञानिक जीवाश्म के अवशेषों, गुफाओं की दीवारों पर नक्काशी के पत्थर या पेंटिंग, के आधार पर इस समय के बारे में विस्तृत व्याख्या करते हैं, ऊपर के उदाहरणों से बहुत कम भिन्न हैं। लेकिन फिर भी विकासवादी अभी भी तथाकथित आदि मानव के जीवन के सभी पहलुओं के बारे में सबूतों के पूर्वग्रह-पूर्ण विश्लेषण के आधार पर लिख रहे हैं। उनके काल्पनिक विवरण और चित्रण अभी भी अनेक पत्रिकाओं और अख़बारों के पेजों को सजाते हैं।

यह एक परिदृश्य में से एक है जिसकी रचना तथाकथित आदि मानव के रोज़मर्रा के जीवन पर लुइस लीके ने की है, जो समसामयिक विकासवादियों में सर्वाधिक प्रसिद्ध से एक हैं।

आइए एक पल के लिए हम कल्पना करें कि हम लगभग बीस या तीस हज़ार साल पहले चट्टान के आश्रय में होने वाली घटनाओं को वहाँ खड़े होकर देख रहे हैं।

पाषाण युग का शिकारी शिकार की तलाश में घाटी में टहल रहा है कि तभी वह अपने ऊपर बाहर निकली चट्टान के एक ओर चट्टान का आश्रय देखता है। सावधानीपूर्वक, और पूरे ध्यान से वह ऊपर चढ़ता है, और उसे डर है कि शायद वहाँ उसे पत्थर युग के परिवार के कुछ सदस्य कब्जा जमाए मिल सकते हैं, या शायद यह शेर या गुफ़ा भालू का घर हो। आखिरकार वह काफ़ी नजदीक चला जाता है, और वह देखता है कि वहाँ कोई नहीं है, इसलिए वह भीतर चला जाता है और अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करता है। वह तय करता है कि वह आवास उस छोटे आश्रय की तुलना में अधिक उपयुक्त है, जहाँ वह और उसका परिवार फिलहाल रह रहा है, और वह उन्हें लाने के लिए चला जाता है।

फिर हम परिवार को आते हुए और नए घर में व्यवस्थित होते हुए देखते हैं। या तो पुराने घर से सावधानीपूर्वक लाए गए और संभाली गए अंगारों से या सरल, लकड़ी की आग की मशक्कत से आग जलाई जाती है। (हम पत्थर युग के आदमी द्वारा आग प्राप्त करने के तरीके के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकते, लेकिन हम यह ज़रूर जानते हैं कि बहुत पुराने समय से ही वह आग का प्रयोग करता था, क्योंकि अलाव गुफा और पत्थर के घरों में किसी भी पेशे के स्तर से लगभग एक आम चीज़ है।)

इसके बाद संभवतः परिवार के कुछ सदस्य घास या झाड़ियाँ इकट्ठा करने के लिए चले जाते हैं, जिससे कि खुरदुरे बिस्तर तैयार किए जा सकें, जिस पर वे सोएँगे, जबकि अन्य लोग पास के जंगल से शाखाएँ और झाड़ियाँ तोड़ने के लिए चले गए जिससे कि आश्रय के सामने कठोर दीवार बनाई जा

सके। इसके बाद विभिन्न जानवरों की खाल खोली जाती है और अन्य घरेलू चीज़ों के साथ नए घर में जमा कर ली जाती है।

और अब परिवार पूरी तरह से व्यवस्थित हो चुका है और उनके रोज़मर्रा के काम एक बार फिर चालू हो जाते हैं। आदमी भोजन के लिए जानवरों का शिकार करते हैं और उन्हें पकड़ते हैं, और महिलाएँ शायद इसमें मदद करती हैं और साथ ही खाने योग्य फल और गिरि या जड़े इकट्ठा करती हैं। [2]

अपने सारे बारीक विवरण के साथ यह वर्णन किसी भी तरह की वैज्ञानिक खोज पर नहीं, बल्कि मात्र इसके लेखक की कल्पना पर आधारित है। इस तरह की समान कहानियों को विभिन्न वैज्ञानिक शब्दों का जामा पहनाने वाले विकासवादी, अपने सभी विवरण को हड्डियों के कुछ टुकड़ों के आधार पर तैयार करते हैं। (वास्तव में, ये जीवाश्म प्रदर्शित करते हैं कि कभी भी विकासपरक प्रक्रिया नहीं हुई – एकदम विपरीत जो कि विकासवादी दावा करते हैं!) स्वभावतः, हड्डियों के टुकड़े कोई निश्चित सूचना प्रदान नहीं कर सकते कि बहुत प्राचीन काल में लोगों को कौन सी भावनाएँ उद्वेलित करती थीं, उनका रोज़मर्रा का जीवन कैसा था, या वे अपने बीच काम का बँटवारा कैसे करते थे।

तथापि, मानव विकास की कहानी ऐसे अनगिनत परिदृश्यों और कल्पनाओं से समृद्ध है, और विकासवादी इनका विस्तृत प्रयोग करते हैं। खुद को विकासवाद की शुरुआत से, इस सिद्धांत से मुक्त करने में असफल करने के कारण उन्होंने उपर्युक्त परिदृश्य के भिन्न-भिन्न संस्करण पेश किए हैं। लेकिन उनका उद्देश्य स्थिति को स्पष्ट करना नहीं है, अपितु सिद्धांतों और प्रचार को हवा देना है, जिससे कि लोगों को विश्वास दिलाया जा सकते कि आदि मानव कभी वास्तव में था।

अनेक विकासवादी ऐसे परिदृश्य पेश करके अपने दावों को साबित करना चाहते हैं, चाहे समर्थन में कोई सबूत न भी हों। लेकिन हर नई खोज की जब पक्षपातपूर्ण तरीके से व्याख्या की जाती है, तो वे बहुत साफ़ तरीके से उनके सामने कुछ तथ्यों का खुलासा करती है, जिनमें से एक हैः आदमी अपने अस्तित्व के पहले दिन से ही आदमी था। बुद्धि और कलात्मक योग्यता जैसे गुण इतिहास के सभी कालों में समान थे। पिछले समय में रहने वाले लोग आदिमानव, आधे आदमी आधे जानवर नहीं थे, जैसा कि विकासवादी चाहते हैं कि हम विश्वास करें। वे हमारी तरह ही सोचने वाले, बोलने वाले मानव थे, जिन्होंने कला के कार्य पेश किए और संस्कृति और नैतिक संरचनाएँ विकसित कीं। जैसा कि हम शीघ्र ही देखेंगे, पुरातात्त्विक और पुराजीवन शास्त्र की खोजें इसे साफ़ तौर से और बिना शंका के साबित करती हैं।

**हमारी अपनी सभ्यता से क्या बचा रहेगा**?

कल्पना करें कि आज की महान सभ्यताओं से आने वाले सैंकड़ों हज़ारों साल बाद क्या बचा रहेगा। हमारी सारी सांस्कृतिक संपदा – पेंटिंग, मूर्तियाँ और महल – सब गायब हो जाएँगे, और हमारी वर्तमान प्रौद्योगिकी का लेश मात्र ही बचा रह सकेगा। टूट-फूट को रोकने के लिए डिज़ाइन की गई अनेक सामग्रियाँ धीरे-धीरे, प्राकृतिक स्थितियों में, नष्ट होने लगेंगी। स्टील में जंग लगता है। कंकरीट नष्ट होता है। ज़मीन के नीचे की सुविधाएँ ढह जाती हैं, और सभी सामग्रियों को रखरखाव की ज़रूरत होती है। अब कल्पना करें कि दसियों हज़ार साल बीत गए हैं, और इस बीच हज़ारों गैलन बारिश हुई है, अनके सदियों की तेज़ हवाएँ चली हैं, बार-बार बाढ़ आई और भूकंप आए हैं। संभवतः जो बचा रहेगा वे होंगे नक्काशी के बड़े पत्थर, खुदाई के खंड जिनसे भवन बनते हैं और विभिन्न मूर्तियों के अवशेष, जैसे की पुराने समय से हमारे पास आया है। या हो सकता है कि हमारी विकसित सभ्यता को कोई निश्चित निशान न बचे, जिसके आधार पर हमारे रोज़मर्रा के जीवन को पूरी तरह से समझा जा सके,

केवल अफ़्रीका, ऑस्ट्रेलिया या दुनिया के कुछ अन्य स्थानों जनजातियों के निशान बचें। दूसरे शब्दों में, हमारे पास जो प्रौद्योगिकी है (टेलीविज़न, कंप्यूटर, माइक्रोवेव ओवनों, आदि) को कुछ भी निशान न बचे और केवल भवन की मुख्य रूपरेखा या मूर्तियों के कुछ टुकड़े ही शायद बचे रहें। भविष्य में, वैज्ञानिक इन बिखरे हुए अवशेषों को देखेंगे और हम जिस समय में रह रहे हैं उन सब समाजों का वर्णन "सांस्कृतिक रूप से पिछड़े हुए" के रूप में करेंगे।

या, यदि कोई मैंडारिन में लिखे गए किसी काम को देखेगा और केवल इसी पाठ के आधार पर निष्कर्ष निकालेगा कि चीनी पिछड़े हुई जाति थी, जो अजीब संकेतों के आधार पर संप्रेषण करती थी। औगुस्टे रोडिन की मूर्ति "द थिंकर" के उदाहरण पर गौर करें, जिससे पूरी दुनिया परिचित है। कल्पना करें कि दसियों हज़ार साल बाद पुरातत्व वैज्ञानिक इस मूर्ति की फिर से खोज करते हैं। यदि उन अनुसंधान-कर्ताओं के हमारे समाज के विश्वासों और जीवन-शैली के बारे में अपने खुद के कुछ पूर्वग्रह होंगे, और उनके पास पर्याप्त ऐतिहासिक प्रलेखन की कमी होगी, तो वे इस मूर्ति की अलग-अलग ढंग से व्याख्या कर सकते हैं। वे कल्पना कर सकते हैं कि हमारी सभ्यता के सदस्य सोचते हुए व्यक्ति की पूजा करते थे, या दावा कर सकते हैं कि वह मूर्ति किसी मिथिकीय झूठे देवता का प्रतिनिधित्व करती है।

आज, निश्चित रूप से, हम जानते हैं कि "द थिंकर" कार्य मात्र सुरुचि, कला के कारणों से रचा गया था। दूसरे शब्दों में, यदि दसियों हज़ार साल बाद का अनुसंधानकर्ता के पास काफ़ी जानकारी नहीं है और पुराने समय के बारे में उसके खुद के पूर्वग्रह युक्त विचार हैं, तो उसके लिए सच्चाई पर पहुँचना कठिन होगा, क्योंकि वह "द थिंकर" की व्याख्या अपने पूर्वग्रहों के आधार पर करेगा और कोई उपयुक्त परिदृश्य बना लेगा। इसलिए, अपने पास की सूचना का सभी तरह की पूर्व धारणाओं से बचते हुए, बिना किसी पूर्वग्रह या दुराग्रह के मूल्यांकन करना, और व्यापक दृष्टि से सोचना सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण है। कभी न भूलें कि हमारे पास इस बात के कोई सबूत नहीं हैं कि समाज विकसित होते हैं या पिछले समय में समाज आदिम थे। ये सुझाव मात्र कल्पनाएँ हैं और केवल उन इतिहासकारों के विश्लेषण पर आधारित हैं, जो विकास का समर्थन करते हैं। उदाहरण के लिए, गुफा की दीवार पर जानवर के चित्र का तत्काल गुफा मानव के आदिम चित्र के रूप में वर्णन किया जाता है। फिर भी ये चित्र उस समय के मानव के सौंदर्यबोध की समझ के बारे में बहुत कुछ कहते हैं। सर्वाधिक आधुनिक वस्त्र धारण किए एक कलाकार ने हो सकता है कि उन्हें केवल कला के कारणों से तैयार किया हो। निश्चित रूप से, अनेक वैज्ञानिक अब संभावना पर बल देते हैं कि ये गुफा के चित्र किसी आदिम दिमाग का काम नहीं हो सकते।

तेज धार वाले पत्थरों की "बंदर-मानव" द्वारा निर्मित पहले औज़ारों के रूप में व्याख्या एक अन्य उदाहरण है। हो सकता है कि उस समय के लोगों ने इन पत्थरों को नुकीला किया हो और सजावट के लिए उनका प्रयोग करते हों। इस बात का कोई सबूत नहीं है, केवल अनुमान है कि इन प्राप्त हुए टुकड़ों को इन लोगों ने औज़ारों की तरह निश्चित रूप से प्रयोग किया था। विकासवादी वैज्ञानिक ने खुदाई के दौरान मिले सबूतों की पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण से समीक्षा की है। उन्होंने अपने नज़रिये से कुछ जीवाश्मों के साथ खेल किया है, अपने सिद्धांतों को साबित किया है, और अन्य के सिद्धांतों को नज़रअंदाज़ किया है या यहाँ तक कि खारिज भी किया है। यह दिखाने के लिए भी इसी तरह के खेल खेले गए हैं कि इतिहसा भी विकसित होता है। [3] अमेरिकी नृतत्व शास्त्री मेलेविले हर्स्कोविट्स ने वर्णन किया है कि "इतिहास के विकास" का सिद्धांत कैसे विकसित हुआ और विकासवादी इन सबूतों की व्याख्या कैसे करते हैं:

सांस्कृतिक विकास के हर प्रचारक ने अपनी समझ से प्रगति का प्राकल्पना-परक ब्लूप्रिंट प्रदान किया है, जैसे कि मानव का विकास हुआ होगा, इसलिए गैर-रखीय क्रम के अनेक उदाहरण रिकार्ड हो गए हैं। इनमें से कुछ तरक्की संस्कृति के एकल पहलू तक सीमित रही है... [4]

हर्स्कोविट्स की विचारधारा की पुष्टि के लिए सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण एक अध्ययन है, जो विकासवादी एथनोग्राफ़र लुइस हेनरी मोर्गन ने की थी, जिन्होंने समाज के उन चरणों का अध्ययन किया है, जिनमें से वह पैतृक या मातृक संरचना बनने के लिए गुजरता है, जिसका उनका दावा है कि आदिम से अधिक विकसित की ओर "विकास" हुया है। लेकिन अपना अनुसंधान करते हुए, उन्होंने अपने उदाहरणों के रूप में पूरी दुनिया से विभिन्न समाजों का प्रयोग किया है, जो एक दूसरे से बिल्कुल भी जुड़ी हुई नहीं थीं। इसके बाद उन्होंने उन्हें अपने वांछित परिणाम हासिल करने के लिए क्रमबद्ध किया। यह साफ़ है कि दुनिया की सैंकड़ों हज़ारों संस्कृतियों में से उन्होंने केवल उन्हीं को चुना जो उनके पूर्व-धारणा के प्रबंध से संगत थीं।

हर्स्कोविट्स ने दिखाया है कि अपने विचारों को पुष्टि करने के लिए मोर्गन ने इतिहास की पुनः व्यवस्था कैसे की। बहुत आदिम मातृक ऑस्ट्रेलिया से शुरू करके, उन्होंने एक रेखा बनाई जो पैतृक अमेरिकी भारतीयों तक जाती थी। इसके बाद वे अपनी शृंखला को प्रोटो-ऐतिहासिक काल की ग्रेसियन जनजातियों तक ले गए, जबकि अवरोह निश्चित रूप से पुरुष रेखा में आता थी, लेकिन एक ही व्यक्ति से विवाह की कोई सख्त परंपरा नहीं थी। उनके बढ़ते पैमाने में आज के समाज द्वारा प्रतिनिधित्व इस अंतिम प्रविष्ट ने किया है – पुरुष रेखा में अवरोह और एक व्यक्ति से विवाह की सख्ती।

इस काल्पनिक क्रम पर हर्स्कोविट्स की टिप्पणियाँ:

लेकिन ऐतिहासिक उपागम के दृष्टिकोण से यह शृंखला, काफ़ी काल्पनिक है... 5

**गुफाओं की उन्नत कला**

विकासवादियों का मानना है कि युरोप में लगभग 30-40,000 साल पहले, और अफ़्रीका में इससे भी पहले की अवधि में, तथाकथित बंदर-जैसे मानवों ने आकस्मिक संचरण प्रक्रिया का अनुभव किया, और अचानक उनमें सोचने की योग्यता आ गई और वे चीज़ें उत्पादित करने लगे, जैसे की आज के समय के मानव करते हैं। यह इसलिए है, क्योंकि उस काल की पुरातात्विक खोजें विकासवाद के सिद्धांत के महत्वपूर्ण सबूत देती हैं, जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती। डार्विनवादियों के दावों के अनुसार, पत्थर के उपकरणों की प्रौद्योगिकी, जो लगभग 200,000 सालों से अपरिवर्तित रही है, अचानक ही अधिक उन्नत और तेज़ी से विकसित हो रही हाथ से निर्मित प्रौद्योगिकी में बदल गई। तथाकथित आदि मानव, जो अचानक पेड़ों से निकला था और केवल कुछ समय पहले ही आधुनिक बनना शुरू हुआ था, ने अचानक कलात्मक प्रतिभा का विकास कर लिया और गुफाओं की दीवारों पर असाधारण सौंदर्य वाली और परिष्कृत चित्र उकेरना शुरू कर दिया और उनसे कंठहार और कंगन जैसे अत्यधिक सुंदर सजावटी चीज़ें बनाना शुरू कर दिया।

ऐसा विकास करने के लिए क्या हुआ था? "आधे-बंदर आदिम प्राणि" में ऐसी कलात्मक योग्यता कैसे और क्यों आई? विकासवादी वैज्ञानिकों के पास इसका कोई व्याख्या नहीं है कि यह कैसे हुआ होगा, हालाँकि वे अनेक प्राक्कल्पनाएँ अवश्य प्रस्तावित करते हैं। विकासवादी रोजर लेविन इस विषय पर अपनी पुस्तक ओरिजिन ओर माडर्न ह्युमंस में उन कठिनाइयों का वर्णन करते हैं, जिनका डार्विनवादी

सामना करते हैं: "शायद इसलिए कि अभी तक का अधूरा पुरातत्व संबंधी रिकार्ड अभी तक भी अस्पष्ट है, इसलिए विद्वान इन प्रश्नों का उत्तर बहुत अलग-अलग तरीकों से देते हैं।" [9]

तथापि, पुरातात्त्विक खोज खुलासा करती हैं कि आदमी सांस्कृतिक समझ तब से है जब से वह अस्तित्व में है। समय-समय पर, वह समझ विकसित, उलटी हो गई होगी, या उसमें अटपटे बदलाव आ गए होंगे। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि कोई विकासवादी प्रक्रिया हुई होगी, सिवाय इसके कि सांस्कृतिक विकास और बदलाव हुए थे। जिस कला के कार्य को के प्रकट होने को विकासवादी "आकस्मिक," के रूप में वर्णित करते हैं, वह कोई जीववैज्ञानिक मानव प्रगति को नहीं दर्शाता (ख़ास तौर से बौद्धिक योग्यता के मामले में)। उस समय लोगों को विभिन्न सामाजिक बदलावों का अनुभव हुआ होगा, और उनकी कलात्मक और उत्पादक समझ बदल गई होगी, लेकिन इसस आदिम से आधुनिक में संचरण का कोई सबूत नहीं बनता।

पुराने समय में लोगों द्वारा छोड़े गई पुरातात्त्विक अवशेषों और जीव-संरचना और जैविक अवशेषों के बीच जो विरोध होना चाहिए – विकासवादियों के अनुसार – वह एक बार फिर डार्विनवादियों के इस विषय पर दावों को अमान्य कर देता है। (तथाकथित मानव परिवार वृक्ष के वैज्ञानिक ध्वंस के विस्तृत सबूत के लिए, जिसका डार्विनवादी पुरातनपंथी दावा करते हैं, देखिए डार्विनिज़्म रिफ़्यूटेड, लेखक हारुन याह्या।) विकासवादियों का दावा है कि मानव का सांस्कृतिक विकास उसके जैविक विकास के अनुपात में होना चाहिए। उदाहरण के लिए, मनुष्य को पहले अपने भाव सरल चित्रों के द्वारा प्रकट करने चाहिए, और फिर इसका आगे विकास करना चाहिए जब तक कि उनका क्रमिक विकास कलात्मक उपलब्धि की ऊँचाई पर नहीं पहुँच जाता। तथापि, मानव इतिहास के शुरुआती कलात्मक अवशेष इस अनुमान को ग़लत साबित करते हैं। कला के पहले उदाहरणों के रूप में व्यापक रूप से परिचित गुफा पेंटिंग, नक्काशी और रिलीफ़ साबित करते हैं कि उस युग के मानव के पास बहुत उत्कृष्ट सौंदर्यबोध की समझ थी।

गुफाओं पर शोध करने वाले वैज्ञानिक इन चित्रों को कला के इतिहास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण और मूल्यवान कामों में से एक के रूप में मूल्यांकित करते हैं। इन चित्रों को शेड करना, दृष्टिकोण का प्रयोग और नियोजित की गई बारीक रेखाएँ, रिलीफ़ में विशेषज्ञ के रूप में गहराई के भाव का प्रतिबिंब, और नक्काशी पर सूर्य की किरणों के पड़ने से उभरने वाले सौंदर्यबोध के प्रतिदर्श – वे विशेषताएँ हैं जिन्हें विकासवादी स्पष्ट करने में अक्षम हैं क्योंकि डार्विनवादियों के विचार के अनुसार, ऐसा विकास बहुत बाद में होना चाहिए।

फ़्रांस, स्पेन, इटली, चीन, भारत, अफ़्रीका के भागों और दुनिया के अन्य विभिन्न क्षेत्रों में मिली अनेक गुफा पेंटिंग मानवता की पूर्व सांस्कृतिक संरचना के बारे में महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करती हैं। इन चित्रों में अपनाई गई शैली और रंग की तकनीकें ऐसी गुणवत्ता की हैं कि वे अनुसंधान-कर्ताओं को दंग कर देती हैं। लेकिन फिर भी, डार्विनवादी वैज्ञानिक उनका मूल्यांकर अपने खुद के पूर्वग्रह के द्वारा करते हैं, और इन कार्यों की व्याख्या पक्षपातपूर्ण ढंग से करते हैं जिससे कि वे उनकी विकासवादी परि कथाओं के उपयुक्त हो सकें। उनका दावा है कि उन प्राणियों ने जो अभी-अभी मानव बने हैं, उन जानवरों की तस्वीरें बनाई हैं, जिनसे या तो वे डरते थे या जिनका वे शिकार करते थे, और उन्होंने यह काम गुफाओं की अत्यधिक आदिम स्थितियों में किया जिनमें वे रहते थे। लेकिन इन कार्यों में जो तकनीक अपनाई गई है, वह दिखाती है कि उनके चित्रकारों के पास बहुत गहरी समझ थी, और वे इसे सर्वाधिक प्रभावशाली ढंग से चित्रित करने में सक्षम थे।

इनमें नियोजति पेंटिंग की तकनीक यह भी दिखाती है कि वे आदिम स्थितियों में बिल्कुल भी नहीं रहते थे। इसके अलावा, गुफा की दीवारों पर ये चित्र इस बात का कोई सबूत नहीं है कि उस समय के लोग उन गुफाओं में रहते थे। कलाकार पास के किसी विकसित आश्रय में रहते होंगे, लेकिन उन्होंने गुफा की दीवारों पर अपनी छवियों की रचना करना चुना होगा। प्रस्तुति के लिए उन्हें किन भावों और विचारों ने प्रेरित किया, यह केवल कलाकार को ही ज्ञात था। इन चित्रों के बारे में बहुत अटकलें लगाई गई हैं, जिनमें से सबसे ज़्यादा अव्यावहारिक व्याख्या यह है कि वे उन प्राणियों ने बनाई हैं जो अभी भी आदिम स्थिति में थे। निश्चित रूप से, बीबीसी के विज्ञान वेब पेज पर 22 फ़रवरी 2000 को प्रकाशित एक रिपोर्ट में गुफा पेंटिंगे के बारे में निम्नलिखित पंक्तियाँ शामिल थीं:

... [हमने] सोचा था कि उन्हें आदिम मानव ने बनाया था... लेकिन दक्षिण अफ़्रीका में काम करने वाले दो वैज्ञानिकों के अनुसार, प्राचीन पेंटरों का यह विचार पूरी तरह से ग़लत है। उनका विश्वास है कि ये पेंटिंग जटिल और आधुनिक समाज का प्रमाण हैं। [10]

यदि आज के हमारे अनेक कला-कार्यों का हज़ारों साल के समय के उसी तरके से विश्लेषण किया जाए, तो इस बारे में अनेक बहस उभर सकती हैं कि 21 वीं सदी का समाज आदिम जनजाति था या विकसित सभ्यता। यदि आज के समय के कलाकारों के साबुत चित्रों की 5,000 साल बाद खोज होती है, और आज के समय का कोई लिखित प्रलेखन नहीं बचता, तो हमारे खुद के युग के बारे में लोग क्या सोचेंगे?

यदि भविष्य के लोग वैन गोग या पिकासो के चित्रों की खोज करेंगे, और उनका मूल्यांकन विकासवादी दृष्टिकोण से करेंगे, तो वे आज के समाज को क्या मानेंगे? क्या क्लाउड मोनेट के परिदृश्य इस तरह की टिप्पणियों को प्रेरित करेंगे कि "अभी तक उद्योग का विकास नहीं हुआ था, और लोग कृषि की जीवन शैली बिता रहे थे," या वैसिलि कैंडिंस्की के अमूर्त चित्र इस तरह की टिप्पणियों को प्रेरित करेंगे कि "लोग अभी भी पढ़ने-लिखने में सक्षम नहीं थे और विभिन्न संकेताक्षों से संप्रेषण करते थे"? क्या इस तरह की व्याख्याएँ उन्हें मौजूदा समय के हमारे समाज के बारे में किसी अंतर्दृष्टि तक ले जाएँगी?

**प्राचीन सभ्यताओं के स्तब्ध करने वाले अवशेष**

सामाजिक-आर्थिक विकास की त्रुटिपूर्ण संकल्पना विभिन्न समय पर औगस्ट कोमटे, हर्बर्ट स्पेंसर और लुइस हेनरी मोर्गन जैसे विचारकों ने प्रस्तावित किया – और बाद में यह कहते हुए चार्ल्स डार्विन के सिद्धांत के साथ जोड़ दिया गया कि सभी समाज आदिम से जटिल सभ्यता की ओर विकास करते हैं। इस त्रुटि ने, जो 19 वीं सदी में पनपीं और उसका असर पहले विश्व युद्ध के बाद के समय में बढ़ गया, तथाकथित रूप से नस्लवाद, उपनिवेशवाद, और क्रूर शुद्ध जाति आंदोलन का "वैज्ञानिक"आधार पेश किया। दुनिया के विभिन्न भागों में विभिन्न संस्कृतियों, त्वचा के रंग और शारीरिक विशेषताओं के साथ समाज के साथ अमानवीय व्यवहार हुआ, जो इस अवैज्ञानिक पूर्वग्रह से प्रेरित था।

.

एडम फ़र्गुसन, जॉन मिलर और एडम स्मिथ जैसे लेखकों और चिंतकों ने सुझाव दिया कि सभी समाज चार मूल चरणों से निकले हैं: शिकार और इकट्ठा करना, पशु-पालन और घुमक्कड़ी, खेती और अंततः, वाणिज्य। विकासवादियों के दावे के अनुसार, हाल ही में बंदरों से निकले आदिम मनुष्य ने केवल सरलतम उपकरणों से शिकार किया और पौधे और फल इकट्ठे किए। जैसे-जैसे उनकी बुद्धि और योग्यताओं का क्रमशः विकास हुआ, उन्होंने भेड़ और गाय जैसे चरने वाले जानवरों को पालना शुरू किया। उनकी बुद्धि और योग्यता क्रमशः उस बिंदु तक बढ़ी कि वे खेती का काम करने लगे, और आखिर में, वे व्यापार और सामान के लेन-देन में लग गए।

तथापि, पुरातत्व, नृविज्ञान, और विज्ञान की अन्य शाखाओं में प्रगति और हाल की खोजों ने "सांस्कृतिक और सामाजिक विकास" की कहानी के मूल दावे का अमान्य कर दिया है। यह आदमी को बुद्धिहीन जानवरों से विकसित हुआ चित्रित करने के और इस मिथ को – जिस तरीके से वे दार्शनिक कारणों को समझते हैं – विज्ञान पर थोपने के भौतिकतावादियों के प्रयासों अधिक कुछ नहीं है।

इस बात से यह पता नहीं चलता कि मानव शिकार और खेती से बचा रहा, कि वह अधिक पिछड़ा हुआ या अधिक विकसित बुद्धि का था। दूसरे शब्दों में, कोई भी समाज शिकार में इसलिए नहीं लगता कि यह पिछड़ा हुआ और मानसिक रूप से बंदरों के नज़दीक होता है। खेती में लगने का अर्थ यह नहीं है कि समाज आदिमता से दूर हो गया है। समाज की किसी भी गतिविधि का यह मतलब नहीं है कि निवासी अन्य प्राणियों से निकले हैं। ऐसी गतिविधियाँ, किसी भी तथाकथित विकासवादी प्रक्रिया से, ऐसे व्यक्ति पैदा नहीं करतीं, जो बुद्धि या योग्यता में अधिक उन्नत हों। प्रौद्योगिकी की दृष्टि से पिछड़ी हुई आज की अनेक जनजातियाँ केवल शिकार और इकट्ठा करने में लगी हुई हैं, लेकिन इसका निश्चित रूप में यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि वे मानव से किसी रूप में कम हैं। यही बात भविष्य में दसियों हज़ार साल बाद रहने वाले मानवों पर लागू होगी, जैसे कि यह सैंकड़ों हज़ारों साल पहले रहने वाले लोगों पर लागू होती है। बाद वाले आदिम मानव नहीं थे, और न ही वे जो भविष्य में अधिक उन्नत जातियाँ होंगी।

समाज की जीवन-शैली के आधार पर सभ्यता का विकासवादी इतिहास बनाना अवैज्ञानिक उपागम है। यह दृष्टिकोण विभिन्न पुरातात्विक खोजों को वैज्ञानिकों के भौतिकतावादी पूर्वग्रहों के अनुसार व्याख्या करने पर आधारित है, जो इस अनुमान पर आधारित है कि जिन मानवों ने पत्थरों के औज़ारों का प्रयोग किया था, वे बंदर-मानव थे, जो गुर्राते थे अपने घुटने झुकाकर चलते थे, और उनमें जानवरों जैसे व्यवहार दिखता था। फिर भी खोज किया गया कोई भी अवशेष इन लोगों की मानसिक क्षमताओं के बारे में कोई संकेत नहीं करता। यह सब केवल अनुमान है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, यदि आज के काल के विभिन्न उदाहरण 100,000 साल के बाद खोज जाएँगे और यदि भविष्य के लोगों को पास और जानकारी नहीं होगी, तो इस बात की संभावना है कि वे आज की मानवता और हमारी प्रौद्योगिकी की बहुत अलग व्याख्या करेंगे।

जैसा कि हमने दिखाया है, यह विचार किसी भी तरह के वैज्ञानिक सबूत पर आधारित नहीं है कि समाजों का विकास हुआ है। इस सिद्धांत का आधार ग़लत, और अवैज्ञानिक है कि आदमी के पास मूल बंदर-जैसा दिमाग था। हॉवर्ड विश्वविद्यालय के विकासवादी नृविज्ञानी विलियम होवेल्स ने माना है कि विकास के सिद्धांत अन्य सवाल उठाता है, शरीर के बारे में नहीं बल्कि व्यवहार के बारे में जिनका संबंध दर्शन, वैज्ञानिक तथ्यों को तय करने से है, जो बहुत अधिक कठिन है। होवेल्स संकेत करते हैं कि व्यवहार का इस रूप में "जीवाश्म" नहीं होता जैसा कि खोपड़ी का होता है और यह पत्थर के औज़ार की तरह बचा नहीं रहता। इसलिए, उनका कहना है कि हमारे पास इस बात का बहुत कम संकेत है कि प्राचीन काल में क्या हुआ होगा। वे यह उल्लेख भी करते हैं कि इस तरह की प्राक्कल्पना का परीक्षण करना लगभग असंभव है। [36]

हाल ही में, निश्चित रूप से, अधिसंख्यक सामाजिक वैज्ञानिकों ने विकासवादी विचारों में त्रुटियों को माना है, और कहा है कि सामाजिक-विकास का सिद्धांत निम्नलिखित बातों पर विज्ञान से विरोध में हैः

1. विभिन्न समाजों की पक्षपातपूर्ण व्याख्या करने के कारण यह जातीय भेदभाव से निकट से जुड़ा हुआ है, उदाहरण के लिए, यह अनुमान कि पश्चिमी समाज अधिक सभ्य थे।

2. यह सुझाव देता है कि सभी समाज एक ही मार्ग पर, एक ही तरीके का प्रयोग करके प्रगति करते हैं, और उनके समान उद्देश्य होते हैं।

3. यह समाज को भौतिकतावादी दृष्टिकोण से देखता है।

4. यह प्रमुख रूप से खोजों से संगत नहीं है। आदिम स्थितियों में रहने वाले अनेक समुदायों के पास आधुनिक माने जाने वाले विभिन्न समुदायों की तुलना में अधिक सभ्य आध्यात्मिक मूल्य होते हैं – दूसरे शब्दों में वे शांति-प्रिय होते हैं और समानता का पक्ष लेते हैं। अपनी खुराक के कारण, अनेक स्वस्थ और मज़बूत नहीं होते।

जैसा कि ये बातें साफ़ तौर से दिखाती हैं, यह संकल्पना कि समाज आदिम से सभ्यता की ओर प्रगति करता है, वैज्ञानिक मूल्यों और तथ्यों से संगत नहीं है। यह सिद्धांत भौतिकतावादी विचारधारा के प्रभाव में तोड़ी-मरोड़ी गई व्याख्याओं पर आधारित है। पिछली सभ्यताओं द्वारा छोड़े गए अवशेष और कला-कृतियाँ "इतिहास और संस्कृति के विकास" में त्रुटियों का खुलासा करती हैं।

**अतीत के निशान क्रमविकास का खंडन करते हैं**

विगत सभ्यताओं से प्राप्त निष्कर्ष "आदिम से सभ्य की ओर प्रगति" के सिध्दांत का खंडन करते हैं। जब हम इतिहास की प्रगति का परीक्षण करते हैं तो जो सच उभर कर आता है वह यह है कि मनुष्यों को सदैव एक जैसी बुध्दिमत्ता और रचनात्मकता हासिल रही है। लाखों वर्ष पहले के लोगों के कार्यों और उनके  निशानों का वास्तव में उससे बहुत भिन्न अर्थ है जैसा विकासवादी दावा करते हैं। जब हम इन निशानों पर नजर डालते हैं तो हम देखते हैं कि विगत के सभी युगों में लोगों ने अपनी बुध्दिमत्ता और क्षमताओं के साथ नयी-नयी खोजें की हैं, अपनी जरूरतों की पूर्ति की है और सभ्यताओं का निर्माण किया है।

भेजे गये पैगंबरों ने बड़े परिवर्तनों की शुरुआत कराकर अपने कौमों को विकास और प्रगति में सहायता की। अल्लाह के इन पैगंबरों के पास विस्तृत वैज्ञानिक ज्ञान था। उदाहरण के लिए पैगंबर नूह (अ.) नाव बनाने की प्रौद्योगिकी जानते थे, जैसा कि हम कुरान से समझ सकते हैं कि उनका जहाज भाप से चलता था (खुदा सच्चाई जानता है) :

यहाँ तक कि जब हमारा हुक्म (अज़ाब) आ पहुँचा और *तन्नूर से जोष मारने लगा* तो हमने हुक्म दिया (ऐ नूह) हर किस्म के जानदारों में से (नर मादा का) जोड़ा (यानि) दो दो ले लो और जिस (की) हलाकत (तबाही) का हुक्म पहले ही हो चुका हो उसके सिवा अपने सब घर वाले और जो लोग ईमान ला चुके उन सबको कष्ती (नाँव) में बैठा लो और उनके साथ ईमान भी थोड़े ही लोग लाए थे (सुरा हुद : 40)

*तन्नुर* के नाम से मशहूर इस प्रकार की भट्ठी का प्रयोग अभी भी विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है। यह इस आयत में कही गई है कि यह भट्ठी पानी आगे छोड़ती है। इस प्रकार, यह जहाज चूल्हे के बुलबुले छोड़ने से या दूसरे शब्दों में चूल्हे के खौलने से आगे बढ़ने के लिए तैयार था। अपनी तफ्सीर

में एल्माली के हम्दी याजिर कहते हैं कि कश्ती "किसी स्टोव से ऊर्जा प्राप्त करने वाला एक प्रकार का भाप का जहाज था।"

तन्नुर : इसे शब्दकोश में बंद भट्ठी या स्टोव के रूप में वर्णित किया गया है। "फरा" शब्द का मतलब उबलना और काफी जोर और वेग के साथ फुहारें छोड़ना है। दूसरे शब्दों में इसका यह निहितार्थ है कि नौका अकेले पतवार से ही चलने वाली नहीं है बल्कि स्टोव से ऊर्जा प्राप्त करने वाले स्टीमर की याद दिलाती है।[37]

पैगंबर हजरत सुलेमान (अ.) के समय में भी विज्ञान, कला और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई। उदाहरण के लिए कुरान हमें बताता है कि उनके काल में हवाई जहाज जितने तेज परिवहन के वाहन काम में लाये जाते थे : "और हवा को सुलेमान का (ताबेदार बना दिया था) कि उसकी सुबह की रफ्तार एक महीने (मुसाफ़त) की थी और इसी तरह उसकी शाम की रफ्तार एक महीने (के मुसाफत) की थी । (सुरा सबा :12)

यह आयत साफ-साफ इस बात का संकेत देती है कि लंबी-लंबी दूरियों को तेजी के साथ पार किया जा सकता था। यह हवा में चलने वाले उन वाहनों के बारे में बताता है जो कि हमारे अपने समय में काम आने वाली प्रौद्योगिकी की तरह की प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते थे। (अल्लाह सच्चाई जाता है।) इसके अलावा, कुरान हमें बताता है :
ग़रज़ सुलेमान को जो बनवाना मंज़ूर होता ये जिन्नात उनके लिए बनाते थे (जैसे) मस्जिदें, महल, क़िले और (फरिश्ते अम्बिया की) तस्वीरें और हौज़ों के बराबर प्याले और (एक जगह) गड़ी हुयी (बड़ी बड़ी) देगें (कि एक हज़ार आदमी का खाना पक सके) ऐ दाऊद की औलाद शुक्र करते रहो और मेरे बन्दों में से शुक्र करने वाले (बन्दे) थोड़े से हैं (सुरा सबा : 13)

दूसरे शब्दों में, पैगंबर सुलेमान (अ.) ने अपने लोगों को निर्माण एवं वास्तुशिल्प की अत्यंत उन्नत प्रौद्योगिकियों को काम में लाने पर लगाया। एक दूसरी आयत बताती है कि : **और (इसी तरह) जितने शयातीन (देव) इमारत बनाने वाले और ग़ोता लगाने वाले थे (सुरा साद : 36-37)**

यह तथ्य कि पैगंबर सुलेमान (अ.) गोताखोर देव को नियंत्रित कर सकते थे, समुद्र के नीचे के संसाधनों की जगह और उसके उत्खनन का संकेत देता है। समुद्र के नीचे के तेल और बेशकीमती धातु के उत्खनन की प्रक्रियाओं और काम के लिए अत्यधिक उन्नत प्रौद्योगिकी की आवश्यकता पड़ती है। ये आयत इस बात पर जोर देती हैं कि इस प्रकार की प्रौद्योगिकी का अस्तित्व भी था और उसे काम में भी लाया जाता था। एक और आयत **"पिघले हुए तांबे के उद्गम"** के बारे में बताता है (सुरा सबा : 12)। पिघले हुए तांबे का प्रयोग इस बात का संकेत देता है कि पैगंबर सुलेमान (अ.) के समय में बिजली को उपयोग में लाने वाली उन्नत प्रौद्योगिकी का अस्तित्व था। जैसा कि हम जानते हैं तांबा धातु और ऊष्मा के बेहतरीन चालकों में से है, यही वजह है कि यह बिजली उद्योग के आधार का प्रतिनिधित्व करता है। यह शब्दावली, "हमने पिघले हुए तांबे के प्रवाह का स्रोत तैयार किया है" संभवत: इस बात को दर्शाता है कि बड़े पैमाने पर बिजली पैदा की जाती थी और बहुत से प्रौद्योगिकीय क्षेत्रों में उसका इस्तेमाल होता था। (अल्लाह सच्चाई जानता है।)

कई आयतें बताती हैं कि पैगंबर दाऊद (स.) को लोहे के काम और कवच बनाने की अच्छी जानकारी थी :

और उनके वास्ते लोहे को (मोम की तरह) नरम कर दिया था,
कि फराख व कुशादा जिरह बनाओ और (कड़ियों के) जोड़ने में अन्दाजे का ख्याल रखो और तुम सब के सब अच्छे (अच्छे) काम करो वो कुछ तुम लोग करते हो मैं यक़ीनन देख रहा हूँ (सुरा सबा : 10-11)

कुरान में इस बात का भी उल्लेख है कि जुल-कुरनैन ने दो पहाड़ियों के बीच अवरोध निर्मित किया जिसे कि पार नहीं किया जा सकता या उस समय के समाजों द्वारा जिनसे होकर सुरंग नहीं बनायी जा सकती थी। संबंधित आयत के मुताबिक वे लोहे की सिल्लियों और ढलुआ तांबे का प्रयोग करते थे :

(अच्छा तो) मुझे (कहीं से) लोहे की सिल्ली ला दो (चुनांचे वह लोग) लाए और एक बड़ी दीवार बनाई यहाँ तक कि जब दोनो कंगूरो के बीच (दीवार) को बुलन्द करके उनको बराबर कर दिया तो उनको हुक्म दिया कि इसके गिर्द आग लगाकर धौंको यहां तक उसको (धौंकते-धौंकते) लाल ऍंगारा बना दिया (सूरा अल-कहफ: 96)

यह जानकारी इस बात का संकेत देती है कि जुल-कुरनैन सुदृढ़ीकृत ठोस प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते थे। निर्माण कार्यों में प्रयोग में लायी जाने वाली सबसे मजबूत सामग्रियों में से एक लोहा इमारतों, पुलों और बांधों की तरह के वास्तुशिल्पीय कार्यों की शक्ति में वृध्दि करने के लिए अत्यावश्यक है। इस आयत से ऐसा जान पड़ता है कि उन्होंने एक सिरे से दूसरे सिरे तक लोहा बिछाया और उसके ऊपर मसाला डालकर मजबूत ठोस इमारत का निर्माण किया। (सच्चाई अल्लाह जानता है।)
प्राचीन मध्य अमेरिकी सभ्यताओं के शिलालेख एक लंबे, दाढ़ीवाले व्यक्ति का उल्लेख करते हैं जो कि सफेद कपड़े पहने हुए आता है। वे हमें इस बात की भी जानकारी प्रदान करते हैं कि थोड़े समय के भीतर अकेले अल्लाह में विश्वास का प्रसार होगा और कला एवं विज्ञान के क्षेत्र में लंबी छलांग लगाई जाएगी।

हजरत याकूब (अ.), हजरत यूसुफ (अ.), हजरत मूसा (अ.) और हजरत आरोन (अ.) की तरह बहुत से पैगंबरों को प्राचीन मिस्र में भेजा गया। इन पैगंबरों और उनमें विश्वास करने वाले लोगों ने बहुत संभव है कि विभिन्न युगों में मिस्र द्वारा की गयी त्वरित कलात्मक और वैज्ञानिक प्रगति में महत्वपूर्ण असर डाला होगा।

कुरान और हमारे पैगंबर (स.) की सुन्नत पर चलते हुए मुस्लिम वैज्ञानिकों ने नक्षत्र विज्ञान, गणित, ज्यामिति, औषधि और अन्य विज्ञानों में महत्वपूर्ण खोजें कीं। इनकी वजह से विज्ञान और सामाजिक जीवन में प्रमुख परिवर्तन हुए और उल्लेखनीय प्रगति हुई। इन मुस्लिम वैज्ञानिकों और उनके कार्यों में से कुछ इस प्रकार है :

**अब्द अल-लतीफ अल-बगदादी** शरीर रचना विज्ञान पर अपने काम के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने निचले जबड़े और उरोस्थि की तरह की शरीर से जुड़ी पहले की बहुत सी भ्रांतियों को दूर किया। उनका अल-इफादा वा अल-इतिबार 1788 में सामने आया और लैटिन, जर्मन और फ्रांसीसी भाषा में उसका अनुवाद हुआ। उन्होंने अपने मकालतून फिअल-हवास में पांच ज्ञानेंद्रियों का अध्ययन किया।

**इब्न सीना (अविसीन्ना)** बहुत सी बीमारियों का उपचार दिया। उनकी सुप्रसिध्द रचना किताब अल-कानून फि अल-तिब्ब अरबी में लिखी गयी थी और 12वीं सदी में उसका लैटिन में अनुवाद किया गया। यूरोपीय विश्वविद्यालयों में 17 वीं सदी तक बुनियादी पाठयपुस्तक के रूप में इसको मान्यता

मिली हुई थी और इसी रूप में इसकी पढ़ाई करवाई जाती थी। इसकी बहुत सी चिकित्सकीय जानकारी आज भी प्रयोग में लायी जाती है।

**जकारिया अल - कजविनी** ने मस्तिष्क और हृदय की बाबत बहुत से भ्रांत विचारों को दूर किया जिन्हें अरस्तु के समय से ही सही माना जाता रहा था। इन दो अंगों के बारे में जो जानकारी उन्होंने मुहैया करायी वह हमारे आज के ज्ञान से काफी मिलती-जुलती है।

**जकारिया अल-कजविनी, हम्द अल्लाह मुस्तौफी कजविनी (1281-1350) और इब्न अल - नफीस** ने शरीर रचनाशास्त्र का अध्ययन किया और आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की नींव डाली।

**अलि इब्न ईसा** ने आंख की बीमारियों पर तीन खंडों में तजकिरात अल - काहहलीन नामक पुस्तक की रचना की। पहला खंड पूरी तरह से आंखों की रचना को समर्पित है और इसमें काफी उपयोगी जानकारी प्रदान की गयी है। कालांतर में चलकर इसका लैटिन और जर्मन में अनुवाद किया गया।
अल-बैरूनी ने गैलीलियो से 600 वर्ष पहले यह प्रदर्शित किया कि पृथ्वी घूमती है और न्यूटन से 700 वर्ष पहले उसके व्यास का आकलन प्रस्तुत किया।

**अली कुशजी** ने चंद्रमा की अवस्थाओं का अध्ययन किया और इसी विषय पर पुस्तक लिखी। उनका अध्ययन भावी पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक बना।

**थाबित इब्न** कुर्रा ने न्यूटन से सदियों पहले विभेदक आकलन की खोज की।

अल-बत्तानी के नक्षत्र विज्ञान संबंधी पर्यवेक्षणों की सटीकता ने बाद के वैज्ञानिकों को आश्चर्यचकित कर दिया।

उन्होंने 533 सितारों का अवलोकन किया और पृथ्वी से सूर्य की अधिकतम दूरी की सटीक गणना प्रस्तुत की। त्रिकोणमिति पर उनके अध्ययनों और आकलनों ने उन्हें गणित के क्षेत्र में पथ-प्रदर्शक बना दिया। त्रिकोणमिति को *सेकटैंट* और *कोसेकटैंट* की शब्दावली **अबुल वफा** की वजह से ही हासिल हुई।

**अल-ख्वारिज्मी** ने बीजगणित पर पहली पुस्तक लिखी।

अपनी पुस्तक *तोहफत अल-अदा* में **अल-मगरीबी** ने त्रिकोणों, चतुर्भुजों और वृत्तों समेत ज्यामितीय आकृतियों के धरातल क्षेत्रफल की गणना करने की पध्दति विकसित की।

**इब्न अल-हैसम** प्रकाश-विज्ञान के संस्थापक हैं। बेकन और केप्लर ने उनकी कृतियों का उपयोग किया और गैलीलियो ने दूरबीन की खोज में उनके कार्यों का उपयोग किया।

**अल-किंदी** ने आइंस्टीन से 1,100 वर्ष पहले सापेक्षता और सापेक्षता के सिध्दांत को सामने रखा।

**अकशम्सद्दीन** इतालवी चिकित्सक फ्रैकास्तोरो से 100 साल पहले जीवाणुओं के अस्तित्व के बारे में बताने वाले पहले व्यक्ति थे।

**अली इब्न अब्बास अल-मजूसी** चिकित्सा विज्ञान के पथ-प्रदर्शक थे और उनकी पुस्तक *कामिल अस-सीना* को बहुत सी बीमारियों के उपचार में मूलभूत संदर्भ ग्रंथ के रूप में देखा जाता है।

**इब्न अल-अल जज्जर** ने कोढ़ के कारणों और उपचार का वर्णन किया है।

ऊपर बहुत थोड़े से मुस्लिम वैज्ञानिकों के बारे में बताया गया है। उन्होंने ऐसी महत्वपूर्ण खोजें कीं जो कि कुरान और हमारे पैगंबर (स.) का अनुसरण करके आधुनिक विज्ञान का आधार निर्मित करेंगी।

जैसा कि हमने देखा, पहले की बहुत सी कौमों ने अपने पास भेजे गये पैगंबरों के जरिये कला, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी और विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति की। पैगंबर की आज्ञा मानकर और इन लोगों के सुझावों और प्रोत्साहन से सीखकर उन्होंने ज्ञान हासिल किया और उसे आने वाली पीढ़ियों को दिया। इसके अतिरिक्त, सच्चे मजहब से विमुख हाने और अंधविश्वासों को अपना लेने वाले समाज इन पैगंबरों के प्रयत्नों के जरिये एक अल्लाह में विश्वास करने लगे।

जब पूर्वग्रह के बिना बीते युगों से संबंधित निष्कर्षों पर विचार किया जाता है तो मानवता के इतिहास को एकदम स्पष्ट और साफ ढंग से समझा जा सकता है।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, इतिहास की सभी अवधियों में पिछड़ी और उन्नत सभ्यताएं एक साथ विद्यमान रही हैं, जैसे वे आज अस्तित्वमान हैं। हमारे अपने समय में हमारे पास अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी है जबकि विश्व के कई दूसरे हिस्सों के लोग आदिम अवस्थाओं में रह रहे हैं, इसी प्रकार से अतीत में प्राचीन मिस्र में जहां एक तरफ गौरवशाली सभ्यता का अस्तित्व था वहीं दूसरी तरफ विश्व के अन्य हिस्सों में अपेक्षाकृत ज्यादा पिछड़े समाज थे।

माया संस्कृति के लोगों ने अति विकसित शहर बनाया। उनके छोड़े हुए निशानों से पता चलता है कि उनके पास स्पष्ट रूप से विकसित प्रौद्योगिकी थी। उन्होंने शुक्र ग्रह की कक्षा की गणना की और वृहस्पति ग्रह के चंद्रमाओं की खोज की। उसी दौर में यूरोप के अधिकतर लोग यह विश्वास करते थे कि पृथ्वी सौर प्रणाली का केंद्र है। जहां मिस्र के लोग दिमाग की सफल सर्जरी कर रहे थे, दूसरे क्षेत्र में लोगों का यह मानना था कि बीमारियां बुरी आत्माओं की देन हैं। अपनी कानूनी व्यवस्था, साहित्य, कला की समझ और खगोल शास्त्र के ज्ञान की बदौलत सुमेरियाई लोगों ने मेसोपोटामिया में गहरी जडों वाली सभ्यता विकसित की जबकि दुनिया के एक दूसरे कोने में समाज निरक्षर था। इसलिए, जिस तरह आज की सभी सभ्यताएं विकसित नहीं हैं, अतीत में कभी ऐसा नहीं रहा जब सभी कौमें पिछड़ी ही रही।

अब तक, हमने इतिहास के विभिन्न दौर से जुड़े प्रमाणों का परीक्षण किया और दसियों  या सैकड़ों या हजारों साल पहले की सभ्यता के उदाहरणों की समीक्षा की। जयादा नजदीक के इतिहास पर नजर डालते हुए, हम पुन: प्रमाणों का अवलोकन करते हैं कि मानव समाज हमेशा मानव ही रहा: यहां हम केवल "आदिम" लोगों का अध्ययन नहीं कर रहे हैं जो नरवानर से कुछ ही समय पहले अलग हुए, बल्कि सभ्य मानव जाति की चर्चा कर रहे हैं जिसके पास हजारो साल से टिकी सभ्यता की विरासत हो।

बीसवीं सदी में प्रौद्योगिकी के विकास के साथ, पुरातात्विक अनुसंधान अत्यंत तेज हुआ, और मानव जाति के वास्तविक इतिहास से जुड़े अधिक से अधिक प्रमाण खोजे गए। यह हकीकत उभर कर आई कि मिस्र, मध्य अमेरिका, मेसोपोटामिया और अन्य क्षेत्रों में हजारों साल पहले का जीवन कई मायनों में आज के जीवन जैसा ही था।

**महापाषाण: मानव इतिहास के विस्मयकारी शिल्प-तथ्य**

*महापाषाण* विशाल पाषाणखंड वाले कीर्तिस्तंभों को दिया गया नाम है। अनेक प्राचीन महापाषाणीय अवशेष आज भी मौजूद हैं। इन स्मारकों का सबसे आश्चर्यजनक पहलू यह है कि इतने बडे चट्टान,

जिनका वजन एक टन से अधिक है, का उपयोग निर्माण में कैसे किया गया, इतने भारी खंड निर्माण स्थल तक कैसे और किस तकनीक से लाए गए। इतने बड़े पाषाण खंडों को लोग कैसे निर्माण कार्य के नीचे से ऊपरी हिस्से तक ले गए। ये माहापाषाण आमतौर पर ऐसे पत्थरों से बनाए गए है जिन्हें बहुत दूर से लाया गया और इन्हें आजकल निर्माण और अभियांत्रिकी का चमत्कार कहा जाता है। जिन लोगों ने ऐसा कार्य किया उनके पास निश्चत तौर पर कुछ अति विकसित तकनीक रही होगी।

सर्वप्रथम, बेशक इस कीर्तिस्तंभों के निर्माण के लिए योजना जरूरी है, और उसकी जानकारी सटीक रूप से परियोजनाओं में शामिल सभी लोगों को दी गई होगी। जहां स्मारक बनाना है वहां की तकनीकी ड्राइंग तैयार करना होगा। इसके अतिरिक्त, इन ड्राइंग की गणना बिना किसी त्रुटि के करना होगा क्योंकि मामूली सी त्रुटि भी निर्माण को असंभव कर सकती है। इसके अलावा, अगर निर्माण करना है तो इसके क्रम कें संगठित करने का काम भी दोषरहित रखना होगा। वांछित ढंग से निमार्ण में प्रगति के लिए श्रमिकों के समन्वय और उनकी आवश्यकताओं (भोजन, आराम आदि) भी अहम है।

स्पष्टत:, इन स्मारकों के निर्माण में जुटे लोगों के पास संचित ज्ञान तथा उससे बेहतर तकनीक रही होगी जिसकी कल्पना की जाती है। जैसा कि इस पुस्तक में पहले दर्ज किया गया है कि, सभ्यताएं हमेशा आगे की दिशा में नहीं चलतीं, कई बार ये पीछे भी चलती हैं। और वास्तव में, अधिकतर समय, दुनिया के अलग-अलग भागों में विकसित और पिछड़ी दोनों सभ्यताएं साथ साथ मौजूद रहती हैं।

यह ज्यादा से ज्यादा संभव है कि जिन लोगों ने इन कीर्तिस्तंभों का निमार्ण किया, उनके पास एक विकसित और समृध्द सभ्यता रही हो जैसा कि पुरातात्विक एवं ऐतिहासकि अवशेषों द्वारा दर्शाया गया है। उनके निर्माण दर्शाते हैं कि उनके पास गणित और ज्यामीति का बहुआयामी ज्ञान था। मसलन, इस तरह के कीर्तिस्तंभ के निर्माण के लिए पर्वतीय इलाकों में स्थिर बिंदु की गणना कर के स्मारकों के निर्माण के लिए आश्वयक प्रौद्योगिकी उनके पास थी; कि भौगोलिक स्थिति की जानकारी के लिए उन्होंने जो उपकरण (मसलन कुतुबनुमा) इस्तेमाल किए और आवश्यकता पड़ने पर निर्माण कार्य के लिए वे सैकड़ों-हजारों किलोमीटर दूर से सामग्री ढोकर ला सकते थे।

स्पष्ट रूप से, उन्होंने यह निर्माण कार्य सिर्फ आदिम उपकरणों और श्रमबल की सहायता से तो नहीं ही किया होगा। वास्तव में, अनुसंधानकर्ताओं और पुरातत्वविदों के अनेक प्रयोगों में यह दर्शाया गया है कि क्रमिक विकास सिध्दांत में प्रस्तावित हालात में इस तरह के स्मारकों का निर्माण असंभव सा काम रहा होगा।

विकासवादियों के बताए काल्पनिक "पाषाण काल" हालात में इस तरह के स्मारकों के  निर्माण का अनुसंधानकर्ताओं ने प्रयास किया, लेकिन वे पूरी तरह असफल रहे। इन अनुसंधानकर्ताओं ने इस तरह के किसी ढांचे के निर्माण में केवल कठिनाई ही महसूस नहीं की बल्कि उन्होंने एक स्थान से दूसरे स्थान तक इतने बड़े पत्थरों को लाने-ले जाने में भी बहुत कठिनाई महसूस की। यह पुन: दर्शाता है कि उस युग के लोगों ने पिछड़ा जीवन नहीं व्यतीत किया जैसा कि विकासवादी हमें विश्वास दिलाते है। उस युग के लोगों ने वास्तुशिल्प को समझा और उसका उपयोग किया, निर्माण तकनीक का दक्षता से इस्तेमाल किया। वे खगोलीय अनुसंधान में भी व्यस्त रहे।

यह पूर्ण समझने योग्य है कि हजारों साल पुरानी सभ्यताओं के केवल चट्टान, पत्थर के ढांचे और पत्थर के विभिन्न औजार ही बचे रहें। यह किसी भी तरह तर्कसंगत नहीं होगा कि पत्थर के कुछेक ढांचे और शिल्प-तथ्यों को देखकर हम यह निष्कर्ष निकाल ले कि उस युग के लोग अविकसित सभ्यता के थे जिनके पास किसी भी तरह की कोई प्रौद्योगिकी नहीं थी और वे केवल पत्थर का ही

इस्तेमाल करने में सक्षम थे। विभिन्न मताग्रहों पर आधारित ऐसे दावों का कोई वैज्ञानिक महत्व नहीं है। परंतु यदि हम किसी पूर्वधारणा के नकारात्मक प्रभाव में आए बिना इन निष्कर्षों का मूल्यांकन करें तो अपने निष्कर्षों को सच्चाई के ज्यादा करीब ला सकते हैं। अगर लाखों साल पुराना समाज लकड़ी के शानदार घरों में रहता था, शीशे की खिड़कियों वाले खूबसूरत घर बनाए थे और बहुत आकर्षक सजावट का इस्तेमाल किया था, तो उनमें से बहुत कम ही चीजें इस बीच की सदियों के दौरान हवा,पानी, भूकंप और बाढ़ का मार सह पाएंगी। प्राकृतिक परिस्थितियों में लकड़ी, शीशा, तांबा, कांस्य और अन्य सामग्रियों के नष्ट होने में 100 से 200 साल लगते है। दूसरे शब्दों में, दो शताब्दी में आपके घर की दीवारें खुद नष्ट हो जाएंगी और अंदर की सजावट का बहुत थोड़ा हिस्सा ही शेष रह पाएगा। अगर भूकंप, बाढ़ या तूफान वगैरह आए तो और भी कम अवशेष बचेंगे। जो कुछ बचेंगे वे पत्थर के टुकड़े होंगे जिन्हें नष्ट होने में बहुत समय की आवश्यकता पड़ती है। तब तक पत्थर की सामग्रियां भी छोटे टकड़ों में तब्दील हो जाएंगी। पत्थर के इन टुकड़ों के आधार पर, उस दौर के लोगों के दैनिक जीवन के बारे में व्याख्या करना असंभव है। उस दौर के लोगों के सामाजिक संबंधों, आस्थाओं, रुचियों और कला की समझ के बारे में सटीकता के किसी स्तर पर निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

फिर भी विकासवादी मिथ्या व्याख्या से विभिन्न खोजों को रंगने और विभिन्न परिदृश्य ईजाद कर असंभव को अंजाम देने के प्रयास में लगे हैं। तथ्य को तोड़-मरोड़ फंतासी का निर्माण करना ऐसी चीज है जिसकी वास्तव में खुद कुछ विकासवादी ही आलोचना करते हैं। उन्होंने दरअसल इस प्रयास को **"बस दास्तानें"** का नाम दिया है।

यह शब्दावली प्रसध्दि विकासवादी जीवाश्मशास्त्री स्टीफन जे गोउल्ड की आलोचना में आया जिसे उन्होंने इसी नाम से ब्रिटिश लेखक-कवि रुडियर्ड किपलिंग (1865-1936) की 1902 में प्रकाशित किताब से लिया था। बच्चों के लिए लिखी गई इस किताब में किपलिंग ने अनके कल्पनाशील कहानियां पेश की कि कैसे जीव-जंतुओं ने अपने विभिन्न अंग एवं विशेषण पाए। उदाहरण के तौर पर उन्होंने हाथी के सूंड के बारे में लिखा:
प्राचीन काल में हाथी की सूंड नहीं होती थी। उसके पास केवल काली सी और उभरी हुई नाक थी। लेकिन एक हाथी था- एक नया हाथी, हाथी का एक बच्चा- जो बहुत जिज्ञासु था.....अत: वह बढ़ता गया विशाल भूरी-हरी तैल्य लिम्पोपा नदी के उस किनारे तक जहां उसके हिसाब से लकड़ी का एक लट्ठ था। लेकिन वहां वास्तव में एक मगरमच्छ था... तब हाथी के बच्चा अपना सिर मगरमच्छ के मुंह के पास ले गया और मगरमच्छ ने उसकी छोटी सी नाक पकड़ ली...तब हाथी का बच्चा अपने छोटे कूल्हे के सहारे बैठ गया और उसे खींचता गया, खींचता गया और खींचता गया और उसकी नाक खिंचने लगी। और मगरमच्छ पानी में छटपटाता रहा...अपनी पूछ पटक कर पानी को गदला करता रहा और वह उसे खींचता रहा खींचता रहा खींचता रहा। [38]

गोउल्ड और कुछ अन्य विकासवादियों ने इस तरह की कल्पनाओं से साहित्य को भरने की आलोचना कर चुके है जिसमें उन्हें सही ठहराने के लिए आवश्यक प्रमाण नहीं हैं। यही उन लोगों पर भी लागू है जिन्होंने क्रमविकास के सिध्दांत के अनुरूप समाज के विकास का व्याख्या करने की कोशिश की। किपलिंग की कहानी की तरह, विकासवादी सामाज शास्त्रियों ने मात्र कल्पनाशीलता पर भरोसा किया। वास्तव में, ऐसे समाज पर आधारित मानव जाति के किसी ऐसे इतिहास पर गौर करें जिसके कथित पूर्वज सिर्फ घुरघुराते थे और पत्थर के अनगढ़ औजारों का प्रयोग करते थे, गुफाओं में रहते थे और शिकार और कंद-मूल इकट्ठा कर जीवित रहते थे और बाद में धीरे-धीरे विकसित हुए और खेती करने लगे और फिर धातुओं का प्रयोग किया और जैसे-जैसे उनकी मानसिक शक्ति विकसित हुई आपस में

सामाजिक संबंध बनाने लगे। यह "इतिहास" भी उस कहानी से भिन्न नहीं है जिसमें बताया गया है कि हाथी ने सूंड कैसे पाई।

गोउल्ड इसे अवैज्ञानिक नजरिए पर कहते हैं:

वैज्ञानिक जानते है ये सब कहानी मात्र है; दुर्भाग्यवश, उन्हें पेशेवर साहित्य में प्रस्तुत किया गया है जहां उन्हें बहुत गंभीरता से लिया जाता है। वहां ये "तथ्य" बन गए और लोकप्रिय साहित्य में प्रवेश कर गए। [39]

इसके अलावा, गोउल्ड यह भी कहता है कि ये कहानियां क्रमिक विकास के सिध्दांत के रूप में कुछ भी साबित नहीं करती:

विकासवादी प्राकृतिक इतिहास की "जस्ट सो स्टोरी" की परंपरा की ये कहानियां कुछ भी सिध्द नहीं करतीं। लेकिन इनका और इन्हीं की तरह अन्य मामलों के बोझ ने क्रमवाद पर मेरा भरोसा कम किया है। अधिक कल्पनाशील लोग अब भी इन्हें संचित कर सकते है मगर कमजोर कयास आराई पर टिकी अवधारणाएं मुझे कतई प्रभावित नहीं करती।[40]

**न्यूग्रेंज**

डबलिन के पास स्थित इस स्मारक समाधि के बारे में सहमति है कि यह ईसा पूर्व 3,200 में बनी है। न्यूग्रेंज मिस्र की सभ्यता के अस्तित्व में आने और बेबीलोनिया और क्रेटन सभ्यताओं से भी पहले की है। दुनिया में पत्थरों के सबसे प्रसिध्द ढांचे में से एक स्ओनेहेंज भी तब नहीं बना था। शोध से पता चलता है कि न्यूग्रेंज केवल समाधि ही नहीं बल्कि इसके बनाने वाले खगोल विधा के गहरे जानकार थे और उनके पास अभियांत्रिकी और वास्तुशास्त्र का विशद ज्ञान था।

अनेक पुरातत्वविदों ने न्यूग्रेंज को प्रौद्योगिकी के चमत्कार के रूप में परिभाषित किया है। उदाहरण के तौर पर ढांचे के ऊपर का गुंबद अपने आप में अभियांत्रिकी का एक कमाल है। पेंदी में भारी और उपरी हिस्से में हलके एक पत्थर को दूसरे के ऊपर इतनी महारत से रखा गया है कि हरेक दूसरे से हल्का सा बाहर निकलता है। इससे 6 मीटर ऊंची एक षटकोणीय चिमनी ढांचे के मध्य भाग से ऊपर की ओर उठती है। चिमनी के शीर्ष पर पत्थर का ढक्कन है जिसे जब चाहे बंद या खोला जा सकता है।

स्पष्ट रूप से यह विशाल ढांचा अभियांत्रिकी की बहुत अच्छी समझ रखने, सटीक गणना करने, सही योजना बनाने, भरी पत्थर ढोने और निर्माण की अपनी जानकारी का अच्छा इस्तेमाल करने की क्षमता वाले लोगों ने बनाया होगा। विकासवादी, इस तथ्य पर प्रकाश नहीं डाल सकते कि यह निर्माण कैसे बना जबकि उनके अयथार्थवादी विचार के अनुसार उस समय के लोग आदिम एवं पिछड़ी स्थितियों में काम करते थे। लेकिन यह असंभव है कि इतना विशाल स्मारक ऐसे लोगों द्वारा बनाया गया हो जिनके पास अभियांत्रिकी और निर्माण के कुशल ज्ञान का अभाव रहा हो।

इस ढांचे की खगोल शास्त्रीय विशेषताएं अकेली ही आश्चर्यचकित कर देने वाली हैं। यह विशाल स्मारक इस तरीके से बनाया गया है कि मकर सक्रांति में यह रोशनी का प्रभावशाली प्रदर्शन पेश करती है। उसके शीघ बाद वर्ष के सबसे छोटे दिन (21 दिसंबर) को सुबह होने के थोड़ी ही देर बाद सूर्य की किरणों का पूंज न्यूग्रेंज के समाधि कक्ष को जगमगा देता है। इस क्षण रोशनी का एक शानदार

खेल होता है। उगते सूरज की किरणें प्रवेश मार्ग पर छत पर बने कक्ष के तल में बने एक संकरे छेद में प्रवेश करती हैं और गलियारे को जगमगाती हुई अंदर के कक्ष में पहुंचती हैं। पत्थरों के तमाम ब्लाक इस कोण से चुने गए है कि उन तक प्रकाश पहुंच पाती है और उनसे परावर्तित हो सकती है। यह एक अहम कारक है जो पूरे ढांचे में प्रकाश कीड़ा को संभव बनाता है।

आप देख सकते है कि इस विशाल स्मारक के निर्माताओं के पास अभियांत्रिकी का ज्ञान ही नहीं था बल्कि उन्हें खगोल विद्या की भी जानकारी थी जिससे उन्हें दिन के आकार और सूर्य की गति की गणना कर सकते थे।

न्यूग्रेंज इंग्लैंड में अभी तक बचे प्राचीन काल के पत्थर के अनेक ढांचों में से केवल एक है। इस ढांचे को देखकर आप इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते है कि इसे ऐसे लोगों ने बनाया जिनके पास ज्ञान का बहुत अच्छा संचय था और जो अति विकसित तकनीक और विधि का इस्तेमाल करते थे। अब उस युग के लोगों की जीवन शैली के संबंध में ंकिस तरह की व्याख्या की जा सकती है? इस तरह के ढांचों का निर्माण करने वाले लोग आरामदेह और सभ्य वातावरण में रहने वाले होंगे । अगर उनके पास खगोल शास्त्र का ज्ञान था और अपने आकलनों की सही तरीके से व्याख्या करने की प्र्याप्त विशेषज्ञता हासिल थी तब उनका दैनिक जीवन निश्चित तौर पर संचित ज्ञान के इसी अनुपात में सभ्य रहा होगा। यह पाषाण स्मारक उस समाज की एकमात्र बची इमारत हो सकती है जो आरामदेह मकान में रहते होंगे, जिनके पास अच्छे बाग-बगीचे होंगे, जो अच्छे अस्पताल में बेहतर उपचार पाते होंगे, जो व्यवसायिक गतिविधियों में लगे होंगे, कला एवं साहित्य का सम्मान करते होंगे और एक वृहद, अहम सांस्कृतिक विरासत का आनंद उठाते होंगे। यह इस पाषाण स्मारक के बनाने वाले लोगों के बारे में सब पुरातात्विक निष्कर्षों एवं ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित यथार्थवादी व्याख्याएं हैं। फिर भी, सिर्फ भौतिकवादी दिशा में सोचने के आदी विकासवादी विज्ञान से मेल खाने वाली तर्कसंगत व्याख्याएं करने के बजाय ऐसी दास्तान सुनाना पसंद करते हैं जो विशिष्ट मताग्रह का फल हैं। बहरहाल, उनकी कहानी निश्चित व सही व्याख्या की अभिव्यक्ति कभी नहीं हो सकती।

**स्टोनहेंज**

इंग्लैंड स्थित स्मारक स्टोनहेंज में कोई 30 बड़े-बड़े पत्थरों के ब्लॉक हैं जिन्हें एक वृत्ता में व्यवस्थित किया गया है। इनमें से प्रत्येक ब्लॉक औसतन 4.5 मीटर (15 फीट) ऊंचा और औसतन 25 टन वजनी है। इस स्मारक ने बहुत से शोधकर्ताओं का ध्यान आकर्षित किया और इस बात को लेकर बहुत से सिध्दांत प्रस्तावित किये गये कि इसका निर्माण क्यों और कैसे किया गया। यहां जो बात मायने रखती है वह यह नहीं कि इनमें से कौन-सा सिध्दांत (अगर कोई है) वास्तव में सही है, बल्कि यह है कि यह स्मारक एक बार फिर मानवजाति के इतिहास में "क्रमिक विकास" के सिध्दांत को अमान्य करार देता है।

शोध से पता चलता है कि स्टोनहेंज लगभग 2,800 ई. पू. से शुरू होकर तीन प्रमुख चरणों में निर्मित हुआ था। दूसरे शब्दों में, उसके निर्माण का इतिहास कोई 5,000 वर्ष पीछे जाता है। इमारत के प्रारंभिक चरण में खाई, टीले और कब्रों का खोदा जाना शामिल था। दूसरे चरण में, जगह के केंद्र के इर्दगिर्द दो घेरों में कोई 80 नीले पत्थर स्थापित किये गये और इसके बाहर हील पत्थर खड़ा किया गया। कालांतर में, लगातार चौखटें रखते हुए भीमकाय सारसेन के पत्थरों का बाह्य घेरा निर्मित किया गया। इस स्मारक की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता उसमें प्रयोग में लाये गये नीले पत्थर हैं, क्योंकि इस प्रकार के पत्थरों का आसपास में कोई स्रोत नहीं है। इन पत्थरों को कोई 380 कि.मी. (240 मील) दूर

स्थित प्रेस्ली की पहाड़ियों से ढोकर उस जगह पर लाया गया। अगर यह सच है जैसा कि विकासवादी दावा करते हैं कि उस समय के लोग आदिम अवस्थाओं में जीवनयापन कर रहे थे और उनके पास सिर्फ लकड़ी और पत्थर के औजार ही होते थे तो वे इन पत्थरों को इस क्षेत्र में उस जगह पर कैसे ले जा सकते थे जहां आज स्टोनहेंज स्थित हैं? इस प्रश्न का उत्तार उस परिदृश्य के द्वारा नहीं दिया जा सकता जो कि महज कल्पना की उड़ान का फल है।

शोधकर्ताओं के एक समूह ने उन उपकरणों को पुनर्निमित करके नीले पत्थरों की स्टोनहेंज तक ढुलाई करने की कोशिश की जिनके बारे में समझा जाता है कि उनका उस समय उपयोग होता था। इस काम को करने के लिए उन्होंने लकड़ी के क्रैंकों का प्रयोग किया, लट्ठों का बेड़ा बनाया जो कि तीन बेड़ों को एक साथ करके अपने आकार का पत्थर ला सके, लकड़ी के बल्लों को उपयोग में लाकर बेड़े को धारा में उतारा और फिर आखिर में अनगढ़ ढंग से निर्मित पहियों को प्रयोग में लाकर पत्थरों को पहाड़ियों पर पहुंचाने का प्रयास किया। लेकिन उनका प्रयास फलीभूत न हो सका। यह तो महज यह स्थापित करने के लिए किये गये प्रयोगों में से बस एक प्रयोग था कि नीले पत्थरों को किस प्रकार से उस जगह पर पहुंचाया गया होगा जहां पर आज स्टोनहेंज स्थित है। और भी बहुतेरे प्रयोग हुए और शोधकर्ताओं ने यह समझने का प्रयास किया कि उस समय के लोगों ने ढुलाई के लिए किन तरीकों को काम में लाया होगा। फिर इस प्रकार के प्रयासों में से कोई भी प्रयास सफलता के निकट नहीं पहुंच पाया क्योंकि वे सभी इस गलत मान्यता से प्रस्थान कर रहे थे कि स्टोनहेंज को निर्मित करने वाले लोगों की संस्कृति पिछड़ी हुई थी और वे केवल पत्थर और लकड़ी के बने अनगढ़ औजारों का ही प्रयोग करते थे।

एक और नुक्ता जिस पर जोर दिये जाने की आवश्यकता है यह है कि प्रश्नाधीन प्रयोगों को वर्तमान समय की प्रौद्योगिकी का लाभ मिला। उन्होंने नौसेना के जहाज के यार्डों में निर्मित विभिन्न मॉडलों का प्रयोग किया, अत्याधुनिक कारखानों में निर्मित रस्सियों को काम में लिया और विस्तृत योजनाएं बनायीं तथा आकलन किये। यह सब करने के बावजूद उन्हें कोई सकारात्मक परिणाम हासिल नहीं हुए। लेकिन, कोई 5,000 हजार वर्ष पहले रहने वाले लोगों ने कई टन वजनी इन पत्थरों की ढुलाई की और उनकी ठीक-ठीक भौगोलिक स्थितियों की गणना करके उन्हें एक घेरे में व्यवस्थित किया। साफ है कि यह सब उन्होंने लकड़ी और पत्थर से निर्मित अनगढ़ औजारों से नहीं किया। स्टोनहेंज और दूसरे बहुत से मेगालिथों का निर्माण ऐसी किसी प्रौद्योगिकी को काम में लाकर किया गया था जिनके बारे में आज हम अनुमान भी नहीं लगा सकते।

**तियाहुअनाको के शहर के विस्मयकारी अवशेष**

बोलिविया और पेरू के बीच समुद्र तल से लगभग 4,000 मीटर (13,000 फीट) ऊपर एंडीज पहाड़ियों पर स्थित तिआहुअनाको शहर हैरत में डालने वाले अवशेषों से भरा है जो सैलानियों को चकित कर देते हैं। इस क्षेत्र को दक्षिण अमेरिका ही नहीं बल्कि समूचे विश्व में पुरातात्विक आश्चर्य के रूप में देखा जाता है।

तिआहुअनाको में एक सर्वाधिक आश्चर्य में डालने वाला अवशेष वह कैलेंडर है जो विषुव, मौसम और प्रत्येक घंटे चंद्रमा की स्थिति और उसकी गतियों को दर्शाता है। यह कैलेंडर इस बात का एक साक्ष्य है कि वहां पर रहने वाले लोगों के पास अत्यधिक उन्नत प्रौद्योगिकी थी। आश्चर्य में डालने वाले तिआहुअनाको के दूसरे अवशेषों में पत्थर के बड़े-बड़े ब्लॉकों से निर्मित स्मारक आते हैं, जिनमें से कुछ का वजन 100 टन तक है।

रीडर्स डाइजेस्ट का एक लेखक लिखता है, "...आज के बेहतरीन इंजीनियर अभी भी स्वयं से पूछते हैं कि क्या वे उस तरह की बड़ी-बड़ी चट्टानों को काटकर इतने ऊपर पहुंचा सकते हैं जिस तरह की चट्टानों का प्रयोग शहर को निर्मित करने में हुआ है। भीमकाय चट्टानें ऐसे नजर आती हैं मानो उन्हें काटने के लिए डाई का प्रयोग किया गया हो ..."[41]

उदाहरण के लिए, शहर की दीवारें 60 टन वजनी ब्लॉकों को कोई 100 टन वजनी बलुआ पत्थर के दूसरे ब्लॉकों के ऊपर रखकर निर्मित की गयी हैं। इन दीवारों के निर्माण के लिए पत्थरों का जिस प्रकार से इस्तेमाल किया गया है उसके लिए जबर्दस्त विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। सटीक लकीरों के साथ विशालकाय चौकोर ब्लॉकों को एक दूसरे के साथ जोड़ा गया। 10 टन वजनी ब्लॉकों में अढ़ाई मीटर (8 फीट) लंबे छेद किये गये। अवशेषों के कुछ हिस्सों में 1.8 मीटर (6 फीट) लंबी और आधा मीटर (डेढ़ फीट) चौड़ी पत्थर की बनी पानी की नालियां हैं। इनमें इतनी व्यवस्था है कि जिसका मुकाबला आज भी मुश्किल से ही किया जा सकता है। इन लोगों के पास अगर उस तरह से प्रौद्योगिकीय साधन नहीं होते तो उनके लिए इन कामों को पूरा करना असंभव रहा होता जैसा कि विकासवादी दावा करते हैं। इसकी वजह यह है कि कथित रूप से आदिम अवस्थाओं में इस तरह के ढांचों में से महज एक ढांचे को खड़ा करने के लिए मनुष्य के जीवनकाल से अधिक का समय चाहिए था। प्रकारांतर से इसका मतलब यह हुआ कि तिआहुअनाको को बनाने में सदियों का समय लगा है, जो कि अकेले ही यह दर्शाता है कि क्रम विकास की अवधारणा गलत है।

तिआहुअनाको में एक सर्वाधिक उल्लेखनीय स्मारक तथाकथित गेट ऑफ द सन है। अकेले ब्लॉक से निर्मित यह तीन मीटर (10 मीटर) ऊंचा और पांच मीटर (16.5) चौड़ा है और इसका वजन अनुमानत: 10 टन से अधिक है। यह गेट विभिन्न नक्काशियों से सज्जित है। इस गेट को बनाने के लिए किन विधियों को प्रयोग में लाया गया इस बारे में कोई जवाब नहीं दिया जा सकता। इस प्रकार के शानदार ढांचे को खड़ा करने के लिए किस प्रकार की प्रौद्योगिकी काम में लायी गयी? किस प्रकार से 10 टन वजनी पत्थर के ब्लॉकों को काटकर निकाला गया होगा और किस तरीके से उन्हें पत्थर की खदानों से ढोकर लाया गया होगा? यह स्पष्ट है कि इन सब कार्यों को उन्नत प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके किया गया होगा न कि अनगढ़ औजारों के जरिये जैसा कि विकासवादी दावा करते हैं।

इसके अलावा जब आप उस क्षेत्र की भौगोलिक दशाओं पर विचार करते हैं जहां पर तिआहुअनाको स्थित है, तो समूची विशिष्टता और भी आश्चर्यजनक आयाम ग्रहण कर लेती है। यह शहर किसी सामान्य बस्ती वाले क्षेत्र से कई किलोमीटर दूर है और कोई 4,000 मीटर (13,000 फीट) ऊंचे पठार पर स्थित है, जहां पर वायुमंडलीय दबाव समुद्र तल के लगभग केवल आधे के बराबर होता है। यहां पर आक्सीजन का अत्यंत कम स्तर मनुष्यों के लिए काम करने को और भी मुश्किल बना देता है। ये तथ्य यह दर्शाते हैं कि विश्व के दूसरे बहुत से क्षेत्रों की तरह यहां भी विगत में उन्नत सभ्यताएं विद्यमान थीं, जो कि इस थीसिस को अमान्य करार देती हैं कि समाजों का विकास हमेशा से ही सरल से जटिल की ओर होता है।

**प्राचीन मिस्र : कला और विज्ञान के संदर्भ में वैभवशाली सभ्यता**

कला और विज्ञान के संदर्भ में मानवजाति द्वारा स्थापित अत्यंत वैभवशाली सभ्यताओं में से एक प्राचीन मिस्री सभ्यता के पास उससे अधिक ज्ञान और अनुभव था जो कि उस स्थिति में संभव न हुआ होता अगर वह किसी आदिम समाज की "उत्तराधिकारी" या निरंतरता हुई होती। भटके और मूर्तिपूजक मिस्रियों के बीच कला की जानकारी रखने वाले यहूदी कारीगर थे। इस कला का उद्गम पैगंबर हजरत

नूह (अ.) और हजरत इब्राहीम (अ.) के समय में हुआ। इन हुनरमंद लोगों ने उस ज्ञान का प्रयोग किया जिसे  उन्होंने पूर्व के पैगंबरों के दिनों से प्राप्त किया था।

मिस्रवासियों की उपलब्धियों को अब भी विश्व के बहुत से भागों में हासिल नहीं किया जा सका है। स्वयं मिस्र समेत एशिया, दक्षिण अमेरिका या अफ्रीका के विभिन्न हिस्सों में विगत सभ्यता के स्तर से ऊपर का जीवन-स्तर अभी भी हासिल नहीं है। विशेषकर, औषधि, शरीर रचना विज्ञान, शहरी नियोजन, वास्तुशिल्प, ललित कलाओं और वस्त्रोद्योग के क्षेत्र में इस प्रकार की शानदार उपलब्धियां हासिल करने वाली प्राचीन मिस्री सभ्यता का आज भी वैज्ञानिकों द्वारा भारी विस्मय और कौतूहल के साथ अध्ययन किया जा रहा है।

**प्राचीन मिस्री चिकित्सा का उद्भव**

प्राचीन मिस्र में चिकित्सकों ने जो उन्नत किस्म का ज्ञान हासिल किया था वह हैरत में डालने वाला है। खुदाई से प्राप्त निष्कर्षों ने पुरातत्वशास्त्रियों को हैरत में डाल दिया, क्योंकि किसी भी इतिहासकार ने एक ऐसी सभ्यता में इस प्रकार की अत्यधिक विकसित प्रौद्योगिकी की अपेक्षा नहीं की थी जो कि 3,000 ई. पू. विद्यमान थी।

ममियों के एक्सरे विश्लेषण से पता चला है कि प्राचीन मिस्र में दिमाग का ऑपरेशन किया जाता था। 43 और तो और इन ऑपरेशनों को अत्यधिक पेशेवर प्रविधियों को काम में लाकर किया जाता था। जब सर्जरी वाली ममी की खोपड़ी का परीक्षण किया जाता है तो यह देखा जा सकता है कि सर्जरी के चीरे बिल्कुल साफ-साफ लगे हैं। वापस जुड़ने वाली खोपड़ी की हड्डियां यह साबित करती हैं कि रोगी इस प्रकार के ऑपरेशनों के बाद लंबे समय तक जीवित रहते थे। [44]

एक दूसरा उदाहरण विभिन्न दवाओं से जुड़ा हुआ है। 19 वीं सदी में प्रतिजैविकों की खोज समेत प्रायोगिक विज्ञान के क्षेत्र में हुई त्वरित प्रगति के चलते चिकित्सा विज्ञान ने खूब प्रगति की। फिर भी "खोज" शब्द पूरी तरह से सटीक नहीं है क्योंकि इनमें से बहुत सी प्रविधियां प्राचीन मिस्र के लोगों को पहले से ही ज्ञात थीं। [45]

विज्ञान और शरीर रचना विज्ञान में मिस्र के लोग कितने आगे थे इसके कुछ बेहद महत्वपूर्ण साक्ष्यों में से वे ममियां हैं जो कि वे अपने पीछे छोड़ गये हैं। ममीकरण की प्रक्रिया में उन्होंने सैकड़ों विभिन्न प्रविधियों का प्रयोग किया, इससे शवों को हजारों वर्षों के लिए सुरक्षित रख दिया गया है। ममीकरण की प्रक्रिया अत्यधिक जटिल है। सबसे पहले मस्तिष्क और मृतक के कुछ आंतरिक अंगों को विशेष उपकरणों को काम में लाकर अलग कर लिया जाता है। प्रक्रिया के अगले चरण में नैट्रोन से शरीर का निर्जलीकरण शामिल है। (नैट्रोन एक खनिज लवण है, मुख्यत: सोडियम क्लोराइड और सोडियम सल्फेट की अल्प मात्राओं के साथ सोडियम बाइकार्बोनेट और सोडियम कार्बोनेट का मिश्रण है।) शरीर के अत्यधिक तरल पदार्थों को घटाने के बाद शरीर की गुहा को लिनेन, बालू या बुरादे से भर दिया जाता है। त्वचा के ऊपर विशेष प्रकार के औषधीय लेप लगाये जाते हैं और फिर उसके ऊपर तरल राल लगायी जाती है ताकि उसे आगे भी संरक्षित किया जा सके। आखिर में शव को लिनेन की पट्टियों से सावधानी के साथ लपेटा जाता था। [46]

शरीर के आकार को बिना क्षति पहुंचाये और मृतक के सभी आंतरिक अंगों को निकालकर किया जाने वाला ममीकरण यह दर्शाता है कि इस काम को अंजाम देने वाले लोगों के पास शरीर रचना विज्ञान का पर्याप्त ज्ञान था और वे विभिन्न अंगों की स्थिति के बारे में जानते थे।

ममीकरण की प्रविधियों के अलावा मिस्रवासियों के पास 5,000 वर्ष पहले अन्य चिकित्सकीय विशेषज्ञताओं की एक पूरी शृंखला थी। उदाहरण के लिए :

- मिस्र में चिकित्सा से जुड़े पुरोहितों ने अपने मंदिरों में बहुत सी बीमारियों का इलाज किया। ठीक आज की भांति मिस्री डॉक्टरों को चिकित्सा के विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञता हासिल थी। प्रत्येक डॉक्टर अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र में सेवा मुहैया कराता था।

- मिस्र में डॉक्टरों के ऊपर राज्य निगरानी रखता था। रोगी अगर उपचार से ठीक नहीं हुआ या मर गया तो राज्य इसके कारणों की जांच करवाता कि ऐसा क्यों हुआ और इस बात का पता लगाता कि क्या डॉक्टर द्वारा काम में लायी गयी उपचार विधि नियमों के अनुरूप थी। अगर उपचार के दौरान हुई किसी प्रकार की भूल का पता चलता तो कानून के ढांचे के भीतर डॉक्टर को दंडित किया जाता।

- प्रत्येक मंदिर में सुसज्जित प्रयोगशाला होती थी जिसमें औषधियां तैयार की जाती थीं और उनका भंडारण होता था।

- औषध विज्ञान और पट्टियों एवं कोम्प्रेसों के क्षेत्र में पहला कदम प्राचीन मिस्र के लोगों ने उठाया था। स्मिथ पैपिरस (जो पूरी तरह से औषधियों से संबंधित है) में इस बात का विवरण दिया गया है कि किस प्रकार से लिनेन की चिपकने वाली पट्टियों को घावों को ढंकने के लिए काम में लाया जाता था। यह बैंडेज बनाने की आदर्श सामग्री है।

- पुरातात्विक अन्वेषणों से मिस्र की चिकित्सकीय परिपाटियों की विस्तृत तस्वीर प्रकट हुई है। इसके अलावा, अपने क्षेत्रों में विशेषज्ञता रखने वाले 100 से अधिक डॉक्टरों के नामों और उपाधियों का पता चला है। कोम ओम्बो के मंदिर की दीवार पर शल्यचिकित्सा में काम आने वाले उपकरणों का बॉक्स रखा है। इस बॉक्स में धातु की कतरनी, सर्जिकल चाकू, चिरनी, सलाई, छोटे हुक और चिमटी रखी हुई है।
- काम में लायी जाने वाली प्रविधियां विविध प्रकार की और तरह-तरह की हैं। फ्रैक्चर और टूट-फूट को सेट किया जाता था, खपच्ची को काम में लाया जाता था और घाव को सिलाई से भरा जाता था। भारी सफलता के साथ उपचार के बाद भरने वाले फ्रैक्चर बहुत-सी ममियों में पाये गये हैं।

- हालांकि ममियों में शल्यक्रिया के घाव के कोई निशान नहीं पाये गये हैं पर स्मिथ पैपिरस में घाव को सीने के 13 हवाले मिलते हैं। इससे संकेत मिलता है कि मिस्र के लोग लिनेन के धागों को काम में लाकर घाव को ठीक प्रकार से सिलने में सक्षम थे। सुइयां बहुत संभव है कि तांबे की बनती रही होंगी।
- मिस्र के डॉक्टर रोगाणुमुक्त घाव और संक्रमित घाव के बीच फर्क करने में सक्षम थे। वे संक्रमित घावों को साफ करने के लिए जंगली बकरे की चर्बी, देवदार के तेल और पिसी हुई मटर के मिश्रण का प्रयोग करते थे।

.

- पेनिसिलिन और प्रतिजैविकों का अपेक्षाकृत अभी हाल में आविष्कार हुआ है। लेकिन, प्राचीन मिस्र के लोगों ने इनके प्रथम जैविक संस्करणों और दूसरे विभिन्न प्रकार के प्रतिजैविकों का प्रयोग किया और विभिन्न प्रकार की बीमारियों के लिए नुस्खे लिखे। [47]

औषधि के क्षेत्र में इस प्रकार की प्रमुख उपलब्धियों के साथ-साथ खुदाई से यह भी पता चला है कि शहरी नियोजन और वास्तुशिल्प जैसे विषयों में मिस्रवासियों की गहरी दिलचस्पी थी।

**प्राचीन मिस्र में विकसित धातुकर्म**

सामान्य अर्थों में धातुकर्म विज्ञान और प्रौद्योगिकी की वह शाखा है जिसके अंतर्गत कच्चे माल का शोधन, धातुओं और उनके यौगिकों को आकार देना और उनका संरक्षण आता है। मिस्र की प्राचीन सभ्यता की गवेषणा करने से पता चलता की तीन से साढ़े तीन हज़ार साल पहले मिस्रियों ने विभिन्न खनिजों और धातुओं, विशेष रूप से सोने, तांबे और लोहे के उत्खनन और उन पर काम करने की कला में महारत हासिल कर ली थी। उनके उन्नत धातुकर्म को देखने से पता चलता है कि मिस्र के लोग अयस्कों का पता लगाने, उनका उत्खन्न करने और उन पर काम के मामले में काफ़ी प्रगति कर चुके थे और रसायनशास्त्र का उनका ज्ञान काफ़ी उन्नत था।

पुरातात्विक शोधों से पता चलता है कि मिस्र के लोग 3400 वर्ष ईसा पूर्व में ही तांबे के अयस्क पर गहन कार्य कर रहे थे और धात्वीय यौगिकों का उत्पादन करते थे। चौथे राजवंश (लगभग 2900 वर्ष ईसा पूर्व) के कार्य काल में उत्खनन संबंधी शोधों और उत्खनन कार्यों की निगरानी अत्यंत उच्च पदों पर आसीन अधिकारी करते थे और उनकी देख- रेख फ़राओ के बेटे करते थे।

तांबे के अलावा प्राचीन मिस्री लोहे का भी बहुतायत उपयोग से करते थे। टिन का इस्तेमाल कांसा बनाने और कोबाल्ट का रंगबिरंगे कांच तैयार करने में किया जाता था। ऐसी धातुएं जो प्राकृतिक रूप से मिस्र में नहीं पायी जाती थीं, दूसरे क्षेत्रों, विशेष रूप से फ़ारस से आयात की जाती थीं।

वे सोने का सबसे ज्यादा उपयोग करते थे और सोना उनका सबसे कीमती धातु था। मिस्र में और आज के सूडान के कुछ इलाक़ों में सोने की सैकड़ों खानों का पता चला है। ईसा पूर्व की चौदहवीं सदी की एक पपाइरस में अपोलिनोपोलिस के पास सोने की एक खान थी जो प्राचीन काल के मिस्रियों की व्यवसायिकता का खुलासा करती है। पेपाइरस किसी खान के पास उसमें काम करने वाले 1,300 मज़दूरों के रहने के लिए बनायी गयी बस्ती होती है। इससे प्राचीन मिस्र में सुनारी और आभूषण निर्माण कला के महत्व का खुलासा हो जाता है। दरअसल, पुरातात्विक खुदाई से मिले सोने के सैकड़ों सजावटी सामान इस बात का संकेत हैं कि प्राचीन काल के मिस्री मंझे हुए खनिक और धातुकर्मी थे। इससे इस तथ्य की भी पुष्टि होती है कि प्राचीन मिस्रियों के पास धातुओं के संस्तरों की शिनाख्त और उनसे धातुओं के उत्खनन, उनके शोधन और मिश्रधातुएं बनाने के लिए उनको मिलाने के लिए आवश्यक ज्ञान, और प्रौद्योगिकी थी।

**प्राचीन मिस्र की शहरी आयोजना और उनका ढांचा**

मिस्र की शुष्क जलवायु ने ऐसे बहुत से संकेतों को अक्षुण्ण रखा है जो इस बात का सुबूत हैं कि मिस्र के प्राचीन काल के शहरों के पास सुविकसित ढांचा था।

उन्नत ढांचे का अर्थ होता है कि जिन लोगों ने उन शहरों का निर्माण किया उनको स्थापत्य कला और अभियांत्रिकी का समुन्नत ज्ञान था। नींव कितनी गहरी खोदी जानी चाहिए, हवा आने- जाने की प्रणाली की योजना कैसे बनायी जानी चाहिए, स्वच्छ और गंदे पानी की निकासी की की व्यवस्था ताकि वे एक-दूसरे में मिल न सकें और दूसरी बहुत- सी चीज़ों पर ध्यान देना होता है। और सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि उनमें से किसी में किसी तरह की चूक नहीं की जा सकती। मिस्रियों के पास ये सारी तकनीकें थीं और उन्होंने अपने पीछे जो इमारतें छोड़ीं वे इसकी पुष्टि करती हैं।

ईसा से तीन हज़ार साल पहले उन्होंने स्थापत्य कला की जिस प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया वह प्रौद्योगिकी  बहुत व्यवसायिक थी उसने ढांचागत समस्याओं और कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया। मिस्र जैसी शुष्क जलवायु के देश के लिए पानी अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। दरअसल, उन्होंने

पानी की समस्या का स्थायी समाधान तलाशा जिसमें पानी- जमा करने की भूमिगत व्यवस्था भी शामिल थी।

फ़ेयूम मरुद्यान की धसकन में पाया गया इस तरह का एक विशाल जलाशय उन्हीं में से एक है। ख़ास- ख़ास क्षेत्रों में जीवन को कायम रखने के लिए मिस्रियों ने कुछ कृत्रिम झीलें भी बनायी थीं। इन छोटी- छोटी झीलों में नील नदी से आकर पानी जमा होता था जिससे मिस्र के मरुस्थल में उन्नत सभ्यता का विकास संभव हुआ। उन्होंने मौजूदा काहिरा शहर के 80 किमी (50 मील) दक्षिण- पश्चिम में एक नहर के जरिये नील नदी से लाकर पानी जमा करने के लिए लेक मोरिस का निर्माण कराया। इस जलाशय के क़रीब बस्तियां बसायी गयी थीं और मंदिर बनवाये गये थे। [48]

मिस्रियों का चिकित्सा, शहरी आयोजना, और अभियांत्रिकी और उनके व्यावहारिक उपयोग का ज्ञान उनकी अनूठी और विकसित सभ्यता का प्रमाण है। उनके तरीकों ने एक बार फिर इस धारणा को ग़लत साबित कर दिया है कि आदिम स्तर से विकास करके सभ्य समाज बनते हैं। उसी देश का एक समाज पांच हज़ार साल पहले जितना विकसित था उसके कितने ही समुदाय आज भी विकास के उन सोपानों तक नहीं पहुंच सके हैं। यह ऐसी चीज़ है जैवविकासवादी प्रगति के अर्थों में जिसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। इसमें दो राय नहीं कि जिस समय मिस्र के लोग विकसित सभ्यता का सुख ले रहे थे, उसी दौर में अफ्रीका और दुनिया के दूसरे कई हिस्सों में बहुत ही पिछड़े समुदाय थे जहां लोग बहुत ही अपरिष्कृत स्थितियों में जी रहे थे। फिर भी उन लोगों में से कोई भी अपने नयन- नक्श में इनसानों से पिछड़ा नहीं था, या किसी में भी कपि जैसे लक्षण नहीं थे। मिस्री और उसी युग में आदिम स्थितियों में जी रहे दूसरे लोग और लाखों- लाख साल पहले मौजूद मानव समुदाय हर लिहाज से उतना ही मानव था जितना आज के इंसान हैं। कुछ समुदाय अपेक्षाकृत विकसित स्थितियों में रहे होंगे और कुछ पिछड़े रहे होंगे लेकिन इससे यह साबित नहीं होता जैसा कि डारविनवादी कहते हैं कि वे कपियों के वंशज हैं या यह कि एक जाति का दूसरी जाति से विकास हुआ है। इस तरह की व्याख्या विज्ञान और विवेक का उल्लंघन करती है।

**वस्त्र के क्षेत्र में प्राचीन मिस्रियों की उपलब्धि**

ढाई हज़ार साल ईसा पूर्व के मिले लिनेन के टुकड़ों को देखने से पता चलता है कि मिस्रियों ने बहुत ही अच्छे किस्म हलों कपड़े बनाये थे- कपड़े और बुनावट, दोनों की दृष्टि से। बहरहाल, सबसे महत्वपूर्ण है उन कपड़ों की बारीक बुनावट। 2500 साल ईसा पूर्व में प्राचीन मिस्री उस किस्म के बारीक़ कपड़े तैयार करते थे जैसे कपड़े आज- कल उन्नत प्रौद्योगिकी की मशीनों से बनते हैं। उन कपड़ों का उपयोग ममियों को ढंकने के लिए किया जाता था। मिस्र के जानकार इन कपड़ों की बारीक बुनावट को देख कर विस्मय विमुग्ध हैं।[46]

उन कपड़ों की बुनावट इतनी बारीक होती है कि रेशम से उनको अलग करने के लिए खुर्दबीन की ज़रूरत पड़ती है। और ये कपड़े आधुनिक युग के यांत्रिक लूमों से बने बेहतरीन से बेहतरीन कपड़ों के समतूल्य हैं।[5] आज भी ये कपड़े अपनी गुणवत्ता के लिए जाने जाते हैं और मिस्र में आज जो कपड़े बनते हैं उनकी ख्याति 2000 वर्ष ईसा पूर्व के बुनकरों की देन है।

**उच्च स्तरीय गणित**

प्राचीन मिस्र में बहुत ही आदिम काल से अंकों का उपयोग होता था। ईसा से 2000 साल पहले की गणितीय समस्याओं का वर्णन करने वाली पपाइरस पायी गयी हैं। जिनका उल्लेख सबसे ज्यादा किया गया है, वे चार दस्तावेज़ हैं काहुन के टुकड़े, और बर्लिन, मास्को और रिंद की पपाइरसें। ये दस्तावेज,

उदाहरण के साथ माप लेने के आधारों का वर्णन करते हैं। मिस्रियों को पता था कि जिन त्रिकोणों की भुजाओं की लंबाइयों का अनुपात 3: 4: 5: होता है वे समकोण त्रिभुज होते हैं और अपने इन ज्ञान का (जिसे आज पाइथागोरस प्रमेय कहा जाता है) उपयोग वे अपने निर्माण कार्यों संबंधी गणना में करते थे।[51]

इसके अलावा मिस्री ग्रहों और तारों का अंतर समझते थे। उन्होंने अपने खगोलशास्त्रीय अध्ययन में उन तारों को भी शामिल किया था जो नंगी आंखों से मुश्किल से देखे जा सकते हैं।

और चूंकि मिस्रियों का जीवन नील पर अवलंबित था इसलिए हर साल आने वाली बाढ़ के समय उन्हें उसका जल स्तर मापना होता था। शासक ने नदी का जलस्तर मापने के लिए नीलोमीटर बनवा रखा था और इस काम के लिए अधिकारियों की नियुक्ति की थी।[52]

**रहस्यों से भरी एक निर्माण प्रौद्योगिकी**

प्राचीन मिस्र में बनी सबसे महत्वपूर्ण इमारतें जिन्हें दर्शक आज भी हैरत भरी नज़रों से देखते हैं वहां के रहस्यमय पिरामिड हैं। उनमें से ग्रेट पिरामिड सबसे भव्य है जिसे पत्थरों से बनी आज तक की दुनिया की सबसे बड़ी इमारत माना जाता है। हेरोडोटस के समय से ही इतिहासकार और पुरातत्ववेत्ता तरह- तरह के मत व्यक्त करते आ रहे हैं कि इन पिरामिडों का निर्माण कैसे किया गया होगा। उनमें से कुछ का कहना है कि इनको बनवाने में गुलामों का इस्तेमाल किया गया था और इसके निर्माण की अलग- अलग तकनीक सुझायी हैं। इन परिकल्पनात्मक तरीक़ों से जो तस्वीर उभर कर सामने आती है वह यह है:

अगर इन पिरामिडों का निर्माण गुलामों ने किया होता तो उनकी तादाद असाधारण रूप से बहुत बड़ी 240,000 के आस- पास होती।

अगर इन पिरामिडों के निर्माण के लिए रपटे बनवाये गये होते तो पिरामिडों के बनने के बाद उनको ढाने में आठ साल लग जाते। डेनमा के सिविल इंजीनियर गार्डे हैंशन का कहना है कि यह धारणा हास्यास्पद है क्योंकि रपटों को गिराये जाने के बाद अनगढ़ छापे बने रह जाते। लेकिन इस तरह के कोई संकेत दिखाई नहीं देते।[53]

यह कहते हुए कि गार्डे हैंशन ने दूसरे सिध्दांतकारों के कम करके आंके गये पहलुओं पर ग़ौर किया है, मुस्तफ़ा गदेला अपनी पुस्तक हिस्टारिकल डिसेप्शन: द अनटोल्ड स्टोरी आफ़ एंशिएंट इजिप्ट में कहते हैं:

जब आप पिरामिड देखने जायें तो इन अलग- अलग आंकड़ों की कल्पना कीजिए: लगभग 4,000 साल खदान मज़दूर हर दिन 330 शिलाखंड तोड़ते हैं। बाढ़ के मौसम में हर दिन 4,000 शिला खंड नील नदी तक ढोकर लाये जाते हैं, नाव से उन्हें नदी के पार लाया जाता है, और गिज़ा के पठार पर रपटे को खीच कर लाया जाता है और कोर में 6।67 शिला खंड प्रति मिनट की दर से उन्हें जड़ा जाता है! कल्पना कीजिए, प्रति 60 सेकंड 6।67 शिला खंड![54]

इसके अलावा इस तथ्य पर भी ग़ौर कीजिए कि हर पिरामिड के मुखपट्ट का तल क्षेत्र 5।5 एकड़ है। इस तरह हर पार्श्वफलक की दीवारों की चिनाई के लिए 115,000 केसिंग पत्थरों की ज़रूरत थी। इन पत्थरों की चिनाई इतनी बारीकी से की गयी है कि उनके बीच इतनी भी जगह नहीं है कि उनमें काग़ज चला जाये।[55]

ये कुछ ऐसी आपत्तियां हैं जो बताती हैं कि इक्कीसवीं सदी का विज्ञान और प्रौद्योगिकी अभी तक पिरामिडों के निर्माण की गुत्थी नहीं सुलझा सकी है।

**अगर कोई फिर से पिरामिडों को बनवाना चाहे**

इंडियाना लाइमस्टोन इंस्टीटयूट आफ अमेरिका, इनकारपोरेशन ने चूना पत्थरों की विशेषज्ञ दुनिया भर की जो अग्रणी कंपनी है, 1978 में यह जानने के लिए विचारोत्तेजक अध्ययन कराया कि अगर गिज़ा स्थित ग्रेट पिरामिड जितना बड़ा पिरामिड बनवाना हो तो कितने मज़दूर और किसी तरह की सामग्री लगेगी। कंपनी के अधिकारियों मे यह कहते हुए उसके निर्माण में आने वाली परेशानियों का ब्यौरा दिया कि जितने चूना पत्थर की ज़रूरत होगी उसके उत्पादन, उसे तोड़ने, गढ़ने और उनकी ढुलाई की रफ्तार अगर तीन गुनी कर दी जाये तब भी उसमें 27 साल लग जायेंगे।

ऊपर से यह सारा काम आधुनिक अमरीकी प्रद्योगिकी का इस्तेमाल करके किया जायेगा- दूसरे शब्दों में हाइड्रोलिक हैमरों, क्रिस्टल की नोंक वाली आरियों का इस्तेमाल करके। सिर्फ चूना पत्थर तोड़ने और उसकी ढुलाई के लिए बुहत मेहनत करनी होगी। पिरामिडों के निर्माण के लिए आवश्यक प्रयोगशाला परीक्षण और तैयारियों संबंधी दूसरे काम उसमें शामिल नहीं हैं।[57]

आख़िर प्राचीन मिस्रियों ने इन विशाल पिरामिडों का निर्माण कैसे किया? किस ताक़त से, किस मशीनरी से, किस तकनीकी से चट्टानी छतें सजायी गयीं? किस तरह से चट्टानी मकबरे बनाये गये? निर्माण के दौरान रोशनी की व्यवस्था कैसे की गयी होगी? (पिरामिडों, और मकबरों के भीतर की दीवारों, छतों पर कहीं कोई धब्बा नहीं लगा है, न कहीं कालिख लगी है।) खदानों से पत्थर की शिलाएं कैसे हटायी गयी होंगी और ब्लाकों के अलग- अलग आकृतियों के शिलाखंडों की सतहें कैसे चिकनी की गयी होंगी? कई-कई टन वज़न के इन शिला खंडों की ढुलाई कैसे हुई होगी और उन्हें एक सेंटीमीटर के हज़ारवें भाग तक बिलकुल सटीक तरीक़े से कैसे बिठाया गया होगा? सवालों की सूची बहुत लंबी हो जायेगी? क्या मानवजाति के इतिहास की जैव विकासवादी ग़लत अवधारणाओं के तहत इन सवालों के ताकि और विवेक सम्मत जवाब दिये जा सकते हैं? कदापि नहीं!

अपनी कला, चिकित्सा पध्दति, और संस्कृति के साथ प्राचीन काल के मिस्रियों ने एक महान सभ्यता को जन्म दिया। उन्होंने जो निर्माण किये, जिन चिकित्सा पध्दतियों का उपयोग किया और उनके पास जो संचित ज्ञान और अनुभव थे वे इसके कुछ सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण हैं। आज के कुछ वैज्ञानिक भी दावा करते हैं कि मिस्रियों ने जिनके लिए इतिहास के विकासवादी सिध्दांत के तहत पिरामिडों का निर्माण अत्यंत कठिन रहा होगा, जो काम किये, दरअसल वे काम किन्हीं असाधारण आगंतुकों ने किये थे।

दरअसल, इस तरह के दावे नितांत अताकि और असंगत हैं। फिर भी विकासवादी इनकी ओट लेते हैं क्योंकि उनकी सारी शाब्दिक गोलंदाजी इसकी बेहतर व्याख्या करने में असमर्थ है। जब विकासवादी महसूस करते हैं कि वे संयोग से या काल्पनिक जैवविकासवादी प्रक्रिया के तहत कोई व्याख्या नहीं कर सकते तो वे तुरंत 'आसमान से उतरे आगंतुकों' की धारणा की ओट ले लेते हैं। दरअसल उन्होंने यह हास्यस्पद धारणा तब दी जब उन्हें लगा कि कोशिका के नाभिक में पाया जाने वाला डीएनए और जीवन की पहली मौलिक रचनात्मक इकाई प्रोटीन इतनी जटिल और असाधारण रचना है कि संयोगिक तौर पर निर्जीव पदार्थों से उसका सृजन नहीं हो सकता था। और इसलिए, अंतरिक्ष से आये आगंतुक पहले सजीव प्राणी को धरती पर ले आये होंगे और यहीं छोड़ गये होंगे। यह हास्यास्पद दावा उस निराशाजनक स्थिति की कहानी कहता है जिसमें विकासवादी खुद को पाते हैं।

प्राचीन मिस्री सभ्यता और इतिहास की दूसरी तमाम सभ्यताओं को ऐसे लोगों ने जन्म दिया जो विवेकवान और दृढ़ इच्छाशक्ति के लोग थे। आज हम ईसा से 3000 साल पुरानी शिल्प कृतियां देखकर विस्मय विमुग्ध हो जाते हैं और इस क्षेत्र के वैज्ञानिक और विशेषज्ञ इस बात को लेकर बहसें करते हैं कि ये शिल्पकृतियां बनी कैसे होंगी। लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि पांच हज़ार साल पुरानी सभ्यताओं की जड़ें और पीछे जाती हैं। इसका आशय यह कि बिलकुल अनादिकाल में कोई आदिम, अर्ध्द पशुवत, बोलने में अक्षम और पूरी तरह शिकार पर आश्रित मानव नहीं रहते थे, जैसा कि इतिहास के विकास के सिध्दांतकार दावा करते हैं। जब पहले इनसान को सिरजा गया था तभी से इनसान मेधा, सौंदर्य बोध, समझदारी, चेतनता और नैतिक मूल्य जैसे तमाम मानवीय विशेषताओं का आस्वादन करता आ रहा है जैसे आज का मानव करता है।

**सुमेरियाई सभ्यता**

मानवजाति के इतिहास के कल्पित 'विकासक्रम' की व्याख्या करने हुए डारविनवादी वैज्ञानिक एक और मुद्दे पर सिरे से असहाय हैं: मानव चेतना के मुद्दे पर, जिसके बल- बूते पर मानवजाति ने विश्वविद्यालय बनाये, अस्पताल, फ़ैक्टरियां और राज्यों का निर्माण किया, संगीत की रचना की, ओलंपिक खेलों का आयोजन किया और अंतरिक्ष यात्राएं कीं- संक्षेप में कहें तो उस सबसे महत्वपूर्ण स्वभाव के मामले में जो इनसान को इनसान बनाता है।

विकासवादी दावा करते हैं कि मानव चेतना ने अपनी मौजूदा क्षमता चिंपैंजियों से भिन्न दिशा में अपना विकास करके प्राप्त की, जो हमारे तथाकथित सबसे क़रीबी जीवित सगे-सहोदर हैं। चेतना के विकास क्रम में आयी कथित छलांगों के लिए वे मस्तिष्क में होने वाले बेतरतीब परिवर्तनों और औजार बनाने की कुशलता के सुधारात्मक प्रभावों को ज़िम्मेदार मानते हैं। आप प्राय: इस तरह के दावे टीवी पर दिखायी जाने वाली टिप्पणियों, पत्र- पत्रिकाओं में छपे लेखों में देखते- पढ़ते होंगे जिनमें कपिमानवों के बारे में बड़ी-बड़ी बातें बतायी जाती हैं जिन्होंने पहले-पहले पत्थरों से चाकू और फिर नेज़े बनाने की कला सीखी। लेकिन यह कुत्सा प्रचार सही नहीं है। हालांकि वे ऐसे दृश्यलेख प्रस्तुत करने के प्रयास करते हैं जिन्हें वे वैज्ञानिक दृश्यलेख कहते हैं, लेकिन वस्तुत: वे डाविनवादी पूर्व धारणाओं पर आधारित और पूरी तरह अवैज्ञानिक हैं। सब से महत्व पूर्ण बात यह है कि मानव चेतना का मोल कम करके उसे द्रव्य करार नहीं दिया जा सकता। पदार्थवाद की असारता का अनुलेखन करते समय यह अकेला तथ्य चेतना के विकास से संबंधित दावों को पूरी तरह खोखला साबित कर देता है।

विकासवादी दावा करते हैं। कि चेतना का विकास हुआ है। लेकिन उनके पास इस तथ्य के भावन का कोई साधन नहीं है कि आदिम प्रज्ञा किस स्तर की रही होगी और न कथित विकास प्रक्रिया की स्थितियों की अनुक्रिया ही तैयार कर सके हैं। विकासवादी होने के बावज़ूद विकासवादी सामग्री के लिए मशहूर पत्रिका नेचर के संपादक हेनरी गी, स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करते हैं कि ये दावे अपनी मूल प्रकृति में अवैज्ञानिक हैं।

मसलन, कहा जाता है कि मानवजाति का विकास अंग-संचालन, मस्तिष्क के आकार, और हाथ और आंख के बीच समन्वय में सुधार से हुआ है जिसकी वजह से आग जलाने, औजारों के उत्पादन और भाषा के उपयोग जैसी तकनीकी उपलब्धियां हासिल हुईं। लेकिन इस तरह के दृश्यलेख व्यक्तिपरक हैं। उन्हें प्रयोगों की कसौटी पर कभी कसा नहीं जा सकता इसलिए वे अवैज्ञानिक हैं। उनका प्रचलन वैज्ञानिक कसौटी पर नहीं बल्कि उनकी साग्रह और सधिकार अभिव्यक्ति पर आधारित है। [16]

अवैज्ञानिक होने के साथ- साथ इस तरह के दृश्यलेख ताकि दृष्टि से अमान्य हैं। विकासवादी दावा करते हैं कि प्रज्ञा बुध्दि या विचार शक्ति की बदौलत जो संभवत: विकासक्रम में विकसित हुई, औजारों के इस्तेमाल की क्षमता विकसित हुई, जिसकी वजह से प्रज्ञा या बुध्दि विकसित हुई। फिर भी इस तरह का विकास तभी संभव है जब मानव प्रज्ञा पहले से मौजूद हो। इस आधार पर भी यह सवाल अनुत्तरित ही रह जाता है। कि विकास क्रम में पहले प्रौद्योगिकी विकसित हुई या चेतना।

डार्विनवाद के सबसे कारगर आलोचक फ़िलिप जानसन इस विषय में लिखते हैं:

ऐसा सिध्दांत जो खुद ही चेतना का उत्पाद है उस चेतना की कभी भी सटीक व्याख्या नहीं कर सकता जिसने उस सिध्दांत को जन्म दिया है। परम सत्यों का शोध करने वाली महान वैज्ञानिक चेतना की पुष्टि तभी तक हो सकती है जब तक हम चेतना को प्रदत्त चीज़ मानते हैं। लेकिन जैसे ही हम चेतना को उसके अपने अविष्कारों के उत्पाद के रूप देखने लगते हैं खुद को आइने जड़े ऐसे हाल में खड़ा पाते हैं जिससे निकलने का कोई मार्ग नहीं होता। [62]

इस तथ्य के मद्देनज़र कि डारविनवादी खुद अपनी चेतना की व्याख्या करने में अक्षम हैं, वे मानव संस्कृति और सामाजिक इतिहास की बाबत जो दावे करते हैं वे दावे अपने- आप अमान्य हो जाते हैं। दरअसल, अभी तक हमने जिन तथ्यों, निष्कर्षों की समीक्षा की है वे तथ्य और निष्कर्ष डारविनवादियों के 'इतिहास के विकास' संबंधी दावों को पूरी तरह बेमानी करार दे देते हैं।

विकासवादियों के दावों के विपरीत मानवजाति का इतिहास ऐसे प्रमाणों से भरा पड़ा है कि प्राचीन काल के लोगों के पास उससे कहीं बहुत विकसित तकनीकियां और सभ्यताएं थीं जितना कि समझा जाता है। उन्होंने अपने पीछे जो शिल्पकृतियां छोड़ी हैं वे उनके हज़ारों बरसों के संचित ज्ञान का प्रमाण हैं।

**सुमेरियाई: एक उन्नत सभ्यता**

यूनानी भाषा में मेसोपोटामिया का अर्थ होता है 'नदियों के बीच में'। यह दुनिया का सबसे उर्वर क्षेत्र है। इसकी उर्वरता ने इसे महान सभ्यता का उदगम बना दिया है।

इन भूभागों के दक्षिण के लोगों का एक समूह, उस इलाक़े के लोग जो आज कुवैत और उत्तरी सऊदी अरब के नाम से जाना जाता है, दूसरे समुदायों से अलग भाषा बोलते थे, शहरों में रहते थे, क़ानूनी ढांचे पर आधारित राजतंत्र से शासित थे और लिखना जानते थे। ये सुमेरियाई थे जिन्होंने 3000 साल ईसा पूर्व से बड़े-बड़े नगर राज्यों की स्थापना करके तेज़ी से विकास किया और बड़ी तादाद में लोगों को अपने अधिकार में कर लिया। [63]

आगे चलकर सुमेरियाई एक्काडियाइयों से हार गये और उनकी दासता स्वीकार कर ली। बहरहाल, सुमेरियाई संस्कृति, धर्म, कला, क़ानून, राज्य प्रणाली और साहित्य अपना कर एक्काडियाइयों ने उस सभ्यता को मेसोपोटामिया में अक्षुण्ण रखा।

अपने दौर में सुमेरियाइयों ने प्रौद्योगिकी से कला तक और क़ानून से साहित्य तक हर क्षेत्र में उल्लेखनीय विकास किया। उनका व्यापार और अर्थव्यवस्था अत्यंत सुगठित थी। कांसे के काम, पहिये वाले वाहन, नावें, प्रतिभाएं, और स्मरणीय इमारतें उनके द्रुत विकास का प्रमाण हैं जो आज भी जीवित हैं। इसके अलावा सुमेरियाई कई हस्तकलाएं जानते थे जो अब नहीं बची हैं। ऊन की बुनाई और रंगाई जो मेसोपोटामियाई शहरों का नियमित होने वाला महत्वपूर्ण जिन्स था, उनकी विकसित कनिष्ठ कलाओं का उदाहरण है। [64]

सुमेरियाइयों का सामाजिक ढांचा भी उन्नत था। उनकी राजव्यवस्था राजतंत्रीय थी जिसमें पुरोहित शासक अधिकारियों की मदद से शासन करता था। फ़सल की कटाई के बाद ये अधिकारी उसे जनता के बीच बांटते थे और खेतों में जाकर उनकी निगरानी करते थे। नौकरशाही सुमेरियाई प्रशासनिक तंत्र का आधार था। धर्माधिकारी हर इलाक़े के प्रति ज़िम्मेदार होता था और उनके बीच खाद्यान्न का समान वितरण सुनिश्चित कराता था, ख़ास तौर से शहरों में। धर्माधिकारी के कार्यों का अभिलेख तैयार किया जाता था और उसे अभिलेखागार में रखा जाता था।

हमारे समय से पांच हज़ार साल पहले के सुमेरियाइयों का सामाजिक, कलात्मक, वैज्ञानिक, आर्थिक जीवन विकासवादियों के आदिम से विकसित जीवन की ओर प्रयाण के मानक से पूरी तरह अलग था। सुमेरियाइयों की महान सभ्यता न सिर्फ अपने समय से काफी आगे थी बल्कि बहुत से समुदायों की तुलना में हमारे समय के भी आगे थी। इस स्तर के सांस्कृतिक विकास को मानव जीति के विकासवादी दावों के आधार पर व्याख्यायित नहीं किया जा सकता- इस आधार पर कि उन्होंने पहले कपिवत नयन- नक्श, घुरघुराहटों से मुक्ति पायी, सामाजिक हुए, जानवर पालना, और उसके बाद खेती करना सीखा। यह स्पष्ट है कि इतिहास के हर काल में मानव जाति अपनी सारी बुध्दि, क्षमताओं और रुचियों के साथ हमेशा मानव थी। गुफ़ाओं में आग के सामने बैठे, पत्थरों के अनगढ़ औजार बनाते कपिमानवों की विकासवादियों की बहुतायत से दर्शायी छवियां पूरी तरह काल्पनिक और तमाम ऐतिहासिक, पुरातात्विक और वैज्ञानिक प्रमाणों के विरोधाभासी हैं।

**सुमेरियाई विज्ञान**

सुमेरियाइयों की अपनी अंक प्रणाली थी। आज की आधार - 10 (दशमलव) प्रणाली की जगह उन्होंने 60 अंकों (षाष्टिक) गणितीय प्रणाली की रचना की थी। उनकी इस प्रणाली का आज के हमारे युग में भी महत्वपूर्ण स्थान है, इस मामले में कि एक घंटे में 60 मिनट, एक मिनट में साठ सेकंड और वृत्त में 360 अंश होते हैं। इन्हीं कारणों से सुमेरियाई, जिनके गणितीय ज्ञान ने ज्यामितीय और बीजगणितीय सूत्र दिये, आधुनिक गणित के संस्थापक माने जाते हैं।

इसके अलावा, सुमेरियाइयों का खगोल शास्त्रीय ज्ञान और वर्षों की गणना काफ़ी उन्नत थी। उनके महीने और दिन लगभग हमारे जैसे ही थे। सुमेरियाई कैलेंडर का, जिसके एक साल में 12 महीने होते थे, प्राचीन मिस्री, यूनानी और बहुत- से सामी समाज भी उपयोग करते थे। इस कैलेंडर के अनुसार साल में दो ऋतुएं होती थीं- ग्रीष्म और शीत ऋतु। गर्मी की शुरुआत वसंतविषुव और सर्दी की शुरुआत शरतकालीन विषुव से होता था। [65]

सुमेरियाई मीनारों से, जिन्हें 'जिगुरेटें' कहते थे, नवमंडल का भी अध्ययन करते थे और सूर्य और चंद्र ग्रहण की भविष्यवाणी कर सकते थे। इसके बहुत से दस्तावेज़ी सबूत उपलब्ध हैं। अपने खगोलीय आविष्कारों का अभिलेख तैयार करने के लिए उन्होंने बहुत से नक्षत्रों की तालिका बना रखी थी। सूर्य और चांद के अलावा उन्होंने बुध, मिथुन, मंगल, बृहस्पति और शनि ग्रहों का भी अध्ययन किया और उनकी गति दर्ज की। सुमेरियाइयों ने पांच हज़ार साल पहले जो गणनाएं कीं अंतरिक्षयानों से भेजी गयी छवियों से उनकी पुष्टि होती है।

निस्संदेह ये तथ्य इतिहास के विकास के दावों के विरोधाभासी हैं। हम उन सूचनाओं की ओर देख रहें हैं जिन का अविष्कार पांच हज़ार साल पहले हुआ था और जो सूचनाएं हमें विशाल दूरदर्शियों, उन्नत कंप्यूटरों और तरह-तरह की प्रौद्योगिकियों की मदद से अभी हाल में मिली हैं। इन तथ्यों के

मद्देनज़र विकासवादी वैज्ञानिकों को अपनी पुरानी अवधारणाओं को परे रख कर वैज्ञानिक और ऐतिहासिक तथ्यों की रोशनी में काम करना चाहिए। सच्चाई डारविनवादियों के इन दावों को झूठा साबित कर देती है कि सभ्यता हमेशा आदिम से उन्नत की दिशा में विकास करती है। बहुत से सैध्दांतिक प्रतिष्ठान कल्पित विकास प्रक्रिया के तहत मानव विकास का ब्यौरा देने का प्रयास करते हैं। उस मानव के विकास का जो सभ्यताओं की स्थापना करता है, संगीत की रचना करता, अंतरिक्ष का संधान करता है, वैज्ञानिकों के काम का सही तरीक़ा यह है कि वे सैध्दांतिक आधार पर आचारण करने के बजाय प्रयोगों, अनुसंधानों और पर्यवेक्षणों की रोशनी में आचरण करें।

इतिहास के विकास की धारणा को झुठलाने वाली एक और प्राचीन सभ्यता: माया जाति
तक़रीबन तमाम विकासवादी प्रकाशनों में एक चीज़ साझी होती है। लगभग सभी इस काल्पनिक परिदृश्य को दर्शाने के लिए काफ़ी जगह देते हैं कि किसी सजीव प्राणी की ख़ास आंतरिक संरचना या प्रकृति का विकास कैसे हुआ होगा। उल्लेखनीय कारक यह है कि विकासवादी जिन कहानियों के सपने बुनते हैं उन्हें वैज्ञानिक तथ्य के रूप में दर्शाया जाता है। सच्चाई यह है कि ये व्योरे डारविनवादी काल्पनिक कहानियों के सिवा कुछ नहीं होते। विकासवादी ऐसे दृश्यलेख पेश करने के प्रयास करते हैं जिन्हें वह वैज्ञानिक प्रमाण मानते हैं जबकि वे भ्रामक होते हैं और उनकी कोई वैज्ञानिक उपादेयता नहीं होती। और वे कभी भी विकासवादी दावों के प्रमाण नहीं बन सकते।

विकासवादी साहित्यों में इस तरह की एक कहानी जो प्राय: छपती है वह किसी कपिवत प्राणी के इनसान में रूपांतरित होने और एक पिछड़े मानव के क्रमिक रूप से सामाजिक प्राणी बनने की कहानी होती है। उनकी पुष्टि करने वाले कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं हैं फिर भी इस कल्पित आदिम मानव जाति की छवियां इस दृश्यलेख के सबसे जाने पहचाने हिस्से हैं- जिनमें उनको थोड़ा- सा ऊपर उठ कर झुककर चलते, घुरघुराते, पत्थर के अपने अनगढ़ हथियारों से शिकार करते दिखाया जाता है।

इन पुनर्रचनाओं को कल्पना करने और उन पर विश्वास करने के आमंत्रण के रूप में पेश किया जाता है। उनके साथ विकासवादी लोगों को ठोस तथ्यों के आधार पर नहीं बल्कि काल्पनिक अनुमानों के आधार पर यकीन दिलाने की कोशिश करते हैं क्योंकि ये वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होने के बजाय इनके लेखकों के पूर्वागहों और पूर्व परिकल्पनाओं पर आधारित होते हैं।

विकासवादी व्यावसायिक साहित्य में इन कहानियों को परोसने और उनको वैज्ञानिक तथ्य बना कर पेश करने में तनिक भर भी संकोच नहीं करते । हालांकि वे अपने ब्यौरों की त्रुटिपूर्ण प्रकृति से अच्छी तरह परिचित होते हैं। बहरहाल ये दृश्यलेख जिन्हें विकासवादी इतनी बहुतायत से पेश करते हैं, दरअसल विकास के सिध्दांत का प्रमाण नहीं, अटकल भर हैं क्योंकि इस बात के कोई प्रमाण नहीं हैं कि मानव जाति का जन्म कपि जैसे किसी पूर्वज से हुआ है। इसी तरह, कोई भी पुरातात्विक या ऐतिहासिक प्रमाण यह नहीं कहता कि आदिम से उन्नत समाजों का विकास हुआ है। इंसान जब पहली बार अस्तित्व में आया तब से इंसान ही रहा है और इतिहास के विभिन्न कालखंडों में उसने सभ्यताओं और संस्कृतियों का सृजन किया है। माया सभ्यता इसी तरह की सभ्यताओं में से एक है, जिनके अवशेष आज भी कौतूहल जगाते हैं।

ऐतिहासिक स्रोत सफ़ेद लबादे में ढंकी उस ऊंची आकृति का उल्लेख करते हैं जो इस क्षेत्र के समुदायों में आयी। स्मारकों पर अंकित सूचनाओं के अनुसार कुछ समय के लिए एकेश्वरवादी आस्था का प्रसार हुआ जबकि विज्ञान और कला के क्षेत्र में बहुत सारी प्रगति हुई।

**गणित की माहिर मायाजाति**

माया जाति लगभग 1000 साल ईसा पूर्व में मध्य अमरीका में रहती थी- मिस्र, यूनान और मेसोपोटामिया- जैसी विकसित सभयताओं से काफ़ी दूर। खगोल विज्ञान और गणित के क्षेत्र में प्रगति और उनकी जटिल लिखित भाषा माया जाति की सबसे प्रमुख विशेषता है।

समय, खगोलविज्ञान और गणित का माया जाति का ज्ञान उस समय की पश्चिमी दुनिया के मुक़ाबले हज़ारों साल आगे था। मसलन पृथ्वी की वार्षिक गति की उनकी गणना कंप्यूटर का आविष्कार होने से पहले तक की दूसरी तमाम गणनाओं की अपेक्षा सबसे सटीक थी। पश्चिम के गणितज्ञों के शून्य की अवधारणा का आविष्कार करने से हज़ारों साल पहले ही माया जाति शून्य की गणितीय अवधारणा का उपयोग करती थी और अपने समकालीनों के मुक़ाबले ज्यादा उन्नत आकृतियों और चिह्यनों के लिए उसका इस्तेमाल करती थी।

**माया कैलेंडर**

माया के लोग जिस नागरिक कैलेंडर हाब का इस्तेमाल करते थे, उसमें 365 दिन थे। यह उनकी विकसित सभ्यता का एक नतीजा था। वास्तव में वह जानते थे कि एक वर्ष 365 दिनों से जरा लंबा होता है; उनका आकलन 365.242036 दिन का था। ग्रेगोरियन कैलेंडर, जो आज इस्तेमाल होता है, में 365.2425 दिन हैं।[67] जैसा कि आप देख सकते हैं, इन दोनों आंकड़ों में बेहद मामूली अंतर है जो गणित और खगोलशास्त्र के क्षेत्र में उनकी दक्षता का प्रमाण है।

**माया सभ्यता के लोगों का खगोलशास्त्र ज्ञान**

माया के लोगों से जो तीन पुस्तकें हमें मिली हैं उन्हें माया कोडीसेज के रूप में जाना जाता है। उनमें उनके जीवन और खगोलशास्त्र के उनके ज्ञान के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी है। तीन किताबों - मैड्रिड कोडेक्स, पेरिस कोडेक्स और ड्ªस्डेन कोडेक्स - में से अंतिम किताब खगोलशास्त्र के उनके ज्ञान की गहराई दर्शाने के संदर्भ में काफी महत्वपूर्ण है। उनकी लेखन प्रणाली काफी गूढ़ है जिससे 30 प्रतिशत से भी कम ही समझा गया है। लेकिन इतना भी यह दिखाने के लिए काफी है कि वे विज्ञान के किस स्तर तक पहुंचे थे।

उदाहरण के लिए ड्ªसडेन कोडेक्स के पृष्ठ 11 पर शुक्र ग्रह के बारे में जानकारी है। माया के लोगों ने गणना की थी कि शुक्रीय वर्ष 583.92 दिन का होता है और उन्होंने उसे 584 दिन गिना। इसके अलावा उन्होंने ग्रह के हजारों वर्ष के चक्र के रेखाचित्र बनाये थे। कोडेक्स के दो अन्य पृष्ठ मंगल, चार पन्ने बृहस्पति और उसके उपग्रहों तथा आठ पृष्ठ चंद्रमा, बुध और शनि को समर्पित हैं जिनमें सूर्य के इर्दगिर्द इन ग्रहों के केंद्र, एक दूसरे से इनके सबंधों और पृथ्वी के साथ इनके संबंधों के जटिल आकलन हैं।

माया के लोगों का खगोलशास्त्रीय ज्ञान इस कदर सटीक था कि उन्होंने निर्धारित कर लिया था कि शुक्रीय कक्षा से हर 6,000 वर्ष पर एक दिन घटाना होगा। उनके पास ऐसी जानकारी कहां से आई? खगोलशास्त्रियों, खगोल-भौतिक शास्त्रियों और पुरातत्वविदों के लिए यह एक बहस का विषय है। आज, ऐसी जटिल गणनाएं कंप्यूटर प्रौद्योगिकी की सहायता से की जाती हैं। बाहरी अंतरिक्ष के बारे में जानकारी वैज्ञानिक तमाम तकनीकी और विद्युत यंत्रों से सुसज्जित वेधशालाओं में पाते हैं। इसके

बावजूद माया जाति ने अपना ज्ञान वर्तमान प्रौद्योगिकी की ईजाद से सदियों पहले प्राप्त किया। इससे एक बार फिर इस मान्यता खंडित होती है कि समाज ने हमेशा आदिम से से एक विकसित राज्य के रूप में प्रगति की। अतीत के कई समाजों की सभ्यता उतनी ही विकसित थी जितनी कि वर्तमान सभ्यताएं हैं और कई बार तो इससे भी अधिक विकसित थीं। आज के कई समुदायों ने उन स्तरों को नहीं छुआ जहां अतीत के समाज पहुंच चुके हैं। संक्षेप में, सभ्यताएं कभी कभी आगे बढ़ती हैं और कभी कभी पीछे और कभी कभी विकसित और आदिम, दोनों सभ्यताएं एक ही समय उपस्थित रहती हैं।

**प्राचीन माया शहर तिकाल में सड़कों का नेटवर्क**

प्राचीनतम माया शहरों में से एक तिकाल, 8वीं सदी ईसा पूर्व में बसाया गया था। घने जंगल के बीच स्थित इस शहर में पुरातात्विक उत्खनन से घरों, महलों, पिरामिडों, मंदिरों और सभा स्थलों का पता चला है। यह सभी क्षेत्र एक दूसरे से सड़कों से जुड़े हुए हैं। रेडार तस्वीरों से पता चलता है कि शहर के पास एक मुकम्मल जल निकासी प्रणाली के अलावा वृहत सिंचाई प्रणाली भी थी। तिकाल न तो किसी नदी और न ही किसी झील के किनारे स्थित था परंतु शहर दस जलकुंडों का इस्तेमाल करता था।

तिकाल की पांच मुख्य सड़कें जंगल में जाती थीं। पुरातत्वशास्त्री इनका जिक्र नुमाइशी सड़कों के रूप में करते हैं। आकाश से ली गई तस्वीरों से पता चलता हैं कि माया शहरें एक दूसरे से सड़कों के एक नेटवर्क से जुड़े हुए थे जिनकी लंबाई लगभग 300 किलोमीटर (190 मील) थी। यह एक अभियांत्रिकीय कौशल का नमूना थी। सभी सड़कें तोड़ी गई चट्टानों से बनाई गई थीं और इनपर हल्के रंग की एक परत थी। यह सड़कें एकदम सीधी थीं, जैसे रूलर से बनाई गई हों। ये महत्वपूर्ण सवाल बने रह जाते हैं कि सड़क निर्माण के समय मायावासी कैसे इन सड़कों की दिशा निधार्रित कर सके थे। उन्होंने कौन से उपकरण व औजार इस्तेमाल किये गये थे। क्रमिक विकास की मानसिकता से युक्तिसंगत और तार्किक उत्तर नहीं मिलेंगे। क्योंकि हमारे सामने इंजीनियरिंग का अजूबा है, सैकड़ों किलोमीटर लंबे मार्ग, यह बिलकुल साफ है कि यह सड़कें विस्तृत गणनाओं और नापजोख तथा आवश्यक सामग्री व उपकरणों के इस्तेमाल का नतीजा थे।

**मायावासियों के इस्तेमाल में आने वाले दंतचक्र**

माया जाति के क्षेत्रों के शोध से पता चलता है कि वे दन्तचक्र वाले यंत्रों का इस्तेमाल करते थे।
ऊपर दिखाया गया चित्र, माया जाति के प्रमुख शहर कोपान का है और इसका एक प्रमाण है। एक समाज जो दन्तचक्र प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करता है, उसके पास यांत्रिक अभियांत्रिकी का ज्ञान होना आवश्यक है।

इस ज्ञान के बिना दन्तचक्र प्रणाली का उत्पादन करना किसी के लिए भी असंभव है। उदाहरण के लिए, अगर आपको तस्वीर में दिखाई गई प्रणाली विकसित करनी हो तो बिना उचित प्रशिक्षण के आप ऐसी प्रणाली नहीं बना सकते और न ही यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि यह प्रणाली ठीक तरीके से काम करेगी।

मायावासी ऐसा कर पाए। यह उनके ज्ञान के स्तर का एक महत्वपूर्ण सूचक है और सिध्द करता है कि जो अतीत में रहते थे "पिछड़े" नहीं थे जैसा कि विकासवादी दावा करते हैं।

अब तक सिर्फ चंद उदाहरण ही दिये गये हैं जो अतीत में समाजों की तरफ से हासिल सभ्यता के विकसित स्तरों को दर्शाते हैं। यह एक महत्वपूर्ण सच्चाई की तरफ इशारा करते हैं: इतने वर्षों से थोपी गई यह विकासवादी अभिधारणा गलत है कि अतीत में समाज सादा, पिछड़ा और आदिम जीवन जीते

थे। सभ्यता के अलग अलग स्तरों और विभिन्न संस्कृतियों वाले समाज हर युग में रहे हैं; इसके बावजूद किसीने किसी और से क्रमिक विकास नहीं किया। इस तथ्य कि कुछ पिछड़ी सभ्यताओं का 1000 वर्ष पहले अस्तित्व था, इसका यह अर्थ नहीं है कि इतिहास ने क्रमविकास किया या समाजों ने आदिम से अधिक विकसित समाज के रूप में विकास किया। इन पिछड़े समुदायों के साथ ही ऐसे अतिविकसित समाज भी थे जिन्होंने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में काफी विकास किया और गहरी सभ्यताएं विकसित कीं। हां, सांस्कृतिक लेनदेन और अर्जित ज्ञान जो पीढ़ियों के जरिये फैला, उसकी समाजों के विकास में भूमिका हो सकती है। लेकिन यह क्रमिक विकास नहीं है।

अतीत के इन कौमों के उदाहरण देते हुए, अल्लाह हमें कुरान में बताता है कि इनमें से कुछ ने विकसित संस्कृतियों का निर्माण किया था।

क्या उन लोगों ने रूए ज़मीन पर चल फिर कर नहीं देखा कि जो लोग उनसे पहले थे उनका अन्जाम क्या हुआ (हालाँकि) वह लोग कुवत (शान और उम्र सब) में और ज़मीन पर अपनी निशानियाँ (यादगारें इमारतें) वग़ैरह छोड़ जाने में भी उनसे कहीं बढ़ चढ़ के थे तो ख़ुदा ने उनके गुनाहों की वजह से उनकी ले दे की, और ख़ुदा (के ग़ज़ब से) उनका कोई बचाने वाला भी न था .... (सूरा गफीर: 21)

तो क्या ये लोग रूए ज़मीन पर चले फिरे नहीं, तो देखते कि जो लोग इनसे पहले थे उनका क्या अंजाम हुआ, जो उनसे (तादाद में) कहीं ज्यादा थे और क़ूवत और ज़मीन पर (अपनी) निशानियाँ (यादगारें) छोड़ने में भी कहीं बढ़ चढ़ कर थे तो जो कुछ उन लोगों ने किया कराया था उनके कुछ भी काम न आया ... (सुरा गफीर: 82)

ग़रज़ कितनी बस्तियाँ हैं कि हम ने उन्हें बरबाद कर दिया और वह सरकश थीं पस वह अपनी छतों पर ढही पड़ी हैं और कितने बेकार (उजड़े कुएँ और कितने) मज़बूत बड़े-बड़े ऊँचे महल (वीरान हो गए) (सूरा अल-हज: 45)

कुरान की इन बातों का समर्थन पुरातत्वशास्त्रियों की खोज से होता है। पुरातात्विक खोजों और स्थलों जहां अतीत में समुदाय रहते थे, की जब जांच की जाती है तो यह देखा जा सकता है कि तब के कई समाजों का कुछ वर्तमान समाजों से ऊंचा स्तर था और उन्होंने निर्माण प्रौद्योगिकी, खगोलशास्त्र, गणित और दवा के क्षेत्र में बहुत विकास किया था। इससे एक बार फिर डारविन का इतिहासों और समाजों के क्रमिक विकास का मिथक टूटता है।

**भाषा के क्रमविकास में गतिरोध**

मानव जाति के इतिहास के क्रमविकास के मिथक के वर्णन करने के क्रम में  विकासवादी अनेक गंभीर समस्याओं से दोचार होते हैं। उनमें से एक यह है कि  मानव चेतना का उदय कैसे होता है। एक दूसरी चिंता बोली की उत्पत्ति की है जो अन्य जीवित प्राणियों से मानव जाति को भिन्न करने वाली विशिष्टता है।

जब हम बोलते हैं, तो भला हो भाषा का, हम अपने विचारों को शक्ल देने में, और उन्हें एक ऐसे तरीके से अभिव्यक्त करने में समर्थ होते हैं जिसे दूसरा पक्ष समझ सकता है। हालांकि इसके लिए होंटों, गले और जीभ की मांसपेशियों को बहुत ही विशेषीकृत रूप में हिलाने-डुलाने की आवश्यकता होती है, हम इससे ज्यादा अवगत नहीं हैं। हम "सिर्फ" बोलना चाहते हैं। ध्वनियां, अक्षर और शब्द करीब 100 विभिन्न मांसपेशियों के सामंजस्य के साथ सिकुड़ने और फैलने से उभरते हैं और दुसरों के बोधयोग्य वाक्यों का निर्माण कर्ता, कर्म, सर्वनाम जैसे व्याकरणीय तत्वों के उचित विन्यासों एवं क्रमों से होता है।

यह तथ्य कि हम इस तरह की क्षमता का उपयोग करने की "इच्छा" से ज्यादा कुछ नहीं करते, यह स्पष्ट रूप से दिखाता है कि बोली महज ऐसी कोई क्षमता नहीं है जिसका उद्भव अनिवार्य जैविक संरचनाओं से होता हो।

बोलने की मानवीय क्षमता एक अधिकाधिक जटिल परिघटना है जिसकी व्याख्या काल्पनिक आवश्यकताओं या किसी विकासवादी प्रक्रिया के संदर्भों में की जा सकती हो। गहन शोध एवं अनुसंधान के बावजूद, विकासवादी ऐसा कोई साक्ष्य पेश करने में नाकाम रहे कि बोलने जैसी एक अधिकाधिक जटिल क्षमता का क्रमविकास प्राणियों जैसे सरल ध्वनियों से हुई है। पेनसिल्विनिया यूनिवर्सिटी के डेविड परमैक ने इस नाकामी को पूरी तरह उजागर कर दिया जब वह कहते हैं, "मानव भाषा क्रमविकास के सिध्दांत के लिए एक उलझन है..." [68]

सुप्रसिध्द भाषावैज्ञानिक डेरेक बिकर्टन ने इस "उलझन" के कारणों का सार-संकलन किया है।

"क्या भाषा सीधे तौर पर कुछ मानवपूर्व विशेषताओं से आई है? नहीं। क्या यह प्राणियों के बीच के संचार के किसी रूप से मिलता है? नहीं... गहन प्रशिक्षण के बावजूद, कोई नर वानर अभी तक वाक्यविन्यास का प्राथमिक रूप भी ग्रहण नहीं कर पाया है...कैसे शब्द उभरते हैं, कैसे वाक्यविन्यास उभरता है लेकिन ये समस्याएं भाषा के क्रमविकास में निहित है।" [69]

इस धरती की सभी भाषा जटिल है, और विकासवादी भी यह कल्पना करने में सक्षम नहीं है कि इस तरह की जटिलता क्रमिक रूप से कैसे आई। विकासवादी जैववैज्ञानिक रिचर्ड डाकिन्स के अनुसार सभी भाषाएं - सबसे आदिम मानी जानी वाली आदिवासी भाषाएं भी - बेहद जटिल हैं।

मेरा स्पष्ट उदाहरण भाषा है। कोई नहीं जानता कैसे इसकी शुरुआत हुई...उतनी ही अस्पष्ट है अर्थविज्ञान की उत्पत्ति; शब्दों और उनके अर्थों की...इस दुनिया की तमाम हजारों भाषाएं बहुत ही जटिल हैं। मैं इस समझ के प्रति पूर्वग्रह से ग्रस्त हूं कि यह क्रमिक है, लेकिन यह साफ नहीं है कि ऐसा इन्हें होना था। कुछ लोग सोचते हैं कि इसकी शुरुआत अचानक हो गई, किसी विशेष स्थान पर किसी खास समय पर किसी एक प्रतिभाशाली व्यक्ति द्वारा कमोबेश इसका अन्वेषण किया गया। [70]
एरिजोना स्टेट युनिवर्सिटी के दो विकासवादी अनुसंधानकर्ता, डब्ल्यू. के. विलियम्स और जे. वेकफील्ड इस विषय पर कहते हैं:

भाषाई क्रमविकास के मध्यवर्ती चरणों के बारे में साक्ष्यों की कमी के बावजूद विकल्पों को स्वीकार करना कठिन है। अगर कुछ प्रजाति-केन्द्रित विशेषताएं टुकड़ों-टुकड़ों में विकसित नहीं हुई है तो ऐसा प्रतीत होता है कि इसके उद्भव की व्याख्या करने के लिए दो ही रास्ते हैं। या तो इसे किसी अब भी खोजी जानी वाली शक्ति, संभवत: दैविक हस्तक्षेप के द्वारा पेश किया गया है या फिर यह प्रजातियों के विकास में किसी अपेक्षाकृत आकस्मिक परिवर्तन, संभवत: किसी प्रकार के स्वत:स्फूर्त एवं व्यापक उत्परिवर्तन का नतीजा हो सकता है...लेकिन इस तरह के उत्परिवर्तन की आकस्मिक प्रकृति इस व्याख्या को शंकाप्रद बनाता प्रतीत होता है। जैसा कि इंगित किया जा चुका है (पिंकर एंव ब्लूम, 1990), उत्परिवर्तन से इस तरह की जटिल और भाषा जैसे कार्यभार के लिए उपयुक्त व्यवस्था की उत्पत्ति की संभावना अत्यंत क्षीण है। [71]

भाषा विज्ञान के प्रोफेसर नोआम चोम्स्की ने बोलने की क्षमता की जटिलता पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं:

मैंने अभी तक भाषा के उत्पादन के बारे में कुछ नहीं कहा है। कारण यह है कि इसके बारे में रूचि की बात करने के लिए बहुत कम है। बाहरी पहलुओं को छोड़ कर, यह रहस्य बना हुआ है। [72]

उन लोगों के लिए बोलने की क्षमता की उत्पत्ति पूरी तरह साफ है जो विकासवादी अवधारणाओं के अंदर कैद नहीं हैं। यह अल्लाह है जो यह क्षमता इंसान को अता फरमाता है। अल्लाह आदमी में बोलने की सलाहियत अता फरमाता है जैसा कि कुरान की आयत में नाजिल किया गया है:

"...वह जवाब देंगे कि जिस ख़ुदा ने हर चीज़ को गोया (बोलने की ताकत अता) किया उसने हमको भी (अपनी कुदरत से) गोया किया।" (सूरा फुसिलात: 21)
जिस तरह विकासवादी बोलने की क्षमता देने वाली जैविक संरचनाओं की उत्पत्ति की व्याख्या करने में असक्षम है, उसी तरह वे उस चेतना की उत्पत्ति की व्याख्या करने में भी असक्षम हैं। मानव चेतना और भाषा की जटिलता दिखाती है कि भाषा का सृजन अल्लाह ने किया।

**सच्चे मजहब का वजूद इतिहास की शुरुआत से है**

इतिहास और समाज की उत्पत्ति एवं क्रमविकास के छलावा को बढ़ावा देने वालों की एक और गलती यह है कि वह दावा करते हैं कि मजहब - समाज के उच्चतम मूल्य - का भी क्रमविकास हुआ है। यह दावा 19वीं सदी में पेश किया गया और भौतिकवादियों तथा अनिश्वरवादियों ने उसका जबरदस्त बचाव किया। लेकिन इसकी पुष्टि करने वाला कोई पुरातात्विक साक्ष्य नहीं है और यह कयास आराई के दायरे में बना है।

इस दावा के समर्थन में कोई चीज नहीं है कि आदिम युग में मानव तथाकथित "आदिम" कबायली एवं बहु ईश्वरवादी धर्मों को मानते थे, और सच्चा मजहब - हजरत आदम (अ.) के वक्त से पूरी इंसानियत के लिए पेश किया गया और एक अल्लाह की मान्यता पर आधारित मजहब बाद में आया। कुछ विकासवादी इस दावे को एक ऐतिहासिक हकीकत के रूप में परोसने की कोशिश करते हैं, लेकिन उन्हें सख्त गलतफहमी है। जैसे जैविक क्रम विकास का डारविन का सिध्दांत एक छलावा है, उसी तरह धार्मिक क्रमविकास का सिध्दांत भी जिसने उससे प्रेरणा ग्रहण की है।

**कैसे "धर्मों के क्रमविकास" की गलती हुई?**

करीब डेढ़ सदी पहले, जब डारविन की प्रजातियों की उत्पत्ति अपने पहले संस्करण में थी, क्रमविकास के विचार को भौतिकवादियों और नास्तिकों का समर्थन मिला। उस काल के कुछ चिंतकों की समझ बनी कि मानव इतिहास की हरेक घटना की व्याख्या क्रमविकास से की जा सकती है। उनका कहना था कि हरेक चीज की शुरुआत तथाकथित एक बुनियादी आदिम चरण से हुई और ज्यादा मुकम्मल शक्ल पाने के लिए उनका विकास हुआ।

यह गलती अनेक क्षेत्रों में दोहराई गई। मसलन, अर्थशास्त्र के दायरे में माक्र्सवाद का दावा है कि इस तरह का विकास अपरिहार्य था और यह कि तमाम लजोग अंतत: साम्यवाद अपनाएंगे। अनुभव ने दिखाया कि यह सिर्फ एक सपना रहा और माक्सर्वाद के दावे ने हकीकत को प्रतिबिंबित नहीं किया।

मनोविज्ञान के क्षेत्र में, सिग्मंड फ्रायड ने कहा कि मानव एक बेहद क्रमविकसित प्रजाति है, लेकिन मनोवैज्ञानिक रूप से उसकी क्रियाएं अब भी उसी नोदन से प्रेरित है जिनसे उसके आदिम पूर्वजन प्रेरित

थे। मनोवैज्ञानिक शोध ने वैज्ञानिक रूप से इस बड़ी त्रुटि का खंडन किया है और दिखाया है कि फ्रायडवाद की बुनियादी परिकल्पनाओं का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।

इसी तरह समाजशास्त्र, नृविज्ञान और इतिहास भी उत्पत्ति एवं क्रमविकास के सिध्दांत से प्रभावित रहे हैं, लेकिन पिछली सदी के दौरान की खोजों से मिली सूचनाओं ने दिखाया कि इन प्रभावों के नतीजे विपरीत रहे हैं।

इन विकासवादी सिध्दांतों की समान विशेषता अल्लाह पर किसी आस्था का उनका विरोध है। यह धर्म के क्रम विकास के गलत विचार के पीछे का दार्शनिक आधार है। इस त्रुटि के अग्रणी प्रणेता हरबर्ट स्पेंसर के गलत दावों के अनुसार प्रारंभिक मानवों का कोई धर्म नहीं था। धर्म के "क्रमविकास" के छलावे का समर्थन करने वाले दूसरे नृविज्ञानी दूसरी अवधारणा पेश करते हैं। कुछ का कहना है कि धर्म का स्रोत जीववाद (प्रकृति में दिव्य आत्मा का गुणारोपण) में है; दूसरों की समझ है कि यह टोटेमवाद (किसी प्रतीक पुरूष, समूह या वस्तु की पूजा) से उभरा है। एक अन्य नृविज्ञानी ई. बी. टेलर का मानना है कि धर्म का विकास जीववाद से मनुष्यवाद (पूर्वज पूजा), बहुईश्वरवाद (अनेक भगवान में आस्था) और अंत में एकेश्वरवाद में हुआ है।

इस सिध्दांत को निरीश्वरवादीनृविज्ञानियों ने 19वीं सदी में पेश किया और तब से इसे जिंदा रखा गया है और विभिन्न परिदृश्यों में पेश किया गया है। लेकिन यह एक छलावा से ज्यादा कुछ नहीं है। जैसा कि पुरातात्विक और ऐतिहासिक साक्ष्य दिखाते हैं, इन वैज्ञानिकों की परिकल्पना के विपरीत आदिम काल से एक एकेश्वरवादी धर्म रहा है जिसे अल्लाह ने अपने पैगंबरों के मार्फत मानव पर नाजिल किया है। लेकिन उसके साथ ही, सच्चे मजहब के साथ हमेशा भिन्न और गलत और भटकी आस्थाएं बनी रहीं। जिस तरह आज ऐसे लोग हैं जो मानते हैं कि अल्लाह एक और बस एक है और उसके नाजिल किए गए मजहब के मुताबिक जिंदगी गुजारते हैं, उसी तरह वे लोग भी हैं जो गलत तरीके से लकड़ियों और पत्थरों की, या शैतान की, या अपने पुर्खों और उसके साथ ही विभिन्न आत्माओं, जानवरों, सूरज, चांद या सितारों की पूजा करते हैं। और उनमें से बहुत से लोग पिछड़े नहीं हैं, बल्कि इसके विपरीत बहुत ही आधुनिक हालात में रहते हैं।

समूचे इतिहास में ऐसे लोग रहे हैं जिन्होंने अल्लाह के नाजिल सच्चे मजहब की पैरवी नहीं की है और उसके नैतिक मूल्यों को खत्म करने की कोशिश की है। कुरान में अल्लाह कुछ ऐसे लोगों के बारे में बताता है जो उन्हें नाजिल किए गए सच्चे मजहब में अंधविश्वासों का घालमेल करना चाहते थे और जिन्होंने इसमें फेरबदल किया और इसे तबाह किया।

पस वाए हो उन लोगों पर जो अपने हाथ से किताब लिखते हैं फिर (लोगों से कहते फिरते) हैं कि ये खुदा के यहाँ से (आई) है ताकि उसके ज़रिये से थोड़ी सी क़ीमत (दुनियावी फ़ायदा) हासिल करें पस अफसोस है उनपर कि उनके हाथों ने लिखा और फिर अफसोस है उनपर कि वह ऐसी कमाई करते हैं (सूरा अल बक्र: 79)

यही कारण है कि इस दौरान ऐसे कुछ लोग रहे जो अल्लाह के वजूद और वहदत (एकात्मकता) में यकीन रखते थे और उसके हुक्म को मानते थे, लेकिन उन्होंने सच्चे मजहब को त्याग दिया। इस तरह सच्चे मजहब से इतर विश्वास और तरीके अमल में आ गए। दूसरे शब्दों में, कुछ लोगों ने जो अवधारणाएं पेश की, उसके विपरीत कभी धार्मिक क्रमविकास की कोई प्रक्रिया नहीं रही; बल्कि कुछ विशेष समय पर सच्चे मजहब को तोड़ा-मरोड़ा गया जिसके परिणाम स्वरूप एक इतर विश्वास उभरा।

**सच्चे मजहब में फेरबदल**

बीसवीं सदी में धर्मों की उत्पत्ति पर महत्वपूर्ण शोध किया गया है। भला हो उसका कि यह साफ हुआ कि धर्मों के क्रमविकास के दावों में कोई वैज्ञानिक मूल्य नहीं है, और यह कि इस तरह के दावे महज काल्पनिक परिदृश्य हैं। एंड्रियू लांग और विल्हेम श्मिड्ट जैसे अग्रणी नृविज्ञानियों के विश्व धर्मों के शोध ने दिखाया है कि धर्मों का क्रमविकास नहीं हुआ है; इसके विपरीत, कभी कभी वे विकृतियों से गुजरे हैं। श्मिड्ट के शोध के नतीजे ऐंथ्रोपोस पत्रिका में प्रकाशित हुए।

खास कर 1900-1935 के बीच हुए शोधों ने दिखाया कि धर्मों के क्रमविकास के दावे पूरी तरह गलत हैं। इसने बहुत से नृविज्ञानियों को अपने विकासवादी विचारों को त्यागने के लिए प्रेरित किया। लेकिन इन वैज्ञानिक एवं ऐतिहासिक तथ्यों के बावजूद कुछ रैडिकल निरीश्वरवादी इस परिदृश्य का बचाव करना जारी रखे हैं।

**मिस्र एवं मेसोपोटैमिया की पुरातात्विक खोजें**

मेसोपोटैमिया का मैदानी इलाका प्राचीण मिस्र की सभ्यता से बहुत दूर नहीं है और "सभ्यताओं का पालना" कहलाता है।

इन इलाकों के पुरातात्विक शोध से सबसे अहम जानकारियां उन समाजों की धार्मिक आस्थाओं के बारे में खोजों से उभरी हैं। शिलालेख हमें अनगिनत अयथार्थ भगवानों की गतिविधियों की जानकारी देते हैं। जैसे जैसे जानकारियां मिली और शोधकर्ताओं ने आंकड़ों की व्याख्या करने के बेहतर तरीके खोजे, इन सभ्यताओं की धार्मिक आस्थाओं के बारे में ब्यौरे उभरने लगे। उनमें से सर्वाधिक रोचक बात यह है कि लोग अयथार्थ देवी-देवताओं में विश्वास करते थे, लेकिन साथ ही एक ईश्वर पर भी यकीन करते थे। ऐतिहासिक साक्ष्य दिखाते हैं कि सच्चा मजहब हमेशा मौजूद रहा। आगे के पन्नों पर यह साबित करने के लिए मेसोपोटैमियाई, मिस्री और यूरोपीय सभ्यताओं के साथ ही एज्टेक, इंका और माया सभ्यताओं की भी जांच पड़ताल की जाएगी कि वे तमाम एक ईश्वर में यकीन रखते थे और वहां पैगंबर गए थे और उन्हें सच्चे मजहब से रुबरु कराया था। पहले शोधकर्ता जिसने खोज की कि बहुईश्वरवाद में शुरू में एकेश्वरवाद था, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के स्टीफन लैंगडोन थे। 1931 में उन्होंने वैज्ञानिक विश्व के सामने अपनी खोज की घोषणा की और कहा कि ये बहुत अप्रत्याशित हैं और पहले के विकासवादी व्याख्याओं के विरूध्द हैं। लैंगडोन ने अपने निष्कर्षों की व्याख्या इस प्रकार की:

...मानव की प्राचीनतम सभ्यता का इतिहास एकेश्वरवाद से चरम बहुईश्वरवाद और खराब आत्माओं में तेज पतन का है। [73]

पांच साल बाद, लैंगडोन ने द स्कॉटमैन में अपनी बात फिर कही:

साक्ष्य निस्संदेहपूवर्क एक मूल एकेश्वरवाद की तरफ इंगित करते हैं, प्राचीनतम शामी लोगों के शिलालेख और साहित्यिक अवशेष भी ... एकेश्वरवाद इंगित करते हैं, और इब्रानी एवं अन्य शामी धर्मों की टोटेमवादी उत्पत्ति अब पूरी तरह खारिज है।[74]

तीन हजार ईसा पूर्व के सुमेरियाई शहर का स्थल आधुनिक तेल अस्मर की खुदाई से जो निष्कर्ष उभरे हैं वे लैंगडोन के विचारों का पूरी तरह समर्थन करते हैं। खुदाई निदेशक हेनरी फ्रैंकफोर्ट ने यह आधिकारिक रिपोर्ट दी है:

अपने ज्यादा ठोस नतीजों के अतिरिक्त हमारी खुदाइयों ने एक अनूठा तथ्य स्थापित किया है जिसपर बेबीलोनियाई धर्मों के छात्रों को अब से ध्यान देना होगा। अपनी श्रेष्ठ जानकारी में हमने पहली बार अपनी सामाजिक परिदृश्य में मुकम्मल धार्मिक सामग्री पाई।

हमारे पास मंदिर से और उस मंदिर में उपासना करने वालों के घरों से बराबर मात्रा में मिले साक्ष्य हैं। इस तरह हम निष्कर्ष निकालने में सक्षम हैं, जो अकेले खोजों के अध्ययन से संभव नहीं हो पाता।

मिसाल के तौर पर, हमने बेलनाकार मुहरों पर चित्रण, जो आम तौर पर विभिन्न देवताओं से जुड़े होते हैं, को एक सुसंगत तस्वीर में फिट किया जा सकता है जिसमें इस मंदिर में पूजा किए जाने वाला एक एकल भगवान केन्द्रीय रूप धारण करता है। इस लिए ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्राथमिक काल में उसके विभिन्न पहलुओं को सुमेरियाई-अक्कादियाई देवकुल में अलग देवताओं के रूप में नहीं माना जाता था। [75]

फ्रैंकफोर्ट की खोजों ने इस महत्वपूर्ण तथ्य को उजागर किया कि कैसे अंधविश्वासी बहुईश्वरवादी प्रणाली वजूद में आती है। धर्मों के क्रमविकास के सिध्दांत का दावा है कि बहुईश्वरवाद का उद्भव उस समय होता है जब लोग प्रकृति की शक्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाली खराब आत्माओं की पूजा शुरू करते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। एक कालखंड में, लोगों ने एक ईश्वर के विभिन्न निरूपणों की अलग अलग समझ विकसित कर ली, जिसने अंतत: उन्हें एक ईश्वर की आस्था से भटकाया। एक अल्लाह के विभिन्न निरूपण अनेक की आस्था में तब्दील हो गए।

लैंगडोन के सुमेरियाई तख्तियों की व्याख्या से पहले फ्रेड्रिक डेलिट्ज्श नामक एक अन्य शोधकर्ता ने वैसी ही खोज की थी। उसने पाया कि बेबीलोनियाई देवकूल के अनेक देवी-देवता मरदुक के विभिन्न खुबियों से अवक्रमित हुए हैं। शोध ने दिखाया है कि मरदुक में आस्था एक कालखंड में एक अल्लाह में यकीन में विकृति का नतीजा है।

एकल देवता मरदुक के कई नाम थे। वह निनिब, या "शक्तियों का मालिक," नरगाल या "जंग का देवता," बेल या "प्रभुत्व वाला," नेबो या "पैगंबरों का स्वामी," सिन या "रात में उजाला करने वाला," शमश या "हर उस चीज का स्वामी जो उचित है" और अड्डू या "बारिश का देवता" कहलाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि एक कालखंड में मरदुक के ये निरूपण उससे अलग हो गए और विभिन्न देवताओं को मिल गए। उसी तरह, लोगों की कल्पना के नतीजे में सूर्य-देवता या चंद्र-देवता जैसे अयथार्थ देवता वजूद में आ गए। मरदुक के साथ इस अयथार्थ देवता पर आस्था दिखाती है कि यह आस्था प्रणाली वास्तव में एक ईश्वर पर यकीन में विकृति से पैदा हुई।

हम प्राचीन मिस्र में इस तरह की विकृति के अंश देख सकते हैं। शोधकर्ताओं ने खोज की है कि प्राचीन मिस्रवासी सबसे पहले एकेश्वरवादी थे, लेकिन बाद में उन्होंने इस प्रणाली को खत्म कर दिया और इसे नक्षत्र-पूजा या सूर्य-पूजा में बदल दिया। एम दी रूज लिखते हैं:

यह निर्विवाद रूप से सही है कि मिस्री धर्म के उदात्ततर हिस्से विकास की या अपरिष्कृत के उन्मूलन की किसी प्रक्रिया के अपेक्षाकृत बाद के नतीजे हैं। उदात्ततर हिस्से वास्तव में प्राचीन हैं; और गैर-ईसाई

या ईसाई यूनानी और लातीनी लेखकों को मिस्री धर्म के जिस अंतिम चरण की जानकारी है, वह बेहद अपरिष्कृत और सर्वाधिक भ्रष्ट है। [76]

नृविज्ञानी सर फ्लिंडर्स पेट्री कहते हैं कि अंधवश्विासी बहुईश्वरवादी आस्था एक एकल ईश्वर में आस्था की क्रमिक विकृति से उभरती है। इसके अतिरिक्त वह कहते हैं कि विकृति की यह प्रक्रिया अतीत के समाजों की तरह आज के समाज में भी देखी जा सकती है।

प्राचीन धर्मों और धर्मविज्ञान में बहुत भिन्न वर्ग के देवता हैं। कुछ जातियां, मसलन आधुनिक हिंदू, देवी-देवताओं की प्रचुरता में खुश होते हैं जिनमें निरंतर वृध्दि होती रहती है। दूसरे ... महान देवताओं की पूजा की कोशिश नहीं करते, लेकिन अनेक जीववादी आत्माओं और शैतानों से निबटते हैं...

अगर किसी देवता की अवधारणा इस तरह की किसी आत्मा पूजा का महज एक क्रमविकास होता, हम एक ईश्वर की पूजा के पहले अनेक देवताओं की पूजा पाते...हम वास्तव में जो पाते हैं वह इसके विपरीत है, एकेश्वरवाद धर्मविज्ञान में खोजा जा सकने वाला पहला चरण है...

जहां कहीं हम बहुईश्वरवाद को उसके आदिमतम चरणों में खोज सकते हैं, हम पाते हैं कि यह एकेश्वरवाद के संयोग का एक नतीजा है...[77]

**भारत में अंधविश्वासी बहुईश्वरवाद की उत्पत्ति**

हालांकि भारतीय संस्कृति उतनी प्राचीन नहीं है जितनी पश्चिम एशियाई संस्कृतियां, यह उन प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है जो बरकरार हैं।

भारतीय मूर्तिपूजा में तथाकथित देवी-देवताओं की संख्या वस्तुत: अंतहीन है। लंबे अध्ययन के बाद एंड्रियू लैंग ने निर्धारित किया कि भारत में बहुईश्वरवादी धर्म पश्चिम एशिया की तरह की ही प्रक्रिया के नतीजे में उभरे हैं।

भारतीय धार्मिक आस्थाओं के बारे में लिखते हुए एडवर्ड मैकक्रैडी कहते हैं कि ऋगवेद दिखाता है कि प्राचीन काल में देवी-देवताओं को सिर्फ एक एकल दिव्य शक्ति के विविध अविर्भाव के रूप में लिया जाता था। [78]

ऋगवेद के श्लोकों में हम एक एकल ईश्वर की एकेश्वरवादी विचार के विध्वंस के अंश देख सकते हैं। इस क्षेत्र के एक अन्य शोधकर्ता मैक्स मूलर इससे सहमति जताते हैं कि पहले एक ईश्वर में आस्था थी:
एक एकेश्वरवाद था जो वेद में बहुईश्वरवाद से पहले आता था; और असंख्य देवताओं के आह्वान में भी एक और असीम ईश्वर का स्मरण गुजरते हुए बादलों से छिपे नीले आकाश की तरह मूर्तिपूजर्क मुहावरों को कुहासा तोड़ता है। [79]

इससे एक बार फिर या स्पष्ट होता है कि धर्मों का कोई क्रमविकास नहीं हुआ, बल्कि लोगों ने सच्चे मजहब में अयर्थार्थवादी तत्व जोड़ दिए, या कुछ विशेष हुक्म एवं प्रतिबंधों की उपेक्षा की - जिसके नतीजे में अंतत: धार्मिक आस्था में विकृति आई।

**यूरोपीय इतिहास में धर्मों में प्रदूषण**

हम इसी तरह के प्रदूषण ऐतिहासिक यूरोपीय समाजों की आस्थाओं में भी देख सकते हैं। अपनी किताब द रिलिजन ऑफ ग्रीस इन प्रीहिस्टोरिक टाइम्स, एक्सेल डब्ल्यू पर्ससन लिखते हैं:

...वहां बाद में बड़ी संख्या में कमोबेश महत्वपूर्ण हस्तियां विकसित हुईं जो हम यूनानी धार्मिक मिथकों में पाते हैं। मेरे विचार से, उनमें इजाफा बड़ी हद तक मूलत: एक एवं समान देवता के विभिन्न आह्वानकारी नामों पर निर्भर करता है। [80]

इसी तरह के फेरबदल के अंश इटली में भी देखे जा सकते हैं। आईरीन रोजेनवीग नाम एक पुरातत्वदि ने एत्रुस्काई काल के इगुवाइन तालिकाओं पर शोध करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि "देवताओं को विशेषणों से अलग किया जाता है, जो बाद में स्वतंत्र दैविक शक्ति के रूप में उभरते हैं।"[81]

संक्षेप में, पिछली सदी के तमाम नृविज्ञानी एवं पुरातात्विक साक्ष्य इंगित करते हैं कि पूरे इतिहास में समाजों ने पहले एक ईश्वर पर आस्था जताई लेकिन समय गुजरने के साथ इस आस्था में फेरबदल किया। शुरू में लोगों ने अल्लाह पर यकीन किया जिसने शून्य से सभी चीजों का सृजन किया, जो तमाम चीजों को देखता और जानता है और जो तमाम दुनिया का मालिक है। लेकिन समय के साथ हमारे परवरदिगार के इन खिताबों को गलत ढंग से अलग देवता मान लिया गया और लोगों ने इन अयथार्थवादी देवताओं की परस्तीश शुरू कर दी। सच्चा मजहब एक और वाहिद अल्लाह की इबादत है। बहुईश्वरवादी धर्म सच्चे मजहब में फेरबदल से विकसित हुए जिसे हमारे परवरदिगार ने हजरत आदम (अ.) के समय से मानवता पर नाजिल किया।

**खुदा का नाजिल किया गया सच्चा मजहब**

जब हम दुनिया के विभिन्न हिस्सों में समाजों के सांस्कृतिक और धार्मिक मूल्यों पर नजर डालते हैं, हम देखते हैं कि उनमें अनेक चीजें मिलती-जुलती हैं। इन समाजों ने किसी सांस्कृतिक आदान-प्रदान में कोई साझेदारी नहीं की होगी, लेकिन वे फरिश्तों, शैतान और जिन्न में यकीन करते हैं जो उसी आयाम में नहीं रहते जिसमें इंसान रहता है। वे मरने के बाद की जिंदगी में, मिट्टी से इंसान की पैदाइश पर यकीन करते हैं; और उनकी इबादत में अनेक साझे तत्व हैं। मिसाल के तौर पर, नूह की कश्ती का जिक्र प्राचीन सुमेरियाई रिकार्डों में, वेल्श धर्म में, और चीनी शिलालेखों में और प्राचीन लिथुआनियाई धर्म में है।

यह महज एक सबूत है कि एक एकल, सर्वशक्तिमान ईश्वर - जो अल्लाह है, दुनियाओं का स्वामी है - ने धार्मिक नैतिकता नाजिल की। दुनिया भर में संस्कृतियों को धर्मों की शिक्षा दी गई जो उसी एक चरम स्थल से आए और एक अतुलनीय परवरदिगार के वजूद को जाहिर किया। हमारे परवरदिगार ने इतिहास के तमाम काल में उन पैगंबरों के मार्फत खुद को जाहिर किया जिन्हें उसने चुना और उदात्त किया; और उनके मार्फत उस धर्म को नाजिल किया जिसे उसने मानव जाति के लिए चुना। सर्वशक्तिमान अल्लाह की आखिरी किताब कुरान में वह कहता है कि "और हर क़ौम के लिए एक हिदायत करने वाला है " (सूरा अर-राद: 7)। दूसरी आयतों में यह नाजिल किया गया है कि वह तमाम कौमों को चेताने के लिए एक पैगंबर भेजता है:

और हमने किसी बस्ती को बग़ैर उसके (चेतावनी दिए) हलाक़ नहीं किया कि उसके समझाने को (पहले से) डराने वाले (पैग़म्बर भेज दिए) थे और हम ज़ालिम नहीं है (सूरा अश्-शुआरा: 209)
इन पैगंबरों ने हमेशा कौमों को सिखाया कि उन्हें सिर्फ एक अल्लाह पर यकीन करना चाहिए, और उन्हें नेकी पर अमल और बदी से बचना चाहिए। इंसान अल्लाह के इन चुनिंदा पैगंबरों के हुक्म बजा

कर और विरासत के तौर पर छोड़े गए उनकी मुकद्दस किताबों पर अमल कर के ही निजात का रास्ता पा सकते हैं। दुनिया पर करम फरमा कर परवरदिगार ने जो आखिरी पैगंबर भेजा वह पैगंबर हजरत मोहम्मद (स.) हैं और परवरदिगार की अनंतकालीन सुरक्षा में कुरान आखिरी मुकद्दस किताब है जो मानवता के लिए सबसे सच्चा मार्गदर्शक है।

**निष्कर्ष**

**समय-शून्यता के यथार्थ को नकारा नहीं जाना चाहिए**

इस पुस्तक में हमने जिन ऐतिहासिक और पुरातात्विक तथ्यों का परीक्षण किया है वे हमें यह झलकाते हैं कि इतिहास और समाज के विकास के सम्बन्ध में डार्विन द्वारा किए गए दावे मूर्खतापूर्ण हैं और वे वैज्ञानिक रूप से वैध नहीं हैं। फिर भी यदि उन्हें बरकरार रखा गया है तो उसका एकमात्र कारण है भौतिकवाद के ख़ात्मे की चिन्ता। जैसाकि हम जानते हैं, भौतिकवादी लोग सृष्टि की रचना के सत्य को नकारने की ग़लती करते हैं -- यह विश्वास करते हुए कि पदार्थ एक निरपेक्ष सत्व है जो सदा से अस्तित्व में रहा है और अनन्तकाल तक अस्तित्व में बना रहेगा। दूसरे शब्दों में कहें तो उन्होंने पदार्थ का ईश्वरीकरण कर दिया है। (निस्संदेह ईश्वर इन सबसे परे हैं) तथापि, आज विज्ञान इस बात की पुष्टि करने के विन्दु पर पहुंच चुका है कि यह ब्रह्मांड शून्य से अपने अस्तित्व में आया (अर्थात इसकी रचना की गई) और इस बात ने भौतिकवाद और भौतिकतावादी ख़यालों को सहारा देने वाले सिद्धांतों और फलसफ़ों को ख़ारिज करके रख दिया है।

फिर भी, भौतिकतावादियों के ख़याल भले ही वैज्ञानिक प्रमाणों से विरोधाभास दिखा रहे हों परन्तु वे किसी भी कीमत पर यह नहीं मान सकते कि पदार्थ निरपेक्ष नहीं बल्कि 'निर्मित' है। यदि वे एक क्षण के लिए भी अपने अड़ियल पूर्वाग्रह से जरा पीछे हट जाते तो वे सरल सत्य का दर्शन कर पाते और भौतिकवाद ने उनपर जो जादू फूंक मारा है, उससे वे मुक्त हो गए होते। ऐसा करने के लिए इतना ही पर्याप्त होगा कि वे अपनी जड़ जमा चुकी विचारधारा को परे रख दें, वैचारिक कट्टरता से आज़ाद हों और खुले दिमाग से सोचें।

सबसे पहली बात जिस पर उन्हें विचार करना चाहिए वह है समय की अवधारणा की वास्तविक प्रकृति, क्योंकि भौतिकवादी पदार्थ के साथ-साथ समय को भी निरपेक्ष मानकर चलते हैं। इस धोखे में आकर उनमें से कई सत्य को देखने से वंचित रह गए हैं। आधुनिक विज्ञान ने यह साबित किया है कि समय पदार्थ से 'व्युत्पन्न' है और पदार्थ की ही तरह समय को भी शून्य से निर्मित किया गया। इसका अर्थ यह है कि समय का एक आरम्भ-बिन्दु रहा है। साथ ही, विगत शताब्दी में यह भी ज्ञात हुआ कि समय एक सापेक्ष अवधारणा है अर्थात वह एक प्रकार का परिवर्तनशील बोध है, न कि कोई स्थिर और अपरिवर्तनशील सत्व, जैसाकि भौतिकवादी लोग सदियों से मानते चले आ रहे थे।

**समय की अवधारणा की वास्तविक प्रकृति**

हम जिसे "समय" कहते हैं, वह वास्तव में एक तरीका है जिससे हम एक पल की तुलना दूसरे पल से करते हैं। मसलन, जब कोई व्यक्ति किसी चीज को थपथपाता है तो वह एक खास ध्वनि सुनता है। जब वह उसी वस्तु को दुबारा थपथपाता है तो वह एक अन्य ध्वनि सुनता है। यह मानते हुए कि दो ध्वनियों के बीच एक अंतराल है, वह इस अंतराल को "समय" का नाम देता है। परन्तु जब वह दूसरी ध्वनि सुनता है तो उसने जो पहली ध्वनि सुनी थी वह उसके मस्तिष्क में महज एक कल्पना के रूप में अवस्थित होती है, उसके ज़ेहन में एक सूचना मात्र। कोई भी व्यक्ति समय सम्बन्धी अपने बोध का सृजन "वर्तमान" पल की तुलना अपनी स्मृति में सहेजी हुई वस्तु से करके करता है। यदि वह ऐसा बोध न कर सके तो उसे समय का भी बोध नहीं हो सकेगा।

प्रसिद्ध पदार्थ विज्ञानी जूलियन बार्बोर ने समय की परिभाषा इस प्रकार दी है :

**समय और कुछ नहीं बल्कि वस्तुओं की बदलती हुई स्थिति है। पेंडुलम झूलता है और घड़ी के कांटे आगे बढ़ते हैं. 82**

संक्षेप में, समय मस्तिष्क में सहेजी हुई सूचनाओं के तुलनात्मक परिणाम के कारण प्रतीत होता है। यदि आदमी के पास स्मृति नहीं होती तो उसका मस्तिष्क ऐसे विश्लेषण नहीं कर पाता और अत: वह समय का बोध भी विकसित नहीं कर पाता। कोई व्यक्ति अपने आप को तीस साल का इसलिए मान लेता है क्योंकि उसने तीस सालों से सम्बन्धित सूचनाओं को सहेज रखा है। यदि उसकी स्मृति का अस्तित्व नहीं होता तो वह ऐसे किसी गुजरे हुए कालखंड का विचार नहीं कर सकता था और केवल उसी एकमात्र "क्षण" का अनुभव कर पाता जिसमें वह रह रहा है।

**"अतीत" का बोध हमारी स्मृतिओं में संचित सूचना मात्र है**

हमें प्राप्त होने वाले सुझावों के कारण हम यह सोच लेते हैं कि हम अतीत, वर्तमान तथा भविष्य नामक अलग-अलग कालखंडों में जीते हैं। परन्तु हमारे मन में "अतीत" की अवधारणा का एकमात्र कारण (जैसाकि पहले बतलाया गया है) यह है कि हमारी स्मृतिओं में अनेक घटना-क्रम संचित किए गए हैं। उदाहरण के लिए, जब हम प्राथमिक स्कूल मे दाखिल हुए थे उस पल को हम याद कर सकते हैं और इसलिए अतीत की एक घटना के रूप में उसका बोध कर सकते हैं। परन्तु भविष्य की घटनाएं हमारी स्मृतिओं में नहीं होतीं और अत: हम उनकी गिनती ऐसी बातों में करते हैं जिनका अनुभव हम भविष्य की घटनाओं के रूप में नहीं करते। फिर भी, जिस प्रकार हमने अतीत का अनुभव अपने दृष्टिकोण से किया है, वैसे ही हम भविष्य का भी करते हैं परन्तु चूंकि वे घटनाएं अभी हमारी स्मृतिओं में प्रेषित नहीं की गई हैं, हम उन्हें जान नहीं सकते।

यदि ऐसा होता कि ईश्वर आनेवाली घटनाओं को भी हमारी स्मृतिओं में डाल देते तो भविष्य भी हमारे लिए अतीत बन जाता। मसलन, तीस साल का एक आदमी अपने तीस साल की यादों और घटनाओं के बारे में सोच सकता है और अतएव वह यह सोचता है कि उसके पास तीस साल का अतीत है। यदि तीस से लेकर सत्तर सालों तक की आगामी घटनाएं उस व्यक्ति के ज़ेहन में डाली जा सकतीं तो फिर इस तीस साल के व्यक्ति के लिए उसके विगत तीस साल और तीस से लेकर सत्तर साल तक का "भविष्य" अतीत बनकर रह जाता। ऐसी परिस्थिति में अतीत और भविष्य दोनों ही उसके लिए वर्तमान बन जाते और दोनों ही उसके लिए स्पष्ट अनुभव-गम्य बातें हो जातीं।

चूंकि ईश्वर ने एक सुनिश्चित कड़ी के रूप में हमें घटनाओं का बोध करने वाले प्राणी के रूप में रचा है -- मानों समय अतीत से भविष्य की ओर प्रवाहित होने वाला पदार्थ हो -- अतः वे हमें भविष्य के बारे में सूचित नहीं करते और न ही हमारी स्मृति में इस सम्बन्ध में कोई ज़ानकारी भरते हैं। भविष्य हमारी स्मृति में नहीं है परन्तु ईश्वर की अनन्त स्मृति में मनुष्य के सभी अतीत और भविष्य परिव्याप्त हैं। यह मानव जीवन को इस प्रकार देखने के समान है मानों एक चलचित्र की तरह उसे सम्पूर्णता के साथ चित्रित और पूरा कर दिया गया हो। यदि कोई फिल्म की रील को आगे नहीं बढ़ा सके तो वह अपने जीवन को एक के बाद एक गुजरते हुए फ्रेम के रूप में ही देख सकता है। वह इस भ्रमित विचार में पल रहा होता है कि जो फ्रेम वह अभीतक नहीं देख पाया है, वह भविष्य का हिस्सा है।

**दुनिया का इतिहास भी एक सापेक्ष अवधारणा है**

ये सारी सच्चाइयां इतिहास और सामजिक जीवन पर भी पर भी चरितार्थ होती हैं। दुनिया के समाजों और उसके इतिहास के बारे में भी हम समय और स्थान की सीमित अवधारणा के दायरे में ही विचार करते हैं। इतिहास को हम कालखंडों में बांटते हैं और इसका अवलोकन भी अपनी सापेक्ष अवधारणाओं के सन्दर्भ में करते हैं।

जीवित रहने के लिए हम अपनी पांच इन्द्रियों पर आश्रित होते हैं। हम केवल इन्द्रिय-गम्य विषयों का बोध कर पाते हैं और अपनी इन्द्रियों की सीमा-रेखा लांघ पाने में हम कभी सफल नहीं हो सकते। हम जिस समय और स्थान में जी रहे होते हैं, उनका बोध भी इसी तरीके से होता है। यदि इन पांच ज्ञानेन्द्रियों के ज़रिये हमारा मस्तिष्क किसी वस्तु को देख-समझ नहीं पाता तो हम कह देते हैं कि वह वस्तु "गायब" हो गई है। इसी अनुसार, हमारी स्मृतियों में सहेजी हुई तमाम घटनाएं, बिम्ब और अनुभूतियां अभी भी हमारे लिए विद्यमान होती हैं, या यूं कहें कि वे हमारे लिए जीवित होती हैं जबकि जो बातें भुला दी गई हैं उनका कोई अस्तित्व ही नहीं होता। यदि इसे दूसरे ढंग से कहें तो ऐसी वस्तुएं या घटनाएं जो अब हमारे ज़ेहन में नहीं हैं, हमारे लिए बीती बातें हो जाती हैं। सीधे तौर पर कहा जाए तो वे "मर" चुकी हैं, उनका कोई अस्तित्व ही नहीं है।

किन्तु यह केवल मनुष्य की सच्चाई है क्योंकि केवल मनुष्य के पास ही सीमित स्मृति है। दूसरी ओर, ईश्वर की स्मृति हर वस्तु से ऊपर और सर्वश्रेष्ठ है। वह असीम और अनन्त है। परन्तु यहां पर एक बात का उल्लेख करना लाज़िमी है। "ईश्वर की स्मृति" - इस शब्द का प्रयोग यहां केवल स्पष्टीकरण के उद्देश्य से किया गया है। बेशक, यह संभव नहीं है कि ईश्वर की स्मृति और मानवीय स्मृति के बीच कोई तुलना या समरूपता स्थापित की जा सके। निस्संदेह, ईश्वर वह है जिसने शून्य से हर पदार्थ की रचना की है और जो हर किसी के यथार्थ को जानता है -- अंतिम लेखा-जोखा तक।

चूंकि ईश्वर की स्मृति अनन्त है अत: उसमें निहित कुछ भी कभी नष्ट होनेवाला नहीं है। दूसरे शब्दों में, ईश्वर द्वारा रचित कोई भी प्राणी कभी ओझल नहीं होता। कोई भी फूल नहीं मुर्झाता, जल की कोई घूंट समाप्त नहीं होती, किसी भी काल का अंत नहीं होता और और न ही आहार पूर्णत: विनष्ट होते हैं। धूल के एक बादल के रूप में अपने प्रथम आकार में यह ब्रह्मांड ईश्वर की दृष्टि के दायरे में है और इतिहास के प्रत्येक पल उसकी नज़र में वैसे ही विद्यमान हैं जैसेकि वे कभी थे। स्टोनहेंज के पत्थर रखे जा रहे हैं, मिस्र के पिरामिडों का निर्माण हो रहा है, सुमेर के लोग तारों को निरख रहे हैं, निएंडर के जनसमूह अपनी रोज़ी-रोटी कमा रहे हैं, लॅसकोक्स की गुफाओं के भित्ति-चित्र पेंट किए जा रहे हैं, काटल ह्यूक में लोग रह रहे हैं और विश्वयुद्ध का बिगुल बज रहा है। ठीक इसी तरह आज से हजारों साल बाद विकसित होने वाले समाज भी ईश्वर की नज़र में उसी जीवन्तता से मौज़ूद हैं मानों वे अपनी सभ्यता क निर्माण कर रहे हों और अपने जीने के सरंजाम जुटा रहे हों।

जिस क्षण किसी प्राणी या किसी घटना का जन्म होता है उसी क्षण उसकी अनन्तता भी आरंभ हो जाती है। उदाहरण के लिए, जब एक फूल का सृजन होता है तो वस्तुतः मुर्झाना और खत्म हो जाना उसकी नियति नहीं होती। महज़ इस सच्चाई से कि अब वह फूल किसी की संवेदना का अंश नहीं है और किसी के मनो-मस्तिष्क से उसकी स्मृति गायब हो चुकी है, यह मतलब नहीं निकाला जा सकता कि फूल मर चुका है, ओझल हो चुका है। महत्वपूर्ण बात यह है कि ईश्वर की दृष्टि में उसकी अवस्थिति क्या है। इसके अलावा, इस अस्तित्व की तमाम दशाएं -- उसके सृजन के समय से ही -- उसकी ज़िन्दगी और मौत के तमाम पलों के साथ-साथ, ईश्वर की स्मृति में विद्यमान हैं।

**निष्ठापूर्ण विचार**

यह सारा ज्ञान मानव जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण है। और इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह न तो कोई फ़लसफा है, न कोई स्थापित विचारधारा, बल्कि यह ऐसे वैज्ञानिक निष्कर्षों का परिणाम है जिनसे इन्कार कर पाना मुमक़िन नहीं। बहुत संभव है कि बहुतेरे पाठक समय-शून्यता और समय की वास्तविक प्रकृति जैसे इन तथ्यों पर अपने जीवन में बिल्कुल पहली बार विचार कर रहे हों।

परन्तु एक बात का सदा ध्यान रखा जाना चाहिए। कुरान में ईश्वर ने प्रकट किया है कि **"केवल वे जो सच्ची**

**निष्ठा से ईश्वर की ओर उन्मुख होते हैं"** (सूरा क़ाफ: 8), वाक़ई सावधान होते हैं। दूसरे शब्दों में, वे लोग जो सचमुच ईश्वर का मार्गदर्शन चाहते हैं और उसके अनन्त सामर्थ्य और उसकी महानता को समझने के लिए प्रवृत्त होते हैं, वे ही इन व्याख्याओं को समझने के प्रति सचेष्ट होंगे और इन यथार्थों का पूर्ण बोध पाने में समर्थ हो सकेंगे।

कोई व्यक्ति अपने पूरे जीवन-काल भर भौतिकवाद से प्रभावित रह सकता है। इस प्रभाव के कारण, संभव है कि वह खुले दिमाग से इन तथ्यों पर विचार कर पाने का अवसर न पा सके। परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि वह ताउम्र एक भ्रमित जीवन जीता रहे। जो कोई भी सत्य का दर्शन करने वाला है वह भ्रमित रहने का दुराग्रह नहीं पालेगा बल्कि वह अपने अंतःकरण से आती नैतिक आवाज़ को सुनेगा और उसका अनुपालन करेगा। ईश्वर ने कुरान में कहा है कि प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह ऐसा इन्सान बनने से परहेज़ करे जो अपने अंतःकरण में सत्य का आभास पाकर भी उससे दूर भाग निकलता है।

**और उन्होंने धृष्टतापूर्वक तथा गलत ढंग से उन्हें नकार दिया, हालांकि वे उनके बारे में आश्वस्त थे। देखो, यही है भ्रष्टजनों की आख़िरी नियति। (सूरत-अन-नम्ल:14)**

**वे लोग जो सत्य को देखते और मानते हैं, अल्लाह चाहेंगे तो वे इस दुनिया और परलोक में मुक्ति को प्राप्त करेंगे:**
**वह जो सत्य का संवाहक है और वह जो इसे मानता है -- वे ही हैं वे लोग जो बुराइयों से बचते हैं। (सूरत-अज़-ज़ुमार:33)**

484
बीच में : एक गहरे शीशानुमा चट्टान - ऑब्सीडियन - से बना यह औजार 10,000 वर्ष ई.पू. का है। महज़ एक पत्थर से ठोक-पीट कर ऑब्सीडियन को ऐसा आकार दे पाना असंभव ही है।

ऊपर : चम्मच यह दर्शाते हैं कि उस समय के लोग भी "टेबुल मैनर्स" से सुपरिचित थे। इसके अलावा यह इस बात का भी प्रमाण है कि वे लोग कोई आदिम जीवन नहीं जी रहे थे, जैसाकि विकासवादियों का दावा रहा है।

नीचे : 40,000 साल पुरानी यह बांसुरी इस बात का पुख़्ता सबूत है कि आदिम मस्तिष्क वाले बन्दर-मानवों का कभी कोई अस्तित्व था ही नहीं।

485
ऊपर : पत्थर पर की गई यह कढ़ाई 11,000 साल पुरानी है जबकि, विकासवादियों के नज़रिये से, उस समय केवल पत्थर के बने कच्चे औजार ही प्रयोग में थे। परन्तु मात्र एक पत्थर को दूसरे पत्थर पर घिसकर ऐसी कृति नहीं बनाई जा सकती। विकासवादी पत्थर पर इतनी परिपूर्णता के साथ उकेरी गई इन आकृतियों के बारे में कोई तर्कसंगत व्याख्या नहीं दे सकते। ऐसा लगता है कि इन तथा ऐसी ही अन्य कृतियों का सृजन लौह और इस्पात का उपयोग करने वाले बुद्धिमान मानवों ने किया हो।

नीचे : 550,000 साल पुरानी, पत्थर से बनी इस हथ-कुल्हाड़ी को इतनी बारीकी से काटने और आकार देने के लिए और अधिक कठोर धातुओं, जैसे लोहा या इस्पात, का प्रयोग ज़रूर किया गया होगा।

486
**कोई पाषाण-युग था ही नहीं**

विकासवादियों ने जिस कालखंड की तुच्छता उसे "पाषाण-युग" का नाम देकर सिद्ध करना चाहा है, उस समय लोग ईश्वर की आराधना किया करते थे, उन दिव्य संदेशवाहकों के उपदेशों को सुना करते थे जिन्हें उनके पास भेजा गया था, भवन-निर्माण में निरत थे, अपने रसोईघरों मे भोजन पका रहे थे, परिवार के साथ वार्तालाप में तल्लीन थे, पड़ोसियों के घर आया-जाया करते थे, दर्ज़ियों से अपने कपड़े सिलवाते थे, चिकित्सक उनकी देखभाल करते थे, उनकी संगीत में रुचि थी और वे पेन्टिंग भी करते थे, मूर्तियां बनाते थे और -- संक्षेप में कहें तो -- एक सम्पूर्ण सामान्य जीवन जी रहे थे। जैसाकि पुरातात्विक खोज़ों से ज़ाहिर होता है, इतिहास की पूरी समयावधि में तकनीक और संचित ज्ञान में परिवर्तन ज़रूर होते आए हैं परन्तु मनुष्य सदा मनुष्य की तरह ही रहा है।

पत्थरों और सीपियों से बना यह उत्तर-नवपाषाणकालीन नेकलेस इस सत्य को उद्घाटित करता है कि उस समय के लोगों की कलात्मकता और अभिरुचि ही उन्नत नहीं थी बल्कि वे ऐसी आकर्षक वस्तुओं का सृजन करने के लिए आवश्यक तकनीक से भी सुसज्जित थे।

बरतन, टेबुल का एक नमूना और एक चम्मच -- जोकि 7,000 से लेकर 11,000 ई.पू. के बीच के हैं -- उस समय के लोगों के जीवन-स्तर के बारे में महत्वपूर्ण ज़ानकारी देते हैं। विकासवादियों के अनुसार, उस युग के लोगों ने अभी हाल ही में स्थापित जीवन-शैली अपनाई थी और धीरे-धीरे सभ्य हो रहे थे। परन्तु ये पदार्थ दर्शाते हैं कि इन लोगों की संस्कृतियों में शायद ही कोई कमी थी और वे पूर्णत: सुसभ्य जीवन जी रहे थे। जैसी हमारी आज की ज़िन्दगी है, वे भी मेज का उपयोग करते थे, प्लेट में खाते थे, चम्मच और छुरी-कांटों का इस्तेमाल करते थे, मेहमानों को आमंत्रित करके उन्हें अल्पाहार देते थे और इस प्रकार, संक्षेप में, नियमित जीवन जी रहे थे। जब कुल मिलाकर इन तथ्यों की परीक्षा की जाती है तो हम पाते हैं कि अपने कलात्मक बोध, चिकित्सकीय ज्ञान, तकनीकी साधनों और रोज़मर्रा के जीवन के साथ नवपाषाणकाल के लोग पूर्णत: मानवीय जीवन जी रहे थे, उन्हीं लोगों की तरह जो उनसे पहले थे और जो बाद में आए।

487
12,000 साल पुराने बटन
10,000 ई.पू. में प्रयुक्त होने वाले ये हड्डियों के बने बटन यह दर्शाते हैं कि उस समय के लोगों के पास कसे जा सकने वाले वस्त्र थे। जो समाज बटन का उपयोग जानता हो वह सिलाई, वस्त्र-निर्माण और बुनाई जैसे कामों से भी परिचित रहा होगा।

9,000 से 10,00 वर्ष पुराने सुए और टकुए
7,000 से 8,000 वर्ष ईस्वी पूर्व के ये सुए और टकुए, तत्कालीन मानव की जीवन-संस्कृति के बारे में महत्वपूर्ण सबूत पेश करते हैं। यह साफ है कि सुए और टकुए का इस्तेमाल करने वाले लोग पूरी तरह मानवीय जीवन जी रहे होंगे, न कि जानवरों की तरह, जैसाकि विकासवादियों का मत है।

12,000 साल पुराने मनके
पुरातत्वविदों की राय में, लगभग 10,000 ई.पू. के ये पत्थर मनकों के रूप में इस्तेमाल किए जाते थे। ऐसे कठोर पत्थरों में इतनी निपुणता से किए गए एक समान छिद्र खास तौर पर ध्यान दिए जाने योग्य हैं क्योंकि उनमें छेद करने के लिए इस्पात या लोहे से बने औजार ज़रूर इस्तेमाल किया गया होगा।

12,000 साल पुराना ताम्बे का टकुआ
लगभग 10,000 ईस्वी पूर्व वर्ष पुराना यह ताम्बे का टकुआ इस बात का प्रमाण है कि उस समय लोग धातुओं के बारे में जानते थे और उनका खनन भी किया जाता था तथा उन्हें आकार भी दिया जाता था। कच्चा ताम्बा, जोकि ठेठ रूप में स्फटिक या पाउडर की शक्ल में पाया जाता है, पुराने और कठोर पत्थरों में बारीक सिलाई जैसे

रूपाकार में पाया जाता है। कोई भी समाज जोकि ताम्बे का टकुआ बनाया करता था, ज़रूर ही उसने कच्चे ताम्बे की पहचान कर ली थी, पत्थरों के बीच से उसे निकालना जान गया था और ऐसा करने के लिए उसके पास तकनीकी साधन भी थे। इससे स्पष्ट है कि वे हाल के विगत दौर में आदिम नहीं थे, जैसाकि विकासवादियों की राय है।

चित्र में दर्शाई गई बांसुरियां औसतन 15,000 साल पुरानी हैं। साफ है कि दसियों-हजारों साल पूर्व रहने वाले लोग संगीत-संस्कृति की अभिरुचि से सम्पन्न थे।

488

**"पॉलिश्ड पत्थर" का भ्रम**

पुरातात्विक अवशेषों में सबसे ज़्यादा चमत्कृत कर देने वाली पाषाण-निर्मित कृति आज भी मौज़ूद है। पत्थर को ऐसा जटिल और सुनियमित आकार देने के लिए आम तौर पर इस्पात के शक्तिशाली उपकरणों की ज़रूरत होती है। एक पत्थर को दूसरे पत्थर से केवल घिस-रगड़ कर कोई ऐसी बारीक आकृतियां और डिजाइन नहीं बना सकता। ग्रेनाइट जैसे पत्थरों को सही-सही आकार में काटने और उनपर आकृतियां बनाने के लिए तकनीकी अधोसंरचना की ज़रूरत होती है।

पत्थर के कुछ उपकरण तो अभी भी तेज और चमकीले दिखते हैं जोकि सम्यक तरीके से काटने और आकार देने के कारण ही संभव हुआ है। विकासवादी वैज्ञानिकों द्वारा यह वर्णन करना कि वे "पॉलिश्ड पाषाण युग" की कृतियां हैं, सरासर अवैज्ञानिक दावा है। हज़ारों साल तक पॉलिश की चमक बरकरार रहना असंभव ही है। प्रस्तुत पत्थरों की चमक का एकमात्र कारण उनका बहुत ही बारीकी से काटा जाना है न कि यह कि उन्हें पॉलिश किया गया, जैसकि दावा किया जाता है। चमक पत्थर के अन्दर से आ रही है।

चित्र में जो ब्रेसलेट दर्शाए गए हैं, उनमें बाईं ओर का ब्रेसलेट संगमरमर से बना है और दाईं ओर का बॅसाल्ट से। वे 8500 से लेकर 9000 ई.पू. के हैं. विकासवादियों का दावा है कि उस समय केवल पत्थरों से बने औजार प्रयोग में लाए जाते थे। परन्तु बॅसाल्ट और संगमरमर बहुत ही ज़्यादा कठोर पदार्थ होते हैं। उन्हें पलटने तथा गोल आकृतियां देने के लिए अवश्य ही इस्पात के ब्लेड और उपकरण काम में लाए गए होंगे क्योंकि इस्पात के उपकरणों का प्रयोग किए बिना उन्हें काटना और आकार देना असंभव ही है। यदि आप किसी को पत्थर का एक टुकड़ा दे दें और उससे कहें कि अब वह उससे बॅसाल्ट के एक टुकड़े को वैसे ही ब्रेसलेट में बदल दे जैसाकि चित्र में दिखाया गया है तो वह व्यक्ति भला कितना सफ़ल होगा? यह संभव नहीं है कि पत्थर के एक टुकड़े को दूसरे पत्थर पर घिस-रगड़ कर ब्रेसलेट बना लिया जाए। साथ ही, इन कलाकृतियों से यह स्पष्ट रूप से चित्रित होता है कि उन्हें बनाने वाले इन्सान सौंदर्य-बोध से सम्पन्न सुसभ्य लोग थे।

इन चित्रों में ऑबसीडियन, हड्डी, अंकुश तथा पत्थर से बने अन्य पदार्थों से निर्मित औजार दर्शाए गए हैं। स्पष्ट है कि किसी कच्ची सामग्री को पत्थर पर रगड़ के ऐसे सुव्यवस्थित आकार नहीं ढाले जा सकते। कच्चे ढंग से फूंक-फांक करने पर ये बोन टूट जाएंगे और उन्हें मनचाहा आकार नहीं दिया जा सकेगा। इसी तरह, यह भी स्पष्ट है कि ग्रेनाइट और बॅसाल्ट जैसे कठोरतम पत्थरों से बने औजारों से भी तीक्ष्ण धारियां और नुकीले टिप संभव नहीं होंगे। इन पत्थरों को सुनियमित आकार में काटा गया है, जैसे कि फलों के कतरे बनाए गए हों। उनकी चमक उन्हें पॉलिश किए जाने से उत्पन्न नहीं हुई है, जैसाकि विकासवादियों का मत है, वरन उन्हें इतनी बारीकी से आकार दिए जाने के कारण। जिन लोगों ने इन वस्तुओं की रचना की उनके पास अवश्य ही लौह या इस्पात के बने औजार रहे होंगे जिनसे उन पदार्थों को उन्होंने मनचाहा आकार दिया होगा। कठोर पत्थरों के टुकड़ों को इस्पात जैसे कठोरतर पदार्थ का उपयोग करके ही काटा जा सकता है।

489

आप पत्थर से पत्थर पर कढ़ाई नहीं कर सकते

1. लगभग 10,000 ईस्वी पूर्व की पाषाण परतें
2. 11,000 ई.पू. वर्ष पुराने कूटने वाले औजार
3. लावा शीशा (ऑबसीडियन) से बना लगभग 10,000 ई.पू. वर्ष पुराना औजार
4. 11,000 ईस्वी पूर्व निर्मित पत्थर की वस्तुएं
5. कच्चे तांबे (मॅलेकाइट) की परतों के स्पर्श के साथ 9,000 से लेकर 10,000 ई.पू. वर्ष पुरानी पाषाण कलाकृतियां
6. सॉकेटनुमा तथा कील के आकार से मिलती-जुलती 10,000 ई.पू. की एक पाषाण अंतःरचना
7. 10,000 ईस्वी वर्ष पूर्व का एक हथौड़ा

पत्थर के बने ये औजार औसतन 10,000 से लेकर 11,000 ईस्वी पूर्व के हैं। अब आप कल्पना कीजिए कि एक पत्थर को दूसरे पत्थर पर घिस-घास कर आप इनमें से कोई भी एक वस्तु बनाना चाहते हैं, जैसेकि विकासवादियों की राय में उन्हें उस वक्त बनाया गया था। जैसाकि चित्र 4 में दर्शाया गया है, अच्छी तरह सुराख़ बनाने की कोशिश कर लीजिए। अपने हाथ में रखे पत्थर को आप चाहे जितनी बार रगड़ लें, ऐसा परिपूर्ण और बारीक छिद्र बनाने में आप हरगिज़ कामयाब नहीं होंगे। ऐसा करने के लिए आपको ड्रिल मशीन की ज़रूरत होगी।

492
अंधविश्वासपूर्ण विचारों के साथ-साथ इतिहास के हर युग में सच्चा धर्म भी मौज़ूद रहा है। हर युग में सच्चे धर्मानुयायियों ने ईश्वरीय आज्ञा के अनुपालन में अपने आध्यात्मिक कर्तव्यों का पालन किया है।

493
आज भी अंधविश्वास से भरे मूर्तिपूजक लोग हैं, जैसेकि वे अतीत के युगों में थे।

सोलोमन ऐंड द क्वीन शेबा -- कृति: फ्रैंक फ्रैंकेन द्वितीय दि यंगर
म्युज़े दे ब्युक्स - आर्ट्स, क्विंपर, फ्रांस

494
लाखों साल पुराने टुकड़े जिनके बारे में विकासवादी चुप हैं

विकासवाद के सिद्धान्त के अनुसार, सभी जीवित प्राणियों का विकास -- बॅक्टीरिया से लेकर मानव जाति तक -- खास चरणों से गुज़रने के फलस्वरूप हुआ है और इस काल्पनिक श्रृंखला के पूरे होने में लाखों साल का समय लगा है। इस परिदृश्य में, मनुष्य अंतिम सुविकसित प्राणी है और उसने विगत 20,000 सालों में अपना विकास-चक्र पूरा किया है। तथापि, वैज्ञानिक तथ्यों और जीवाश्मों के आकलन से ऐसा एक भी प्रमाण नहीं मिलता कि ऐसा विकास कभी वाक़ई घटित हुआ था। सच्चाई तो यह है कि वे हमें यह बताते हैं कि ऐसा हो ही नहीं सकता।

अन्य प्रकार के तथ्यों में, लाखों वर्ष पूर्व मनुष्य द्वारा प्रयोग में लाए गए कुछ औजार-उपकरण तथा श्रृंगार प्रसाधन की वस्तुएं शामिल हैं। डार्विनवादी अपनी काल्पनिक विकास सारिणी में ऐसे किसी भी मानव प्राणी का अस्तित्व बताने में स्वयं को अक्षम मानते हैं जोकि आज से 50 या 500 लाख वर्ष पूर्व भी रहा करते होंगे -- उस समय जिसके बारे में उनकी राय है कि ट्रायलोबाइट्स के सिवाय धरती पर और कोई भी प्राणी नहीं रहा करता था। वाक़ई! ऐसा कर पाना उनके लिए कठिन ही होगा। ईश्वर ने एक ज़रा सी आज्ञा से मानव को अस्तित्व दिया

- "भव!" और इसी तरह उसने अन्य सभी जीवित प्राणियों की रचना की। अत: आज से 500 लाख वर्ष पूर्व रहने वाले लोगों का अवशेष खोजना हमारे लिए उतना ही संभाव्य है जितना कि उनका जो आज से 100 साल पहले रहा करते थे। ईश्वर, जिसने शून्य से हर वस्तु की रचना की, वह निस्संदेह इतिहास की जिस किसी अवधि में जिस किसी प्राणी की रचना करना चाहे, कर सकता है। यह ईश्वर के लिए वस्तुतः बहुत ही सहज बात है क्योंकि उसकी शक्ति और सामर्थ्य अपार है। परन्तु डार्विनवादी इस सत्य को समझने से चूक जाते हैं। यही कारण है कि उनके पास सृष्टि-रचना के बारे में न तो सारे प्रमाण हैं, न समस्त व्याख्याएं। उन परिदृश्यों को दुहराने के सिवा उनके पास और कोई उपय नहीं है जिन्हें वैज्ञानिक तथ्यों में झुठला दिया गया है। परन्तु हर बीतते दिन के साथ, उत्खननों से प्राप्त हो रहे प्रमाणों से विकासवादी सिद्धान्त की धज्जियां उड़ती जा रही हैं।

यह धातु का गोला दक्षिण अफ्रिका में एक परत से प्राप्त किए गए सैकड़ों गोलों में से एक है और अनुमान है कि यह लाखों साल पुराना है। सावधानीपूर्वक रची गईं इसकी लहराकृतियां किसी प्राकृतिक घटना का परिणाम नहीं हो सकतीं। यह आविष्कार हमें बतलाता है कि धातु का प्रयोग अत्यंत आरंभिक काल से ही होता आ रहा है और यह कि लाखों वर्षों से मनुष्य के पास धातु में लहराकृतियां बनाने की तकनीक मौज़ूद रही है।

१९१२ में, थॉमस (ऑक्लाहोमा) के नगरपालिकीय विद्युत संयंत्र के दो कर्मचारियों ने कोयला लोड करते हुए एक आश्चर्यजनक वस्तु खोज निकाला। उन्होंने कोयले के एक चौरस आकार का टुकड़ा पाया जो इतना बड़ा था कि उसका कोई उपयोग ही नहीं हो सकता था। इसलिए एक कर्मचारी ने उसे तोड़ डाला। ऐसा करते ही, उसके अन्दर उसे लोहे का एक पात्र (बरतन) दिखा। जब उसे हटाया गया तो कोयले के एक टुकड़े में उस पात्र की रूप-रेखा देखने को मिली। कोयले का परीक्षण करने के बाद, बहुत से विशेषज्ञों ने कहा कि यह पात्र या आधान 300 से लेकर 325 मिलियन वर्ष पुराना हो सकता है। यह आविष्कार विकासवादियों के पल्ले नहीं पड़ सकता जिनका मानना है कि लोहे का प्रयोग कोई 1,200 ईसा पूर्व में शुरू हुआ।

'साइंटिफिक अमेरिकन' पत्रिका के 5 जून 1852 के अंक में एक रिपोर्ट प्रकाशित हुआ जोकि लगभग 100,000 वर्ष पुराने धातु के बने पात्र के अवशेष प्राप्त होने के सम्बन्ध में था। घंटे के आकार का यह पात्र ज़स्ते या किसी यौगिक धातु के रंग का लग रहा था और इसमें चांदी का भी अच्छा-खासा अंश मिलाया गया था। इसकी सतह पर पुष्प-गुच्छों, लताओं और मालाओं की बहुत ही बारीक आकृतियां उकेरी गई थीं।

अब .. विकासवादी जिनका दावा है कि अत्यंत आरंभिक काल में धातु का प्रयोग ही नहीं होता था, इस आविष्कार के संबन्ध में भला क्या बता सकते हैं? साफ है कि जिन लोगों ने इस कलाकृति का सृजन किया था, उनके पास एक उच्चकोटिक संस्कृति थी -- एक ऐसी संस्कृति जिसे यौगिक धातु बनाने और उनपर नक्काशी करने में महारत हासिल था।

495
यह जूते का तला 213 मिलियन वर्ष पुराने एक चट्टान में जीवाश्म बन चुके रूप में मिला था। लाखों-लाख साल पहले, लोग जूते भी पहनते थे और इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके पास वस्त्र भी थे। वे खान-पान की एक अच्छी-खासी संस्कृति का लुत्फ़ उठा रहे थे और स्वस्थ सामाजिक सम्बन्धों का निर्वाह कर रहे थे। इस जीवाश्म का एकमात्र ज्ञात फोटोग्राफ 1922 में न्यूयॉर्क के एक अखबार में छपा था। ऐसे तमाम आविष्कार जिनसे मानव इतिहास के 'विकास' के दावे का खंडन होता है, विकासवादियों ने या तो उन्हें सबसे छुपाया या फिर उनकी उपेक्षा की।

इस चित्र में दिखाए गए पेस्टल और मोर्टार 1877 में टेबुल पर्वत के नीचे की एक प्राचीन नदी-भूमि से खोज निकाले गए थे। यह नदी-भूमि कम से कम 330 लाख वर्ष पुरानी है और यह साबित कर देती है कि मनुष्य सदा मनुष्य की तरह ही रहा है।

30 लाख साल पुराने फ्लिंट पत्थर के इस टुकड़े पर मानव मुखाकृति से मिलती-जुलती एक आकृति अंकित की गई है। फ्लिंट पर ऐसे सुव्यवस्थित छिद्र बनाना बड़ा ही कठिन है और इसके लिए धातु के बने खास उपकरणों की ज़रूरत होती है। विकासवादी जिस प्रकार की अत्यंत आदिम अवस्था का ज़िक्र करते हैं उसमें तो ऐसा किया जा सकना नामुमकिन ही लगता है।

संतों के साथ मॅडोना, कृति: ग्यॉविनी बेलिनी, वेनिस, 1505

499
21वीं सदी -- कोलम्बिया

21वीं सदी में भी बहुत से समाज अंधविश्वासों में पल रहे हैं। वे ऐसे झूठे देवी-देवताओं की उपासना करते हैं जो उनका न तो कुछ बना सकते हैं न बिगाड़ सकते हैं। यहां हम देख रहे हैं कि 'आर्हुआको' इंडियन्स का मुखिया उनपर हुए एक आक्रमण के बाद एक कर्मकांड में लगा हुआ है। मुखिया कहता है कि वे पर्वत को प्रसन्न करने के लिए 'प्रकृति की पुराचेतना' का आह्वान करते हैं। (स्टीफन फेरी, "कीपर्स ऑफ द वर्ल्ड", नेशनल ज्योग्राफिक, अक्टूबर 2005)

21वीं सदी -- मियामी, अमेरिका

दुनिया के एक हिस्से में लोग आदिम जीवन जी रहे होते हैं जबकि किसी दूसरे महाद्वीप में लोग आरामदेह गगनचुम्बी इमारतों में .... और वे हवाई जहाजों और सुखद क्रूज़ जलपोतों में सफ़र कर रहे होते हैं। विकासवादियों के दावों के विपरीत, एक ही समय में उन्नत और आदिम दोनों ही तरह के समाज सदा विद्यमान रहे हैं, ठीक वैसे ही जैसे कि वे आज हैं।

500
जहां कहीं भी एक खास जन-समुदाय रहा करता है, वहां का वातावरण इस बात को संकेतित नहीं करता कि उनके दिमाग उन्नत हैं या आदिम, जैसाकि कहा गया है। प्रत्येक कालखंड में लोग अलग-अलग परिस्थितियों में रहे हैं और उनकी अलग-अलग आवश्यकताएं भी रही हैं। उदाहरण के लिए, वास्तुशिल्प के बारे में प्राचीन मिस्रवासियों का बोध हमसे भिन्न रहा है, परन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि हमारी संस्कृति अनिवार्यत: उनसे ज़्यादा श्रेष्ठ है। गगनचुम्बी इमारतें २०वीं सदी का प्रतीक रही हैं। प्राचीन इज़िप्ट (मिस्र) में पिरामिड और स्फिंक्स ही ऐसे प्रतीक थे।

बहुत से विकासवादी अपने दावों की पुष्टि ऐसे ही परिदृश्यों के माध्यम से करना चाहते हैं, भले ही उनके दावों की पुष्टि के लिए किसी अन्य प्रमाण का सहारा मिले या ना मिले। तथापि, किसी भी नए तथ्य को जब पूर्वाग्रहरहित होकर विश्लेषित किया जाए, तो कुछ तथ्य भी उभरकर सामने आते हैं। उनमें से एक यह है: जबसे मनुष्य अस्तित्व में आया है, वह मनुष्य ही रहा है। बुद्धि-विवेक, कलात्मक क्षमता जैसे गुण इतिहास के सभी कालखंडों में एक समान रहे हैं। अतीत में रहने वाले लोग कोई आदिम लोग नहीं थे और न ही वे आधे मानव, आधे पशु जैसे थे, जैसाकि विकासवादी हमसे मनबाना चाहते हैं। वे लोग विचारशील लोग थे, बोलते-जागते मानव -- ठीक हमारी तरह -- जोकि कला का सृजन करते थे और जिन्होंने संस्कृति और नैतिकता की संरचनाएं बनाईं। जैसाकि हम शीघ्र ही जान जाएंगे, पुरातात्विक एवं भू-जैविक खोजों से यह बात अच्छी तरह और निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुकी है।

502

वर्ष 2000

विकासवादी पूर्वाग्रह वाले पुरातत्वविद ज़ोर देकर कहते हैं कि दक्षिणी फ्रांस की पहाड़ियों में स्थित टक डि ऑडोबर्ट की जंगली भैंसों की प्रतिमाएं -- वे प्रतिमाएं जो स्टॅच्यू ऑफ रॉडिन जैसी आधुनिक कलाकृतियों से कम कलात्मक मूल्य की नहीं हैं -- तथाकथित आदिम सभ्यता के मानवों द्वारा बनाई गई थीं परन्तु इन कलाओं में निहित तकनीक और सौन्दर्य-दर्शन तो यही झलकाते हैं कि उन्हें जिस किसी ने भी बनाया था वह शारीरिक या मानसिक रूप से वर्तमान युग के मानवों से भिन्न नहीं था। बल्कि सच कहा जाए तो कला-बोध सम्पन्नता में वह श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठतर था।

वर्ष 8000

मान लें कि यदि रॉडिन का "चिन्तक" (दि थिंकर) आज से 6,000 साल बाद खोज निकाला जाए और लोग उसी पूर्वाग्रह के साथ उसकी व्याख्या करने में लग जाएं जैसेकि आज के कुछ वैज्ञानिक अतीत की व्याख्या करने में जुटे हैं तो वे यही सोचेंगे कि २०वीं सदी के लोग एक मननशील व्यक्ति की आराधना किया करते थे, और यह कि अभीतक उन्हें समाज में रहना नहीं आया था। क्या इससे यह नहीं लगेगा कि कैसे वे सत्य से कोसों दूर हैं?

503

**वास्तविक इतिहास पर पर्दा**

इतिहास के बारे में हम जो अधिकांश बातें जानते हैं वे हमने किताबों से सीखी हैं। पढ़नेवाला शायद ही कभी ऐसी किताबों की विषय-वस्तुओं पर सन्देह करता है और प्रथम दृष्टि में ही उन तथ्यों को मान लेता है। परन्तु खास तौर पर जब मानव इतिहास की बात आती है तो प्रायः इन किताबों में एक सिद्धान्त का प्रस्तुतिकरण ऐसी अवधारणा के तहत किया जाता है जिसकी वैधता जीव विज्ञान, आण्विक जीव विज्ञान, भू-जैविकी, आनुवंशिकी, आनुवांशिक जीवशास्त्र या मानव विज्ञान में से किसी में भी नहीं मानी गई है। विकासवाद के सिद्धान्त के पतन के साथ ही, इसपर आधारित हमारा इतिहास-बोध भी ख़ारिज हो चुका है।

इतिहासकार एडवार्ड ए. फ्रीमैन इस बात पर चर्चा करते हैं कि हमारा ऐतिहासिक ज्ञान "तथ्यों" को कैसे झलकाता है। क्योंकि हर ऐतिहासिक जिज्ञासा में हम उन तथ्यों से दो-चार हो रहे होते हैं जो स्वयं ही मानव इच्छा-शक्ति और मानवीय लोभ के नियंत्रण में आते हैं और जिनके प्रमाण मनुष्य को सूचना प्रदान करने वालों की विश्वसनीयता पर निर्भर करते हैं, जो या तो जान-बूझकर धोखा दे सकते हैं या बिना सोचे-समझे दिग्भ्रमित कर सकते हैं। आदमी झूठ बोल सकता है, उससे गलती भी हो सकती है।

तो हम भला कैसे आश्वस्त हो सकते हैं कि हमें प्राप्त इतिहास सच्चा और वास्तविक है?

सर्वप्रथम तो हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इतिहासकारों और पुरातत्वविदों द्वारा हमारे सामने रखे गए तथ्य उद्देश्यगत दृष्टि से पक्के हैं। जैसाकि अधिकांश सूक्ष्म अवधारणाओं के साथ होता है, इतिहास की व्याख्या का अर्थ भिन्न-भिन्न लोगों के लिए भिन्न-भिन्न हो सकता है। किसी घटना के वृतान्त में उसे प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति के दृष्टिकोण के अनुसार अन्तर आ सकता है। और फिर घटनाओं की व्याख्या अक्सर बहुत भिन्न हो जाया करती है जब उसे किन्हीं तीसरे लोगों द्वारा वर्णित किया जाता है जिन्होंने स्वयं उसे घटित होते नहीं देखा।

"इतिहास" की परिभाषा विगत घटनाओं के क्रमागत संकलन के रूप में दी जाती है। इन घटनाओं का अर्थ और महत्व इस बात पर निर्भर करता है कि इतिहासकार ने उन्हें कैसे प्रस्तुत किया है। उदाहरण के लिए, किसी युद्ध का इतिहास लेखक की इस विचारधारा से प्रभावित हो सकता है कि विजयी पक्ष सही था या गलत। यदि वह

किसी भी एक पक्ष के प्रति सहानुभूति रखता हो तो वह उसे ही "आज़ादी का चैम्पियन" करार दे देगा, भले ही उसने दूसरे के भू-भाग पर आक्रमण किया हो और असंख्य क्रूरताओं का तांडव मचाया हो।7 उदाहरण के लिए, यदि आप एक-दूसरे के प्रति शत्रुता-भाव रखने वाले दो देशों के इतिहास ग्रंथ देखें तो आप पाएंगे कि एक ही घटना की दोनों ने बिल्कुल अलग-अलग ढंग से व्याख्या की है।

विकासवादी इतिहासकारों और वैज्ञानिकों ने बिल्कुल ऐसा ही किया है। ठोस सबूतों के आधार के बिना ही वे मानव-जीवन के तथाकथित विकासवादी इतिहास को एक पक्के यथार्थ के रूप में पेश करते हैं। उन सशक्त प्रमाणों की वे उपेक्षा कर देते हैं जिनसे उनके सिद्धान्त की धज्जियां उड़ती हों, अपने पास उपलब्ध प्रमाणों को पूर्वाग्रह के साथ विश्लेषित करते हैं और इस प्रकार यह सिद्धान्त पेश करते हैं जिसे कुछ वैज्ञानिकों ने तो अपनी विचारधारा, अपना नियम-विधान ही बना लिया है।

यदि दूसरे विश्वयुद्ध की व्याख्या करने वाला इतिहासकार 'नेशनल सोशलिस्ट' विचारधारा का है तो महज़ नीचे दाईं ओर दिए गए चित्र के आधार पर ही वह हिटलर को एक शानदार नेता के रूप में चित्रित कर सकता है। जबकि दूसरी ओर नीचे बाएं दिया गया बुखेनवाल्ड कंसेंट्रेशन कैंप का फोटो हिटलर द्वारा शुरू कराए गए जघन्य नरसंहारों में से एक का उदाहरण मात्र है।

504

**दसियों हजारों साल की समयावधि में आख़िर क्या बचेगा?**

मानव जाति के इतिहास की तुलना में निर्माण, उद्योग, तकनीकी उत्पादों तथा रोज़मर्रा के जीवन में प्रयुक्त होने वाली सामग्रियों की जीवन-अवधि छोटी होती है। अगर दसियों-हजारों साल पहले लोग लकड़ी के बने परिष्कृत भवनों में रहा करते होंगे तो यह सहज ही समझा जा सकता है कि आज उनके नाममात्र के ही अवशेष बचे होंगे। कल्पना कीजिए कि हमारी सभ्यता किसी भयावह संकट में नष्ट हो गई हो तो सैकड़ों-हजारों साल बाद इसके कितने अवशेष बचे होंगे? यदि कुछ हड्डियों या निर्मितियों के ध्वंसावशेष के आधार पर भविष्य के लोग हमें आदिम मानव मान लें तो यह व्याख्या कितनी समीचीन होगी?

दसियों-हजारों साल की समयावधि में आज के भवनों के जो अवशेष बचेंगे वे होंगे पत्थर के कुछ चौखटे। लकड़ी से बने पदार्थ और लोहे विनष्ट हो जाएंगे। उदाहरण के लिए, ूचरागन पैलेस के ख़ूबसूरत वॉल पेन्टिंग्स, इसके सुन्दर फर्नीचर भविष्य में केवल पत्थर बन चुके कुछ बड़े टुकड़ों के रूप में दिखेंगे और महल की शायद कुछ आधार-भित्तियां बच जाएं। अब यदि इस आधार पर यह कहा जाए कि हमारे समय के लोग तो सुव्यवस्थित जीवन-शैली भी स्थापित नहीं कर सके थे और एक के ऊपर एक पत्थर डाल कर आदम काल के घरों में रहा करते थे तो यह अर्थ निकालना सरासर गलत होगा।

वे अवशेष जो आजतक अपना वज़ूद बचा पाए हैं, कभी वे सुन्दर, आलीशान भवन रहे होंगे, ठीक ूचरागन पैलेस की तरह। यदि कोई इन ध्वंसावशेषों के ऊपर फर्नीचर रख दे, उन्हें पर्दों, दरियों और लैम्पों से सजा दे तो एकबार फिर उनकी गरिमा जगमगा उठेगी।

कुरान में यह संकेत दिया गया है कि विगत समाज कला, वास्तुशिल्प, संस्कृति और ज्ञान में बहुत ही बढ़े-चढ़े थे। एक आयत में कहा गया है कि अतीत के मानव समाज बहुत ही उन्नत थे : "क्या उन्होंने इस धरती का भ्रमण नहीं किया और उनकी नियति नहीं देखी जो उनके पहले आ चुके थे? वे ताकत में उनसे कहीं बढ़े-चढ़े थे और धरती पर कहीं ज़्यादा गहरे निशान छोड़ गए हैं।" (सूरा-क़ाफिर : 21)

दसियों-हजारों सालों बाद, आज जो पत्थर के बने भवन यहां दिख रहे हैं वे उन खंडहरों से भिन्न नहीं होंगे जो काटल ह्यूक के उत्खननों से सामने आए हैं। प्राकृतिक दशाओं में, पहले लकड़ियां नष्ट हो जाएंगी और फिर धातु

घिस जाएंगे। इस तरह पूरी संभावना के साथ जो बच जाएंगे वे होंगे पत्थर की भित्तियां, चीनी मिट्टी के बरतन और कटोरियां। ऐसा होने पर, भविष्य के पुरातत्वविदों का यह दावा कि 2000 ईस्वी के आस-पास रहने वाले लोग आदिम जीवन जी रहे थे, कतई सच नहीं होगा। वर्तमान समय के विकासवादी स्वयं को इसी दशा में पाते हैं।

505
इस्तांबुल का चरागन पैलेस जला दिए जाने और इसकी अंतःसज्जा को तहस-नहस कर दिए जाने के बाद। इस अवस्था में इस महल को देखने वाला कोई भी व्यक्ति यह अन्दाज़ नहीं लगा सकता कि कभी यह कितना शानदार हुआ करता था।

चरागन पैलेस अपनी पहले वाली दशा में, सभी साज-सजावट फिर से लगा दिए जाने के बाद।

506
**1.5 मिलियन वर्ष पूर्व के लोग अपने बड़े-बुज़ुर्गों की देखभाल किया करते थे**

दमैनिसी (जॉर्जिया) में 2005 में खोज निकाले गए एक जीवाश्म ने एकबार फिर यह दिखला दिया कि "मानव इतिहास के विकास" का परिदृश्य किसी सच्चाई से मेल नहीं खाता। विकासवादियों के अवैज्ञानिक दावों के अनुसार, पहले-पहल के मानव जानवरों की तरह रहा करते थे। उनका न तो कोई परिवार था, न कोई सामाजिक ताना-बाना। परन्तु भू-जैविकी वैज्ञानिक डेविड लॉर्डकिपॅनिज द्वारा खोजे गए किसी बुज़ुर्गवार की खोपड़ी के जीवाश्म ने यह दिखलाया कि ये दावे झूठे थे।

जीवाश्म जिस बुज़ुर्गवार का था, उसका केवल एक ही दांत रह गया था। वैज्ञानिकों का मत है कि जीवाश्म जिस व्यक्ति का था वह केवल दंतहीन ही नहीं बल्कि कई अन्य व्याधियों से भी पीड़ित था। यह तथ्य कि अनेक रोगों के बावज़ूद वह व्यक्ति बुढ़ापे तक अच्छी तरह जीवित रहा, इस बात का महत्वपूर्ण प्रमाण है कि उसकी देखभाल की जाती थी और यह कि लोग एक-दूसरे के कल्याण में रुचि लेते थे। लॉर्डकिपॅनिज कहते हैं :

यह स्पष्ट होता है कि वह एक बीमार व्यक्ति था .... हमें लगता है कि यह एक अच्छी दलील है कि उस व्यक्ति को ग्रुप के अन्य सदस्यों से सहारा मिलता था. 8

विकासवादियों की मान्यता है कि मानवों ने सामाजिक संस्कृति के व्यवहार उस जीवाश्म वाले व्यक्ति के मरने के कम से कम 1.5 मिलियन साल बाद सीखा। इस प्रकार, यहां जिस जीवाश्म की बात की गई है वह विकासवादियों के दावों को ख़ारिज कर देता है और यह दिखाता है कि लाखों साल पहले के लोग बीमारों के प्रति दया दिखाते थे, उनकी देखभाल करते और उनका संरक्षण करते थे। यह खोज़ एकबार फिर से यह भी सिद्ध करती है कि मनुष्य कभी जानवरों की तरह नहीं रहा, बल्कि मनुष्य सदा मनुष्य ही रहा है।

"डिस्कवर" पत्रिका ने साल भर के महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आविष्कारों की समीक्षा करने के क्रम में इस खोज को पर्याप्त स्थान दिया जिससे यह प्रकट हुआ था कि लाखों साल पहले के लोग बीमारों की सेवा करते थे और उनके कल्याण में रुचि रखते थे। इस खोज ने जिसे "डिड होमो एरेक्टस* कॉडल हिज ग्रैंड पैरेंट्स" शीर्षक लेख के अंतर्गत प्रकाशित किया गया था, यह दिखला दिया कि इतिहास के किसी भी कालखंड में मनुष्य कभी भी पशुओं की तरह नहीं रहा बल्कि वह रहा हमेशा मनुष्य की तरह।

(*) विकासवादी यह दावा करते हैं कि मनुष्य के कल्पित 'विकास' के चरण में 'होमो एरेक्टस' लंगूर और मानव के बीच एक अंतर्माध्यमिक प्रजाति थी। परन्तु सच्चाई यह है कि वर्तमान मानव के कंकाल और होमो एरेक्टस

के कंकाल में कोई अंतर नहीं है। उनके कंकाल भी सीधे और पूर्णत: मानव जैसे ही होते हैं।

507
लॅस्कौक्स की गुफा में प्राप्त एक वॉल पेन्टिंग। स्पष्ट है कि यह किसी आदिम मनुष्य की रचना नहीं हो सकती जो कि अभी-अभी लंगूर से विकसित हुआ था।

508
यदि आने वाली पीढ़ियां वर्तमान कलाकृतियों को विकासवादियों के दृष्टिकोण से देख सकें तो वे हमारे समाज के बारे में एक अलग ही नज़रिया रखेंगी। भविष्य के विकासवादी पाब्लो पिकासो, सॅल्वाडोर डैली या अन्य अति-यथार्थवादी कलाकारों की कृतियों को देखकर संभव है यह कहें कि हमारे समय के लोग विकास की आरंभिक अवस्था में थे। परन्तु आख़िर यह सच से दूर ही तो होगा।

मध्य में:  मैन विथ अ पाइप, पाब्लो पिकासो
गिटार, पाब्लो पिकासो

बाएं :  द फ्लेमिंग हॉर्स, सॅल्वाडोर डैली
दाएं : एक्स्प्लोडिंग क्लॉक, सॅल्वाडोर डैली

509
चित्र किसी कलाकार के अवधारणात्मक और दृश्य-बोध को दर्शाते हैं। परन्तु इन चित्रों से ये निष्कर्ष निकालना कि अमुक समय के लोग क्या खाते-पीते थे, किन अवस्थाओं में रहते थे और उनके सामजिक सम्बन्ध किस प्रकार के थे, और फिर यह मान्यता बना लेना कि ये कमेंट बिल्कुल सही हैं -- यह तो कोई वैज्ञानिक तरीका नहीं है। अपने पूर्वाग्रह भरे विचारों के कारण विकासवादी अतीत के लोगों को हठपूर्वक आदिम कह बैठने की धुन लगाए रहते हैं। इस चित्र (बाएं) में दर्शित व्यक्तियों को हेरिंगबोन के वस्त्र पहनते देखा जा सकता है।  इससे प्रदर्शित होता है कि उस समय के लोग बर्बर नहीं थे और न ही वे कोई अधनंगे ख़ानाबदोश थे, जैसाकि विकासवादियों की राय है।

अल्जीरिया में प्राप्त किए गए वॉल पेन्टिंग्स जो लगभग 9,000 वर्ष पुराने हैं।
टक डि'ऑडोबर्ट गुफा में उकेरी हुई भैंसों की आकृतियां

510
**"केव आर्ट" में दर्शित उच्च कोटि की पेंटिंग तकनीक**

फ्रेंच पायरेनीज में न्योक्स केव प्रागैतिहासिक काल में रहने वाले लोगों द्वारा बनाए गए प्रभावशाली चित्रों से भरा हुआ है।  कार्बन डेटिंग पद्धति से पता चलता है कि उन्हें करीब 14,000 साल पहले पूरा किया गया था। न्योक्स केव पेन्टिंग्स का पता 1906 में चला था और तब से ही उनकी बड़ी गहरी छानबीन की गई है। इस गुफा का सबसे सुसज्जित हिस्सा है "सैलून नॉयर"" नाम से प्रसिद्ध एक अंधेरे स्थान में एक ऊंची 'कॅविटी' (खाली स्थान) से निर्मित एक साइड चेम्बर। अपनी पुस्तक "दि ऑरिजिन ऑफ मॉडर्न ह्यूमन्स" में रोजर लेविन ने जंगली भैंसों, घोड़ों, हरिणों और आइबेक्सों के चित्रों से भरे इस हिस्से के बारे में यह टिप्पणी लिखी है : "पॅनेलों में सुसज्जित तथा पूर्वदृष्टि और अपने प्रदर्शन में सूझ-बूझ का प्रभाव झलकाते हुए ....." 11

इन चित्रों के बारे में एक महत्वपूर्ण तत्व जिसने वैज्ञानिकों का सर्वाधिक ध्यान खींचा है वह है पेन्टिंग की तकनीक। शोध से यह प्रकट हुआ है कि प्राकृतिक और स्थानिक घटकों को मिश्रित करके कलाकार खास प्रकार के यौगिक प्राप्त करते थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इससे विचार-शक्ति, योजना बनाने और परिणाम घटित करने की ऐसी क्षमता का पता चलता है जो प्रारंभावस्था में रह रहे इन्सान के बूते से कहीं बाहर था। लेविन इस

पेन्टिंग तकनीक के बारे में इस प्रकार वर्णन करते हैं:

उच्च पूर्वपाषाणकालीन लोगों द्वारा पेन्टिंग सामग्रियों -- वर्णक (पिगमेंट) तथा खनिज विस्तारक -- का सावधानीपूर्वक चयन किया जाता था और खास प्रकार के मिश्रण बनाने के लिए 5 से 10 माइक्रोमीटर तक के घनत्व में उनकी बारीक पिसाई की जाती थी। काले वर्णक, जैसीकि संभावना ज़ाहिर की गई थी, चार्कोल एवं मैग्निज डाइ ऑक्साइड के मिश्रण थे। परन्तु उनकी वास्तविक अभिरुचि विस्तारकों में थी जिनके लिए ऐसा लगता है कि चार स्पष्ट नुस्ख़े थे जिसे शोधकर्ताओं ने 1 से लेकर 4 तक की संख्या दी है। विस्तारक वर्णकों के रंग खिलाने में सहायक होते हैं और जैसाकि उनके नाम से ही संकेतित होता है, वे रंग को पतला किए बिना ही पेंट को विस्तारित 'लुक' दे देते हैं। न्योक्स में प्रयुक्त होने वाले विस्तारकों के चार नुस्ख़े थे : टॅल्क, बैराइट और पोटासियम फेल्ड्स्पार का मिश्रण, केवल पोटासियम फेल्ड्स्पार तथा बायोटाइट की अति-मात्रा में मिश्रित किया गया पोटासियम फेल्ड्स्पार। क्लॉट्स और उनके सहयोगियों ने इनमें से कुछ विस्तारकों के साथ प्रयोग भी किया और उन्हें पूरी तरह प्रभावी पाया। 12

उच्च रूप से विकसित तकनीक इस बात का प्रमाण है कि अतीत में ऐसा कोई प्राणी नहीं था जिसे आदिम कहकर वर्णित किया जा सके। जब से मनुष्य पहले-पहल अस्तित्व में आया, तभी से अपने सोचने, समझने, तर्क करने, विश्लेषण करने, योजना बनाने और परिणाम उत्पन्न करने की अपनी क्षमताओं के साथ वह एक श्रेष्ठ प्राणी रहा है। ऐसा कहना पूरी तरह तर्कहीन है कि वे लोग जो अपने पेन्टिंग को रंगने के लिए विस्तारकों का प्रयोग करते थे और जो टॅल्क, बैराइट, पोटासियम फेल्ड्स्पार तथा बायोटाइट का सफलतापूर्वक मिश्रण बनाकर ऐसे विस्तारकों का निर्माण किया करते थे वे अभी-अभी लंगूर अवस्था से विकसित हुए थे और सभ्य बने थे।

गुफा पेन्टिंग में प्रयुक्त वर्णक ऐसे मिश्रणों से बनाए जाते थे कि रसायन शास्त्र के छात्र भी उन्हें फिर से बना सकने में कठिनाई का अनुभव करेंगे। इन यौगिकों का सूत्र बड़ा ही जटिल है और आज के दौर में उन्हें प्रयोगशालाओं में केवल केमिकल इंजीनियर ही बना सकते हैं। यह स्पष्ट है कि टॅल्क, बैराइट, पोटासियम फेल्ड्स्पार तथा बायोटाइट जैसी सामग्रियों से प्राप्त पेंट के लिए विस्तृत रसायनिक ज्ञान वांछित है। उन्हें बनाने वाले लोगों को "नव विकसित" कहना संभव ही नहीं है।

511
बाईं ओर : यहां कलाकार ने एक त्रिआयामी बिम्ब प्रस्तुत किया है। ऐसा प्रभाव कला में अच्छी तरह पारंगत लोग ही डाल सकते हैं।

जिन लोगों ने आज से 35,000 ईसा पूर्व वर्ष के गुफा पेन्टिंग्स की रचना की थी उन्होंने मैंग्निज़ ऑक्साइड, आयरन ऑक्साइड, आयरन हाइड्रॉक्साइड तथा डेंटाइन (कॉलाजेन और कॅल्शियम से बने कशेरुकी प्राणियों के दांतों के अन्दरूनी हिस्से) जैसे रसायनों से बने पेंट का प्रयोग किया था। यदि आप ऐसे किसी व्यक्ति से, जिसने रसायन शास्त्र का ज़रा भी प्रशिक्षण प्राप्त न किया हो, ऐसा एक भी पेंट बनाने को कहें तो जैसाकि इस चित्र में दर्शाया गया है, उन्हें पता ही नहीं होगा कि इसके लिए किस रसायन का प्रयोग किया जाए, उसे कैसे पाया जाए और उसके साथ और किन पदार्थों का मिश्रण किया जाए। इसके अलावा, यह भी ज्ञात होता है कि उस समय के लोग जानवरों की शरीर-रचना के बारे में भी काफी कुछ जानते थे, जैसाकि कशेरुकी प्राणियों के दांतों से प्राप्त कॉलाजेन और कॅल्शियम पाउडर के प्रयोग से परिलक्षित होता है।
नीचे दाहिनी ओर दर्शित घोड़ा 'न्योक्स केव' से प्राप्त एक पेन्टिंग में से है। शोध से ज्ञात हुआ है कि यह पेन्टिंग कोई 11,000 साल पुरानी है। पेन्टिंग में दर्शित घोड़े और उस क्षेत्र में आज भी पाए जाने वाले घोड़ों में इतनी अधिक समानता है कि मानना पड़ता है कि इसे बनाने वाले कलाकार के पास

बहुत ही परिष्कृत कला-बोध था। ये पेन्टिंग्स गुहा-भित्तियों पर बनाए गए थे, इस बात से यह साफ अप्रमाणित हो जाता है कि वे कलाकार कोई आदिम जीवन जी रहे होंगे। ज़्यादा संभावना तो यह लगती है कि पूर्णत: अपनी व्यक्तिगत पसन्द से उन्होंने इन दीवारों को अपने फलक या 'कैनवेस' के रूप में चुना था।

512

**'ब्लॉम्बोज गुहा' से प्राप्त कृतियों से भी मानव विकास की अवधारणा विनष्ट हो जाती है**

दक्षिण अफ्रिका के तट पर ब्लॉम्बोज गुफाओं में किए गए उत्खनन में प्राप्त खोजों ने भी मानव विकास की अवधारणा को पलट डाला है। "द डेली टेलिग्राफ" ने यह कहानी "पाषाण-युगीन मानव ऐसा बहरा भी नहीं था" शीर्षक मुख्य समाचार के अंतर्गत छापा था। यह वृतान्त अनेक समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में छापा गया जिनमें यह कहा गया कि प्रागैतिहासिक मानव के बारे में हमें अपने विचारों को पूर्णत: बदलना होगा। उदाहरण के लिए, बीबीसी न्यूज़ ने अपने रिपोर्ट में कहा : "वैज्ञानिकों का कहना है कि इस आविष्कार से पता चलता है कि सोचने-विचारने के आधुनिक तरीके उससे कहीं बहुत पहले शुरू हो गए थे जितना कि हम सोचते हैं"। 13

ब्लॉम्बोज गुफा में 80 से लेकर 100,000 साल पुराने मृदा-वर्णकों के टुकड़े पाए गए थे। अनुमान लगाया गया था कि उनका उपयोग शरीर को पेंट करने तथा अन्य कलात्मक कार्यों में किया जाता था। इस खोज़ से पूर्व वैज्ञानिक लोग यह कहा करते थे कि सोच-विचार कर सकने तथा कोई नई चीज बना पाने की मानवीय क्षमता का प्रमाण ज़्यादा से ज़्यादा 35,000 वर्ष पुराना है। इन नई खोज़ों ने इस परिकल्पना को नेस्तनाबूद कर दिया है। उस समय के लोग, जिनका वर्णन विकासवादियों ने आदिम मानव और यहांतक कि आधे लंगूरों के रूप में किया है, वस्तुत: आज के मनुष्य की तरह ही सोच सकते थे और रचनाएं कर सकते थे।

यहां दर्शाए गए मनके (बीड्स) और विभिन्न प्रकार की साज-सजावट वाली वस्तुएं ब्लॉम्बोज गुफाओं से प्राप्त हुई थीं। ये वस्तुएं हमें यह बताती हैं कि उस समय के लोगों के पास कला की सूझ-बूझ थी और सुन्दर, आकर्षक वस्तुएं उन्हें आह्लादित करती थीं।

**शॉवेट गुफा के आश्चर्यजनक चित्र**

1994 में शॉवेट गुफा से प्राप्त पेन्टिंग्स ने वैज्ञानिक जगत में खलबली मचा दी थी। उसके पहले, आर्देश की कृतियों, लॅस्कौक्स से पाप्त 20,000 साल पूर्व की प्रतिमाओं और स्पेन के अल्टामीरा की 17,000 वर्ष पुरानी कृतियों ने भी दुनिया के लोगों का अच्छा-खासा ध्यान खींचा था। परन्तु शॉवेट के चित्र इन सबसे भी कहीं अधिक पुराने थे। कार्बन डेटिंग से पता चला कि ये पेन्टिंग्स लगभग 35,000 वर्ष पुराने हैं। "नेशनल ज्योग्राफिक" पत्रिका में यह टिप्पणी छपी:

प्रथम श्रृंखला के फोटोग्राफों ने विशेषज्ञों और आम लोगों दोनों को चमत्कृत किया। कई दशकों तक विशेषज्ञ लोग यह मानकर चल रहे थे कि आदिम रेखाचित्रों से लेकर जीवन्त एवं प्राकृतिक कलाकृतियों तक कला का विकास मंद एवं क्रमिक चरणों में हुआ है ...। शॉवेट के चित्र अन्य प्रसिद्ध गुफा-चित्रों की तुलना में दोगुने ज़्यादा पुराने हैं और वे न केवल प्रागैतिहासिक कला का चरमोत्कर्ष प्रदर्शित करते हैं बल्कि उसके अबतक ज्ञात सबसे प्राचीन उद्भव की ओर भी संकेत देते हैं। 14

शॉवेट गुफा की "अश्व दीर्घा" लगभग 6 मीटर (20 फीट) लम्बी है। इस गुफा के आश्चर्यजनक रूप से ख़ूबसूरत चित्रों में शुमार हैं गैंडे, घनेरे बालों वाले घोड़े, जंगली भैंसे, सिंह और पहाड़ी बकरे। ऐसी

सुविकसित कला, वो भी ऐसे समय रचित जबकि विकासवादी लोग केवल अनगढ़ रेखाओं की उम्मीद कर रहे थे, एक ऐसी चीज है जिसकी व्याख्या डार्विन के सिद्धांतों के आलोक में नहीं की जा सकती।

इन गुफा चित्रों से झलकती गहन कलात्मक संवेदना के प्रकाश में "नेशनल ज्योग्राफिक" पत्रिका ने इन्हें बनाने वाले कलाकारों का वर्णन "हम जैसे मानव" कहकर किया था।

ऊपर बाएं : शॉवेट गुफा में एक तेन्दुए का मृदावर्णकों (मिट्टी के पिग्मेंट्स) से बना चित्र
ऊपर दाएं : अश्व दीर्घा की एक झलक नजदीक से

**लॅस्कौक्स में 16,500 वर्ष पुरानी खगोलीय योजना**

म्युनिख़ विश्वविद्यालय के एक शोधकर्ता डॉ. माइकल रॅपेनग्लूक के शोध परिणाम से यह प्रकट हुआ कि मध्य फ्रांस में प्रसिद्ध लॅस्कौक्स गुफाओं के भित्ति-चित्रों का खगोलशास्त्रीय महत्व भी था। फोटोग्रामेट्री तकनीक का इस्तेमाल करते हुए उन्होंने गुफा की दीवारों पर बने चित्रों को कंप्यूटर पर पुन:प्रस्तुत किया जिससे यह पता चला कि उन चित्रों में उभर कर आनेवाले ज्यामितिक वृत्तों, कोणों और सीधी रेखाओं का खास महत्व था। कंप्यूटर की गणना में ग्रहण सम्बन्धी रुझान, सम्पात विन्दुओं की अवगति, तारों की सुनियमित गति, सूर्य और चन्द्र की परधि और व्यास, ब्रह्मांड के परावर्तन इत्यादि मूल्यमानों को भी समाहित किया गया। परिणामस्वरूप यह पता चला कि इन रूप-रेखाओं का सम्बन्ध विभिन्न तारामंडलों और चान्द्र-गतियों से था। बीबीसी न्यूज़ ने अपने विज्ञान खंड में यह ज़ानकारी प्रसारित की :

रात्रिकालीन आकाश का एक प्रागैतिहासिक अक़्स मध्य फ्रांस में सुप्रसिद्ध लॅस्कौक्स की पेन्टिंग गुफाओं की दीवारों पर देखने को मिला है। इस अक़्स में, जिसे 16,500 वर्ष पूर्व का माना गया है, तीन चमकीले तारे दर्शित हैं जिन्हें आज हम "समर ट्रैंगल" के नाम से जानते हैं। लॅस्कौक्स के इन भित्ति-चित्रों में 'प्लिऍडीज' नामक तारामंडल भी दर्शित होता है। 1940 में ढूंढ़ निकाली गई ये गुहा-भित्तियां हमारे पुराचीन पूर्वजों की कला-प्रतिभा की झलक दिखाती हैं। परन्तु साथ ही इन चित्रों से उनका वैज्ञानिक ज्ञान भी आभासित होता है। 15

डार्विन विचारधारा के दावों के अनुसार, जिन लोगों ने ये चित्र बनाए थे वे संभवत: अभी-अभी पेड़ से उतरे थे। अभीतक उनका बौद्धिक विकास भी नहीं हुआ था। तथापि, इन चित्रों के कलात्मक मूल्य और नवीनतम शोध दोनों ही इन दावों को ख़ारिज करके रख देते हैं। ये चित्र चाहे जिन्होंने भी बनाए हों, वे बहुत ही उच्च कोटि के सौन्दर्य-बोध, सुविकसित कला-तकनीक और वैज्ञानिक ज्ञान से सम्पन्न थे।

वैज्ञानिक अन्वेषकों के अनुसार, घोड़े के चित्र के निचले हिस्से में अंकित विन्दु संभवत: चन्द्रमा के 29-दिवसीय चक्र के द्योतक हैं।

बीबीसी के वेबसाइट पर "प्राचीनतम चान्द्र पंचांग खोज लिया गया" शीर्षक से प्रकाशित एक रिपोर्ट में दी गई ज़ानकारियों से "मानव समाज के विकास" की डार्विनवादी अवधारणा का एक बार पुन: खंडन हुआ।

514
लॅस्कौक्स गुफा में गायों के चित्र

लॅस्कौक्स गुफा में जंगली भैंसों के चित्र

इन चित्रों में जीवन्तता और गति का चित्रण बड़ी परिपूर्णता से किया गया है। ये काफी आकर्षक हैं और गुणात्मकता में प्रशिक्षण प्राप्त कलाकारों द्वारा बनाई गई कृतियों से कम नहीं। ऐसा कहना असंभव है कि ऐसे चित्र मानसिक रूप से अपरिपक्व लोगों द्वारा बनाए गए होंगे।

515

ऊपर : लॅस्कौक्स गुफा की तथाकथित "रोटुंडा" की उत्तरी दीवार
नीचे दाहिने : लॅस्कौक्स के 17,000 वर्ष प्राचीन जन्तु चित्र
नीचे बाएं : एक घोड़े का चित्र

516

**विकासवादियों को हैरान करते उत्तरी अमेरिका के चित्र और आरेख**

7,000 साल पुराने ये ज़िराफों के आरेख इतनी परिपूर्णता से बनाए गए थे कि लगता है ज़िराफों का चलता-फिरता कोई झुंड हो। स्पष्ट है कि यह चित्र विचारशील लोगों की रचना है -- ऐसे लोगों की जो निर्णय कर सकते थे, जिनमें कला की समझ थी।

7,000 साल ही पुरानी एक दूसरी पेन्टिंग में वाद्य-यंत्र बजाते एक व्यक्ति को चित्रित किया गया है। इसकी बाईं ओर के एक नवीनतम चित्र में बोटस्वाना के अदिवासी समुदाय -- जु -- के एक सदस्य को दिखाया गया है। वह भी एक ऐसा ही वाद्य-यंत्र बजा रहा है। सच्चाई यह है कि 7,000 वर्ष पुराने इस वाद्य-यंत्र से मिलता-जुलता एक वाद्य-यंत्र आज भी प्रयोग में है। डार्विनवादी ख़्यालों की धज्जी उड़ाने वाला यह एक और अनोखा उदाहरण है। डार्विनवादियों की मान्यता के प्रतिकूल, ज़रूरी नहीं कि सभ्यता का विकास सदा आगे की ओर ही हो। संभव है कि कई बार हजारों साल तक यह जस की तस बनी रहे। एक ओर जहां इस आदमी के हाथों में पिछले 7,000 सालों से प्रयुक्त हो रहा एक प्रतिष्ठित वाद्य-यंत्र है, वहीं दूसरी ओर संसार के किसी दूसरे कोने में अत्याधुनिक कंप्यूटर तकनीक के दम पर 'डिजिटल सिम्फोनी' से संगीत रचे जा रहे हैं। और ये दोनों ही संस्कृतियां एक ही समय विद्यमान होती हैं।

नीचे : 7,000 साल पुराने एक चित्र में बांसुरी बजाते आदमी का चित्र यह दर्शाता है कि उस समय के लोगों के पास संस्कृति और कला का ज्ञान था और, अत:, वे मानसिक रूप से विकसित और सुसंस्कृत थे।
नीचे बाएं : इस चित्र में बोटस्वाना के एक स्थानीय निवासी को वैसा ही एक वाद्य-यंत्र बजाते दिखाया गया है।

**काटल ह्यूक, जो ऐतिहासिक मान्यतानुसार पहला शहर था, विकास का खंडन करता है**

आम तौर पर 9,000 ईस्वी पूर्व वर्ष पुराना माना गया काटल ह्यूक, ऐतिहासिक रूप से ज्ञात प्रथम शहरों में गिना जाता है। जब पहले-पहल इसे खोज निकाला गया तो पुरातत्व जगत में इसको लेकर काफी बहसें चलीं और एक बार फिर विकासवादी दावों की अमान्यता सिद्ध हो गई। पुरातत्ववेत्ता जेम्स मेलार्ट बतते हैं कि इस क्षेत्र की सुविकसित दशा को देखकर उन्हें कितनी हैरानी हुई।

काटल ह्यूक की तकनीकी खासियतें इस उच्च रूप से विकसित समाज की विलक्षण ख़ूबियों में से एक है। स्पष्ट ही वह नवपाषाणकालीन प्रगति का सिरमौर था .... । जैसेकि वे लावा पत्थर (ऑब्सीडियन)

से बने दर्पण पर कैसे पॉलिश कर सके, वो भी बिना उसे खुरचे हुए, और ऑब्सीडियन सहित अन्य पत्थरों से बने मनकों में उन्होंने सुराख कैसे बनाए, वो भी इतने महीन कि आजकल की इस्पात की बनी बारीक से बारीक सूई भी उसे न भेद सके? उन्होंने ताम्बे और लीड से धातु प्राप्त करना कब और कहां सीखा? 16

इन खोज़ों से पता चला कि काटल ह्यूक के निवासी नगरीय जीवन-बोध से सम्पन्न थे, वे योजना और रूप-रेखा बनाने तथा संगणना में माहिर थे और कला सम्बन्धी उनकी समझ हमारी कल्पना से कहीं अधिक विकसित थी। उत्खनन दल के वर्तमान अगुआ, प्रोफेसर इयान हॉडर, कहते हैं कि ये उपलब्ध तथ्य विकासवादी दावों को पूर्णत: निरस्त कर देते हैं। वे कहते हैं कि उन्होंने एक आश्चर्यजनक कला ढूंढ़ निकाली है जिसके उद्‌गम का पता नहीं चल रहा और साथ ही वे ध्यान दिलाते हैं कि काटल ह्यूक की भौगोलिक अवस्थिति के बारे में बताना कठिन है क्योंकि, हॉडर के अनुसार, उस समय के आबाद क्षेत्रों से उसका कोई प्रत्यक्ष भौगोलिक तारतम्य नहीं दिख रहा है। जो भित्ति-चित्र खोजे गए हैं वे अपने समय के हिसाब से काफी विकसित कोटि के हैं। वे कहते हैं कि इस जिज्ञासा के बाद कि उन लोगों ने कला के क्षेत्र में इतना ऊंचा स्तर कैसे पाया, वास्तविक प्रश्न यह उठता है कि इस जन-समुदाय ने ऐसी आश्चर्यजनक सांस्कृतिक प्रगति कैसे हासिल की? उनके ही कथनानुसार, हम बस इतना जानते हैं कि काटल ह्यूक की सांस्कृतिक प्रगति के पीछे 'विकास' जैसा कोई तत्व नहीं था जहां ऐसी महत्वपूर्ण कलाकृतियां स्वत: ही और मानों शून्य से प्रकट हुईं।

काटल ह्यूक की तमाम खोजें ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विकासवाद को अमान्य कर देती हैं। यहां के भित्ति-चित्र तथाकथित 'गुहा-मानव' के कारनामे नहीं हैं जो अभी-अभी असभ्य अवस्था से उभरकर ऊपर उठे थे, वरन वे कृतियां थीं उन मानव प्राणियों की जो परिष्कृत कला-क्षमता और सौन्दर्य-बोध से सम्पन्न थे।

ऊपर : काटल ह्यूक के भित्ति-चित्रों में से एक जिसमें हिरण का शिकार प्रदर्शित है

**40,000 साल पुराने भाले जिनसे विकासवादी हैरान हुए**

1995 में जर्मन पुरातत्वविद हार्टमुट थीम ने स्कॉनिंज़ेन, जर्मनी, में लकड़ी के बने कई अवशेषों का पता लगाया। ये थे बड़ी कुशलता से निर्मित भाले, या दूसरे शब्दों में, संसार के प्राचीनतम ज्ञात शिकार के हथियार। यह अनुसंधान भी विकासवादियों के लिए बड़ा हैरतनुमा था, क्योंकि उनकी नज़र में तो सही ढंग से शिकार करना 40,000 साल पहले की बात है, जब आधुनिक मानव पहले-पहल प्रकट हुआ था। इसके पहले जो 'क्लैक्टन' और 'लेहरिंजेन' बरछियां उपलब्ध हुई थीं, विकासवाद के झूठ के खांचे में फिट करने के लिए उन्हें खोदने वाली छड़ियां और बर्फ हटाने के बल्लम का नाम दे दिया गया था। 18

परन्तु, वस्तुत: स्कॉनिंज़ेन बर्छे इससे भी कहीं आगे निकले – 400,000 वर्ष पुराने। इसके अलावा, उनका समय इतना सुनिश्चित था कि शेफील्ड युनिवर्सिटी के एक पुरातत्वविद रॉबिन डेनेल, जिनका आलेख "नेचर" पत्रिका मे प्रकाशित हुआ था, ने कहा कि इनकी तिथि को बदल पाना या उनका गलत अर्थांतरण करना नामुमकिन है:

परन्तु स्कॉनिज़ेन से जो वस्तुएं प्राप्त हुई हैं, वे निर्विवाद रूप से भाले हैं। उनके बर्फ हटाने के बल्लम या खोदने के उपकरण होने का दावा करना ऐसा ही है जैसेकि पावर ड्रिल को पेपरवेट मान लेना। 19

इन भालों ने विकासवादी वैज्ञानिकों को इतना आश्चर्यचकित क्यों किया, इसका एक कारण है यह गलत अवधारणा कि उस समय के तथाकथित आदिम लोग ऐसी वस्तुएं निर्मित कर सकने की क्षमता नहीं रख सकते थे। परन्तु फिर भी ये भाले ऐसे मस्तिष्क द्वारा निर्मित हैं जो गणना कर सकते थे और चरण-दर-चरण योजना बनाने में भी सक्षम थे। प्रत्येक भाले के लिए शाल (स्प्रूस) के लगभग 30 वर्ष पुराने एक वृक्ष के तने का उपयोग किया गया था जबकि भाले का अग्र भाग उसकी जड़ से बनाया गया था जहां लकड़ी सबसे ज़्यादा कठोर हुआ करती है। प्रत्येक भाले की रचना समानुपातिक रूप से की गई थी और - जैसाकि आधुनिक मापदंड है -- उनके गुरुत्व केन्द्र तीक्ष्ण हिस्से से एक-तिहाई अंश पीछे रखा गया था। इन तमाम ज़ानकारियों के मद्देनज़र रॉबिन डेल टिप्पणी करते हैं :

ये इस बात के द्योतक हैं कि एक उपयुक्त पेड़ के चयन, रूप-रेखा तय करने और अंतिम आकार देने जैसी बातों के लिए उनमें काफी समय और कुशलता का उपयोग किया गया। दूसरे शब्दों में, ये [तथाकथित] 'होमिनिड' किसी स्वत:स्फूर्त "पांच मिनट की संस्कृति" में निवास करने वाले लोग नहीं थे जोकि तात्कालिक परिस्थितियों के हिसाब से अवसरवादी ढंग से अपनी प्रतिक्रियाएं देते हों। बल्कि, इसके विपरीत, हम उनमें गहन योजना, डिजाइन की उत्कृष्टता और काष्ठ-कर्म में धैर्य का परिचय पाते हैं -- वे सब बातें जिनका श्रेय आधुनिक मानव को दिया जाता है। 20

उन बरछियों को खोज निकालने वाले थीम महाशय का कहना है :

मध्य हिम युग (प्लेस्टोसेन) जैसे पुराने समय में ऐसे परिष्कृत भालों के उपयोग का अर्थ यह निकलता है कि आदिकालीन मानव के व्यवहार और संस्कृति के सम्बन्ध में अनेक प्रचलित सिद्धान्तों की फिर से समीक्षा की जाए। 21

जैसकि हार्टमुट थीम और रॉबिन डेनेल का कहना है, मानवजाति के इतिहास के सम्बन्ध में डार्विनवादी दावे सच्चाई नहीं झलकाते। वास्तविकता यह है कि मनुष्य कभी विकास की दशा से नहीं गुजरा। अतीत के समय में उन्नत एवं पिछड़ी सभ्यताएं दोनों ही साथ-साथ विकसित होती रहीं।

**गोबेक्ली टेपे पर सभ्यता के निशान**

वैज्ञानिकों ने उर्फ़ा (टर्की) के पास स्थित गोबेक्ली टेपे पर किए गए उत्खनन से प्राप्त सामग्रियों को "असाधारण और अनुपम" कहा है। ये आदमकद से भी बड़े 'टी' आकार के विशालकाय स्तम्भ हैं जिनका व्यास 20 मीटर (65 फीट) है और उनपर जानवरों की आकृतियां उकेरी गई हैं। उन्हें वृत्ताकार रूप में सजाया गया है। विज्ञान जगत जिस बात से बहुत ज़्यादा अचंभित हुआ वह था उस स्थल-विशेष का समय। उसे 11,000 साल पूर्व निर्मित किया गया। विकासवादियों के दावे के अनुसार, उस समय के लोगों ने इस प्रभावशाली स्थल का निर्माण केवल आदिकालीन पत्थरों के प्रयोग से किया होगा। अत: इस भ्रमित अवधारणा के अनुसार, अभियंत्रण (इंजीनियरिंग) का यह नायाब नमूना 11,000 साल पहले शिकारी लोगों द्वारा आदिकालीन उपकरणों का उपयोग करके किया गया था। परन्तु यह पूर्णत: अविश्वसनीय लगता है। गोबेक्ली टेपे के उत्खनन दल के मुखिया प्रोफेसर क्लॉस स्मिड्ट अपने बयान में यह तथ्य प्रकट करते हैं कि उस समय के लोग सोचने-विचारने वाले मानव प्रतीत होते हैं। जो कल्पनाएं की गई हैं उसके विपरीत, स्मिड्ट हमें बताते हैं कि ये लोग आदिम सभ्यता के लोग नहीं थे और उन्हें लंगूर जैसे प्राणी नहीं माना जा सकता जो कि अभी-अभी पेड़ से उतरे थे और अचानक एक सभ्यता का निर्माण करने के लिए प्रयासरत थे। बौद्धिक शक्ति की दृष्टि से वे हम जैसे ही मानव लगते हैं। 22

पुरातत्ववेत्ता स्मिड्ट ने यह तय करने के लिए कि उस समय की परिस्थितियों में इस विशालकाय स्तम्भों को किस प्रकार वहां लाया गया होगा और कैसे उन्हें आकार दिया गया होगा, एक छोटा सा प्रयोग किया। वे और उनके दल के लोगों ने किसी यंत्र के बिना ही एक भारी-भरकम चट्टान को गढ़ने की कोशिश में जुट गए। उन्होंने इस काम के लिए सिर्फ ऐसे आदिम औजारों का उपयोग किया जिन्हें, विकासवादियों के अनुसार, प्रागैतिहासिक मानव ने प्रयोग में लाया होगा। फिर उन्होंने उसे थोड़ी दूर उठाकर ले जाने का प्रयास किया। टीम के लोगों की एक टुकड़ी लकड़ी के कुन्दों, रस्सियों और मांसपेशियों की ताकत लगाते हुए, साधारण और प्राकृतिक ढंग की घिरनियों का प्रयोग करके उस पत्थर को सरकाने में जुट गए। दूसरे लोग हाथ से उपयोग किए जा सकने वाले पत्थर के औजारों से 9,000 साल पुराने राजमिस्त्रियों की तरह एक गड्ढा बनाने की कोशिश में लगे। (विकासवादियों की ऐतिहासिक दृष्टि यह रही है कि चूंकि उन दिनों लोहे के औजार नहीं थे, अत: पत्थर युग के लोग कठोर चकमक (फ्लिंट) पत्थरों का प्रयोग करते थे।

इस तरह उस पत्थर को गढ़ने वाले लोगों ने लगातार दो घंटे काम किए और इतने में बस वे एक अस्पष्ट रेखा बना सके। पत्थर को सरकाने के काम में जुटे हुए 12 लोगों की टोली ने चार घंटे कड़ी मिहनत की परन्तु वे इसे बस 7 मीटर या 20 फीट खिसका सके। इस साधारण से प्रयोग ने यह सिद्ध कर दिया कि पत्थरों का एक जरा सा वृत्ताकार दायरा बनाने के लिए सैकड़ों मजदूरों को महीनों काम करना पड़ा होगा। अत: स्पष्ट है कि उस समय के लोगों ने विकासवादियों द्वारा बताए गए आदियुगीन तरीकों की बज़ाय कहीं ज़्यादा उच्च विकसित क्षमता को काम में लाया होगा।

विकासवादी समय-रेखा में एक और विसंगति यह है कि जब इस प्रकार के निर्माण किए जा रहे थे, उस समय को वे "मृदाकला-पूर्व नव पाषाण युग" का नाम देते हैं।

इस अवास्तविक अवधारणा के अनुसार, उस समय के लोग तो अभी मिट्टी के बरतन बनाने की तकनीक से भी अज्ञात थे। यह जानने के बाद कि वे लोग तो प्रतिमाएं भी बनाया करते थे, बड़े-बड़े पत्थरों का परिवहन करते थे, उन्हें आकर्षक स्तम्भों के रूप में बदल सकते थे जिनपर वे जन्तुओं की आकृतियां भी उकेर लेते थे, अपनी दीवारों पर पेन्टिंग बनाते थे और वास्तुशिल्प तथा अभियंत्रण में निष्णात थे, क्या हम यह दावा कर सकते हैं कि वे मिट्टी के बरतन बनाना नहीं जानते थे?

यह भ्रमात्मक दावा बार-बार सिर्फ इसलिए किया जाता रहा है ताकि विकासवाद की पूर्व-अवधारणाओं का बचाव किया जा सके। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उपरोक्त निर्माण हमें यह बताते हैं कि उन्हें निर्मित करने वाले लोग उससे कहीं अधिक विकसित ज्ञान, तकनीक और सभ्यता से सम्पन्न थे जितनी कि पहले कल्पना की गई थी। अत: इससे यह भी प्रकट होता है कि वे आदियुगीन लोग नहीं थे। वस्तुत: तुर्क़ पत्रिका "बिलिम वे तेकनीक" के एक लेख में कहा गया है कि गोबेक्ली टेपे की खोजों से मानवजाति के इतिहास के बारे में एक बहु-प्रचलित गलत अवधारणा का पर्दाफ़ाश होता है: "ये नई ज़ानकारियां मानवता के इतिहास के बारे में एक महत्वपूर्ण भ्रमित अवधारणा को बेनकाब करती हैं।" 23 यह दोष इतिहास की व्याख्या विकासवादी अवधारणा के आलोक में करने के कारण है।

गोबेक्ली टेपे में पाए गए टी-आकार के कुछ पत्थरों पर सिंहों के चित्र उकेरे गए हैं।

520

इस कालखंड के बारे में संकेतित करते हुए विकासवादी इन वस्तुओं को "पत्थर युग" की वस्तुएं बताते हैं, जिस समय -- उनके दावे के अनुसार -- केवल पत्थर के औजार ही उपयोग में लाए जाते थे। परन्तु इन प्राप्त सामग्रियों के आधार पर यह दावा थोथा लगता है। चट्टानों पर जानवरों का बिल्कुल सही-

सही चित्र उकेरना, या फिर मूर्तियों में आंख, नाक और मुंह की आकृतियां ढालना केवल पत्थर के उपयोग से संभव नहीं है।

क्षेत्र के कुछ स्तम्भों पर शेर की उकेरी हुई आकृतियां

गोबेक्ली टेपे से प्राप्त एक मानव प्रतिमा

गोबेक्ली टेपे से प्राप्त एक जंगली सूअर की चित्र-आकृति

मृदा-कला (सेरामिक्स) अतीत की संस्कृतियों द्वारा छोड़ी हुई एक ऐसी बिरासत है जिससे हम अक्सर दो-चार होते रहते हैं। आज भी बहुत से लोग ऐसे बरतन बनाकर अपनी आजीविका चला रहे हैं। अब मान लें कि हमारे आज के वक्त से बची-खुची कुछ टुकड़ियां भविष्य के वैज्ञानिकों को मिल जाएं और ये उनके आधार पर यह कहें कि हमारी सभ्यता में धातुओं के बारे में कोई ज्ञान ही नहीं था तो उनका यह कहना कितना सही होगा?

521
पत्थरों को आकार देने के लिए उनसे भी अधिक कठोर लोहे और इस्पात के अनेक उपकरणों की आवश्यकता होती है। ठीक आज के पत्थर गढ़ने वाले कारीगरों की तरह वे कलाकार और मिस्त्री भी पत्थर काटने और गढ़ने के लिए धातु के ऐसे ही उपकरण इस्तेमाल में लाते थे।

**8000 वर्ष पूर्व पेशेवर तकनीकों के इस्तेमाल से दांतों का उपचार**

पाकिस्तान में किए गए उत्खनन कार्य से यह ज्ञात हुआ कि आज से 8,000 से भी अधिक पहले दंतक्षय को रोकने के लिए दंत चिकित्सक दांतों की ड्रिलिंग भी किया करते थे। खुदाई के क्रम में, मिसौरी-कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर ऍन्ड्रिया क्युसीना का ध्यान 8,000 से 9,000 साल पुराने चर्वक (मोलर) दांतों पर लगभग 2.5 मिमी के व्यास वाले बारीक छिद्रों पर गया। अपने शोध का विस्तार करते हुए क्युसीना ने अपनी टीम से कहा कि उन छिद्रों की जांच इलेक्ट्रोन माइक्रोस्कोप से की जाए। उन्होंने पाया कि इन सूक्ष्म छिद्रों के किनारे इतने बेहतरीन ढंग से गोलाकार बनाए गए थे कि ऐसा केवल बॅक्टीरिया के प्रभाव से होना नामुमकिन था। दूसरे शब्दों में कहें तो ये छिद्र प्राकृतिक कारणों से नहीं हुए थे बल्कि उपचार की दृष्टि से ये कृत्रिम छिद्र बनाए गए थे। किसी भी दांत में क्षय के लक्षण नहीं मिले। जैसाकि "न्यू साइंटिस्ट" पत्रिका में कहा गया: "यह प्रागैतिहासिक काल के दंत चिकित्सकों की निपुणता का सरल प्रमाण था।" 24

उस समय, विकासवादियों के अनुसार, मानव लंगूर अवस्था से अभी-अभी जुदा हो रहा था। वे नितान्त आदिकालीन स्थितियों मे रह रहे थे और बस मिट्टी के कुछ बरतन बनाना सीख चुके थे, वो भी हर जगह नहीं बल्कि कुछ ही क्षेत्रों में। यदि उनके पास तकनीकी ज्ञान नहीं था तो दांतों के उपचार के लिए उस आदिम अवस्था के इन्सान दांतों में इतने बेहतरीन ढंग से ड्रिल करने में कैसे निष्णात हो गए? अत: स्पष्ट है कि वे आदिम अवस्था के इन्सान नहीं थे और न ही वे असभ्य स्थितियों में रह रहे थे। इसके विपरीत, उन्हें रोग-निदान का ज्ञान था, उन्हें उपचार-विधियां आती थीं और उन विधियों को सफलतापूर्वक आज़माने के लिए उनके पास तकनीकी साधन भी थे। तो एक बार फिर .... यह डार्विनवाद के इस दावे को ख़ारिज कर देता है कि मानव समाज का आदिम से आधुनिक अवस्था तक विकास हुआ है।

522

**पुराकाल के लोगों का संगीत-प्रेम**

आज से लगभग 100,000 वर्ष पूर्व रहने वाले लोग संगीत के प्रति जो अभिरुचि दिखा रहे थे वह भी इस बात का परिचायक है कि उनकी पसन्द भी बिल्कुल आज के लोगों जैसी थी। अबतक ज्ञात प्राचीनतम संगीत उपकरण लीबिया में हौआफ़्तेह नामक जगह से बरामद हुआ है। यह एक ऐसी बांसुरी का जीवाश्म है जिसे एक चिड़िये की हड्डी से बनाया गया था और अनुमान है कि वह 70,000 से लेकर 80,000 साल पुराना है। 25 प्रोलोम ॥ पूर्वी क्रीमिया में वह स्थान है जहां से 41'फैलेंज' ह्वीसल्स (सीटियां) पाए गए। 26 इस स्थान के अस्तित्व का समय 90,000 से 100,000 वर्ष पुराना आंका गया है। 27

उस समय के लोगों का संगीत ज्ञान इससे भी कहीं आगे था। संगीतशास्त्री बॉब फिंक ने एक अन्य प्रकार की बांसुरी का विश्लेषण प्रस्तुत किया है जिसे एक रीछ की जंघास्थि से बनाया गया था। यह बांसुरी पुरातत्वविद इवान तुर्क को उत्तरी युगोस्लाविया की एक गुफा में जुलाई 1995 में प्राप्त हुई थी। फिंक ने प्रमाणित किया कि यह बांसुरी, जिसकी रेडियोकार्बन द्वारा निर्धारित समय-अवधि 43,000 से 67,000 साल पूर्व की है, चार तरह के सुर उत्पन्न करती थी और इसमें आधे और पूरे स्वर थे। इस खोज से यह बात प्रमाणित हुई कि 'निएंडरथल' मानव सात सुरों का प्रयोग करते थे जोकि आज भी पाश्चात्य संगीत का स्थापित फॉर्मूला है। बांसुरी की जांच करते हुए फ्लिंक ने देखा कि इसकी तीसरी और चौथी सुराखों की तुलना में दूसरी और तीसरी सुराखों के बीच का फासला दोगुना था। इसका यह मतलब हुआ कि पहला फासला पूर्ण स्वर के लिए और इसके बाद का फासला अर्ध-स्वर के लिए रखा गया था। फिंक ने लिखा है: "ये तीनों सुर अपरिहार्य रूप से द्वि-स्वरात्मक हैं और नए या पुराने किसी भी मानक द्वि-स्वरात्मक पैमाने पर उनका लगभग सही-सही मेल बैठ जाता है"। इस बात से यह तथ्य ज़ाहिर होता है कि "निएंडरथल" मानव के पास संगीत के प्रति प्रेम और उसका ज्ञान भी था। 28

इन कृतिओं और पुरातात्विक खोजों से उभरे सवालों के बारे में डार्विनवाद के पास कोई जवाब नहीं है जिसकी मान्यता यह है कि मनुष्य और लंगूर समान पुरखों की सन्तान हैं।

उदाहरण के लिए, जहांतक लंगूर जैसे प्राणियों का सम्बन्ध है, जिनके बारे में उनका दावा है कि वे दसियों-हजारों साल पहले रहा करते थे और केवल गुड़गुड़ाते और जानवरों की जीवन-शैली बिताया करते थे, वे भला कब और कैसे सामाजिक प्राणी बनने की आदत डाल बैठे? यह विकासवादियों को दुबिधा में डालने वाला एक प्रमुख मुद्दा है। विकासवाद के सिद्धान्त के पास इन सवालों का कोई वैज्ञानिक और तार्किंत उत्तर नहीं है कि ये लंगूर जैसे प्राणी पेड़ से ज़मीन पर क्यों उतर गए, उन्होंने दो पैरों पर खड़ा होना कैसे सीखा और उनकी बुद्धि और क्षमताओं का विकास कैसे हुआ? इनके "स्पष्टीकरण" के तौर पर वे जो कुछ कहते हैं वे पूर्व-अवधारणाओं और फंतासी पर आधारित परी-कथाओं से ज़्यादा कुछ नहीं हैं।

एक डाल से दूसरी डाल पर उछलने वाले वानरों ने भला ज़मीन पर रहना कैसे तय कर लिया? यह सवाल यदि आप विकासवदियों से पूछेंगे तो वे कहेंगे कि ऐसा जलवायु कारकों के कारण हुआ. परन्तु विकासवाद का सिद्धान्त हमारे मनो-मस्तिष्क में उठने वाले इन प्राथमिक सवालों का कोई तर्कसंगत और विवेकपूर्ण उत्तर देने की स्थिति में नहीं है। अन्य वानरों ने भी ज़मीन पर रहने का निर्णय करने वाले वानरों की देखा-देखी ऐसा ही निर्णय क्यों नहीं लिया और उन्हें वृक्षों पर रहना ही क्यों पसन्द आया? इन जलवायु परिस्थितियों ने कुछ ही वानरों को क्यों प्रभावित किया? उन्हीं समान जलवायु

परिस्थितियों में किन तत्वों ने अन्य बन्दरों को ज़मीन पर उतरने से रोक दिया? जब आप यह पूछेंगे कि यह क्योंकर संभव हुआ कि बन्दर ज़मीन पर आ उतरे और दो पैरों पर चलना सीख गए, तो विकासवादी इसके अलग-अलग विवरण देंगे। उदाहरण के लिए, कुछ तो ये कहेंगे कि ताकतवर शत्रुओं से रक्षा करने के उद्देश्य से ये लंगूरनुमा जन्तु दो पैरों पर सीधा चलने का ठान बैठे। तथापि, इनमें से किसी भी उत्तर का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।

सर्वप्रथम तो दो पैरों पर चलने का 'विकास' जैसी कोई चीज है ही नहीं। मनुष्य दो पैरों पर सीधा चलता है। यह एक खास प्रकार की गतिमयता है जिसका उदाहरण अन्य किसी भी जीव-प्रजाति में देखने को नहीं मिलता। एक और महत्वपूर्ण विन्दु जिसका स्पष्टीकरण किया जाना चाहिए वह यह है कि दो पैरों पर चलना कोई विकासपरक उपलब्धि नहीं है। बन्दर जिस तरीके से चलते-बढ़ते हैं, वह ज़्यादा आसान, गतिपूर्ण और मनुष्य के दो पैरों वाली गति से अधिक प्रभावी है।

मनुष्य किसी चिम्पैंजी की तरह एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर उछलते हुए नहीं चल सकता, न ही वह चीते की तरह 125 किलोमीटर (80 मील) प्रति घंटे की रफ़्तार से दौड़ ही सकता है। इसके विपरीत, क्योंकि हम दो पैरों पर चलते हैं, ज़मीन पर हमारी चाल बहुत मंद होती है। इसी कारण से हम प्रकृति में सबसे कम सुरक्षित प्राणी हैं। विकासवाद के सिद्धान्त के तर्कों के हिसाब से सोचें तो बन्दरों द्वारा मनुष्य की तरह दो पैरो पर चलने का चुनाव करना बेमानी है। बल्कि इसके बदले, उत्तरजीवी होने और सर्वाधिक सक्षम बनने की गरज से आदमी को ही चौपाया बन जाना चाहिए था।

विकासवाद के दावों का दूसरा गतिरोध है यह कि दो पैरों पर चलने की दशा डार्विनवाद की "क्रमिक प्रगति" के खांचे में सही नहीं बैठ पाती है, जोकि विकासवाद के सिद्धान्त का आधार है और जिसके लिए यह वांछित है कि दोपाया और चौपाया अवस्थाओं के बीच एक "यौगिक" अवस्था होनी चाहिए। तथापि 1996 में ब्रिटिश शरीर-रचना शास्त्री रॉबिन क्रौम्पटन द्वारा किए गए एक कंप्यूटरीकृत शोध से पता चला कि ऐसी कोई "यौगिक" अवस्था संभव नहीं है। क्रौम्पटन इस नतीजे पर पहुंचे कि कोई भी जीवित प्राणी या तो सीधा चलेगा या फिर चार पैरों पर। २९ दोनों के बीच किसी भी प्रकार की उच्च-संश्लेषित या "हाइ-ब्रीड" शैली संभव नहीं है क्योंकि इसके लिए अत्यधिक ऊर्जा खपत होगी। अत: किसी अर्ध-द्विपादीय जन्तु का अस्तित्व संभव नहीं है।

भला आदिकालीन लोगों ने विवेकपूर्ण सामाजिक व्यवहार का विकास कैसे किया होगा? विकासवादी प्रलाप के हिसाब से इसका उत्तर यह है कि समूहों में रहते-रहते वे बुद्धिमान बन गए और उन्होंने सामाजिक व्यवहार सीख लिया। परन्तु ध्यान देने की बात यह है कि गुरिल्ला, चिम्पांजी, बन्दर तथा और भी बहुत सारी जीव प्रजातियां समूहों में रहती हैं किन्तु इनमें से किसी में भी मानवों की तरह विवेक-बुद्धि और सामाजिक व्यवहार के दर्शन नहीं होते, ऐसा क्यों? उनमें से किसी ने भी इमारतें क्यों नहीं बनाईं? उन्हें खगोलशास्त्र क्यों नहीं भाया? उन्होंने कलाकृतियां क्यों नहीं रचीं? इसलिए क्योंकि विवेकपूर्ण रचनात्मक व्यवहार केवल मानवों को प्रदत्त विलक्षण गुण है। अतीत के वे सभी कला-निर्माण वास्तविक कला-क्षमता-समपन्न मुष्यों द्वारा बनाए गए थे। पुरातत्व के शोधों से यह अवधारणा खंडित हो चुकी है कि वे लोग कभी आदिम अवस्था में जी रहे थे।

"निएंडरथल" मानव द्वारा बनाई गई यह बांसुरी यह झलकाती है कि ये प्रारंभिक लोग भी सात सुरों के सरगम का प्रयोग करते थे जो आज पाश्चात्य संगीत का आधार है।

523

**अपने सिद्धान्तों को सहारा देने के लिए विकासवादियों के पास कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं है**

विकासवादी बिना किसी वैज्ञानिक प्रमाण के यह विचार लादे चल रहे हैं कि लंगूर और मनुष्य एक ही पूर्वज की संतान हैं। यह पूछे जाने पर कि यह विकास भला कैसे हुआ होगा, वे बिल्कुल अवैज्ञानिक तरीके से जवाब दे देते हैं : "हम नहीं जानते किन्तु हमें आशा है कि एकदिन हम जान जाएंगे"। उदाहरण के लिए, विकासवादी पुरामानव-विज्ञानी एलेन मौर्गन ने यह स्वीकार किया है :

[मानवता के विकास के सम्बन्ध में] चार महत्वपूर्ण रहस्यमय बातें ये हैं : 1. वे दो पैरों पर क्यों चलते हैं? 2. उनके रोएं क्यों गायब हो गए? 3. उनके मस्तिष्क इतने बड़े रूप में क्यों विकसित हो गए? 4. उन्होंने बोलना क्यों सीखा?

इन सवालों के रूढ़िवादी जवाब हैं : 1. 'हम अभीतक यह नहीं जान सके हैं', 2. 'हम अभीतक यह नहीं जान सके हैं', 3. 'हम अभीतक यह नहीं जान सके हैं', 4. 'हम अभीतक यह नहीं जान सके हैं'। आप अपने प्रश्नों की सूची को चाहे जितना लम्बा खींच लें, आपको यही एकरस उत्तर मिलता रहेगा। 30

524

**वे अनुसंधान जिनसे मानवजाति के इतिहास के बारे में विकासवादी तस्बीर का खंडन होता है**

माइकेल ए. क्रेमो तथा रिचार्ड एल. थॉमसन द्वारा लिखित पुस्तक "द हिडेन हिस्ट्री ऑफ द ह्यूमन रेस : फॉर्बिडेन आर्केयोलॉजी" में प्रस्तुत किए गए प्रमाण मानवजाति के विकास सम्बन्धी उस अवधारणा की तस्बीर को खांडित कर देते हैं जिसकी विकासवादियों द्वारा पुरज़ोर वकालत की जाती है। इस पुस्तक में इतिहास के ऐसे कालखंडों -- जिनके बारे में विकासवादियों की कोई अपेक्षा नहीं रही है -- के अवशेषों के बारे में दस्तावेज प्रस्तुत किए गए हैं। उदाहरण के लिए, 1950 में, कनाडा के राष्ट्रीय संग्रहालय के मानव विज्ञानी थॉमस ई. ली ने लेक ह्युरॉन के मॅनिटॉलिन द्वीप पर शेग्युंडाह नामक जगह में उतखनन कार्य किया जहां उन्हें एम हिमनद-वाहित बालुका-पट्टी की एक परत में कुछ उपकरण प्राप्त हुए। जब यह रहस्य खुला कि ये 65,000 से 125,000 साल पुराने हैं तो उनके शोध परिणाम का प्रकाशन ही टाल दिया गया - क्योंकि वैज्ञानिक जगत में जो गलत अवधारणा घर बनाए बैठी थी, उसके हिसाब से उत्तरी अमेरिका में साइबेरिया से मानव जति का पदार्पण केवल 120,000 वर्ष पूर्व ही हुआ था। अत: उन उपकरणों का उससे पूर्व के समय के होने का दावा करना असंभव था।

इसी पुस्तक में दिया गया दूसरा उदाहरण पुरातत्वविद कार्लोस अमेग़िनो का है जिन्होंने अर्ज़ेंटीना के मीरामर से 3 मिलियन वर्ष पुराने 'प्लायोसिन' अवधि के (जब भारी संख्या में स्तनपायी जीवों का प्रादुर्भाव हुआ था) पत्थरों के औजारों की खोज की थी। हिमनद की उसी परत से कार्लोस ने दक्षिण अमेरिका की एक लुप्त हो चुकी खुरदार स्तनपायी प्रजाति - टॉक्सोडन - की जंघास्थि ढूंढ़ निकाली थी। जांघ की उस अस्थि में पत्थर के बने एक तीर का नुकीला हिस्सा या भाले की नोंक धंसी पड़ी थी। बाद में एक अन्य शोधकर्ता ने उसी के अन्दर मानव जबड़े का एक टुकड़ा बरामद किया। इसके बावज़ूद डार्विनवादियों के अनुसार, पत्थर के बॉल या तीर बनाने में सक्षम मानव का विकास केवल 100,000 से लेकर 150,000 वर्ष पूर्व हुआ था। अत: कोई भी ऐसी हड्डी या तीर की नोंक जो 3 मिलियन वर्ष पुरानी हो, एक ऐसा परिदृश्य है जिसकी व्याख्या करने में विकासवादी स्वयं को असमर्थ पाते हैं। एक बार फिर इस बात से यही झलकता है कि विकासवाद का सिद्धान्त वैज्ञानिक तथ्यों के अनुरूप नहीं है।31

अपनी पुस्तक "ऍन्श्येंट ट्रेसेज" में ब्रिटिश शोधकर्ता एवं लेखक माइकेल बैगेन्ट ने यह वर्णन किया है किस प्रकार 1891 में 260 से लेकर 320 मिलियन वर्ष पूर्व की एक सोने की जंजीर मिली थी। पता चला कि यह जंजीर 8 कैरेट सोने का था, जिसका मतलब है कि इसमें 8 हिस्सा सोना और १६ हिस्से अन्य किसी धातु के थे। जंजीर का बिचला हिस्सा, जोकि कोयले के एक टुकड़े के अन्दर से निकला, जरा ढीला था जबकि इसके दोनों छोर दृढ़ता से जड़े हुए थे। कोयले पर उस ढीले हिस्से के बड़े ही अच्छे निशान पड़े मिले। इन सबसे यह मतलब निकला कि सोना उतना ही पुराना था जितना कि कोयला। वह कोयला जिसमें से वह सोना प्राप्त किया गया, 260-320 मिलियन वर्ष पुराना था। 32 उस समय-अवधि से, जबकि विकासवादियों के नज़रिये से मानव जाति का अस्तित्व भी नहीं था, सोने का टुकड़ा मिलना विकासवादियों द्वारा चित्रित किए गए मानवजाति के इतिहास को छिन्न-भिन्न करके रख देता है।

समाज के लोग आभूषणों का प्रयोग करते और अलंकृत वस्तुएं बनाते हैं, यह इस बात का प्रमाण है कि उसके नागरिक सुसभ्य जीवन का लुत्फ़ उठा रहे थे। इसके अलावा, यह भी सच है कि सोने की जंजीर बनाने के लिए तकनीकी निपुणता और उपकरण दोनों ही चीजें चाहिए। सोने के कच्चे धातु से महज पत्थर के औजारों के बल-बूते सोने की सुव्यवस्थित जंजीर नहीं बनाई जा सकती। यह स्पष्ट है कि आज से लाखों साल पहले के इन्सान आभूषण-निर्माण के बारे में जानते थे और सुन्दर वस्तुओं से आनन्दित होते थे।

ऐतिहासिक विकासवाद की अवधारणा को पलट देने वाली एक और खोज है कील की एक टुकड़ी जो अनुमानत: 387 मिलियन वर्ष पुरानी है। 'ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर दि ऍडवांसमेंट ऑफ साइन्स" के सर डेविड ब्रूस्टर के एक रिपोर्ट के अनुसार, यह कील सैंडस्टोन के एक टुकड़े में मिली थी। वह परत जिससे कि वह कील बरामद की गई, आरंभिक 'डेवोनियन' अवधि जितनी पुरानी है अर्थात 387 मिलियन वर्ष।33

ये अनुसंधान, जिनकी कड़ी में अभी और भी कई अनुसंधान शामिल किए जा सकते हैं, यह दर्शाते हैं कि मनुष्य कोई अर्ध-पशु जीव नहीं है, जैसाकि विकासवादी हमसे मनवाना चाहते हैं और उसने कभी भी पशु जीवन व्यतीत नहीं किया है। ऐसे ही उदाहरण प्रस्तुत करने के बाद, माइकेल बैगेन्ट ने यह टिप्पणी की है:

... स्पष्ट: ऐसी कोई संभावना नहीं है कि इनमें से किसी भी आंकड़े को धरती के इतिहास के सम्बन्ध में पारम्परिक वैज्ञानिक समझ के खांचे में फिट किया जा सके। वास्तव में, यदि इस प्रमाण को हमारे द्वारा समीक्षित एक भी मामले के प्रसंग मे यथार्थ की कसौटी पर कसके देखा जाए तो उससे यही संकेत मिलता है कि वाक़ई में मनुष्य अपने आधुनिक रूप और अंदाज़ में इस धरती पर बहुत लम्बे समय से अस्तित्ववान रहा है।34

पुरातत्व का इतिहास ऐसी खोजों से भरा पड़ा है और उन अन्वेषणों के समक्ष "पारंपरिक" विकासवादी सोच, जिसका विवरण बैगेन्ट ने दिया है, बड़ी ही असमंजस की स्थिति में आ पड़ी है। परन्तु यह भी सच है कि विकासवादी सोच के धनी लोग अन्वेषणों के ऐसे महत्वपूर्ण नमूनों को लोगों की निगाह से बड़ी सावधानीपूर्वक बचाए फिरते हैं और उनकी उपेक्षा कर देते हैं। डार्विनवादी अपनी विचारधारा को जीवित रखने के लिए चाहे जितना जतन कर लें, सिर उठाते हुए प्रमाण यह झलका ही देते हैं कि विकास एक झूठ है और 'सृष्टि' एक सच है जिसे आप नकार नहीं सकते। ईश्वर ने शून्य से मनुष्य की सृष्टि की, उसमें अपनी चेतना का उच्छ्वास प्रवाहित किया और उसे वह सिखाया जो वह नहीं जानता था। वह ईश्वर की ही प्रेरणा है जिसके दम पर अपने अस्तित्व की प्रथम बेला से ही मनुष्य मानव-जीवन जीने में सक्षम हो सका है।

**"ईन गेव प्रथम" के उत्खनन से प्राप्त परिणाम इतिहास के विकास सम्बन्धी व्याख्या को खंडित कर देते हैं**

किए गए शोधों से ज़ाहिर होता है कि आज से हजारों साल पहले रहने वाले इन्सान वैसे ही औजारों का इस्तेमाल

करते थे जैसेकि आजकल के ग्रामीण क्षेत्रों में किए जाते हैं। वर्तमान फ़िलिस्तीन के "ईन गेव प्रथम" नामक एक उत्खनन क्षेत्र में 15,000 ईस्वी पूर्व वर्ष पुराने एक झोंपड़े की नींव से अनाज पीसने की चक्कियां, पत्थर का कूटक (मोर्टार) तथा हंसिए ये सब चीजें प्राप्त हुई हैं। इनमें से सबसे पुराना औजार 50,000 ईसा पूर्व का है।35

इन खुदाइयों में प्राप्त इन तमाम सामग्रियों से यह पता चलता है कि मनुष्य की ज़रूरतों की फ़ेहरिश्त हर समय प्राय: एक जैसी ही रही है। मानवों द्वारा खोजे गए समाधान अपने समय की तकनीक के अनुपात में एक-दूसरे से प्राय: मिलते-जुलते ही रहे हैं। आज के ग्रामीण क्षेत्रों में फसल तैयार करने और अनाज पीसने के लिए जिन औजार-उपकरणों की आज भी नितान्त आवश्यकता होती है, वे ही उपकरण उस पुरा काल में भी प्रयुक्त किए जाते रहे थे।

527
आज अति विकसित सभ्यताओं के साथ-साथ अपेक्षाकृत पिछड़ी हुई सभ्यताओं का भी अस्तित्व है। परन्तु यदि कतिपय समाज तकनीकी दृष्टि से बहुत उन्नत हैं तो इसका यह मतलब नहीं कि मानसिक या शारीरिक रूप से भी वे बहुत आगे हैं।

528
**गलत**
ऐसे आदिम जीव जैसेकि इस चित्र में दिखाए गए हैं, कभी भी नहीं थे। ये और ऐसे ही तमाम चित्र डार्विनवादी वैज्ञानिकों की मन:कृतियां हैं जिनका कोई भी वैज्ञानिक महत्व नहीं।

लोग शिकार करके अपना जीवन चलाते हैं या खेती करके -- इससे यह तात्पर्य नहीं निकलता कि वे इस कारण अपनी मानसिक क्षमताओं में उन्नत या पिछड़े हुए हैं। दूसरे शब्दों में, यदि कोई समाज शिकार करके अपना भरण-पोषण करता है तो वो इसलिए नहीं कि वे लंगूरों से बहुत गहरा वास्ता रखते हैं, और यदि किसी समाज की आजीविका कृषि है तो इसका भी यह मतलब नहीं कि वे लंगूर अवस्था से काफी आगे बढ़ चुके हैं।

533
पिरामिडों के निर्माण में जिस रचनात्मक कुशलता और तकनीक का उपयोग किया गया था वह आज भी रहस्य बना हुआ है। ये विशालकाय निर्माण जिनकी नकल कर पाना आधुनिक तकनीक के वाबज़ूद कठिन लगता है, आज से 2,500 वर्ष पूर्व रहने वाले उच्च रूप से सक्षम लोगों द्वारा तैयार किए गए थे।

534
रुडयार्ड किपलिंग की पुस्तक "जस्ट सो स्टोरिज"

536
दुनिया की प्रसिद्धतम पाषाण संरचाओं में से एक - न्यूग्रेंज़ - 93 वृहदाकार पत्थरों से बनी है। यह अभीतक ज्ञात नहीं हो पाया है कि पत्थर के इन भारी टुकड़ों को किस प्रकार ढोया गया होगा, न ही यह कि इसके निर्माण में कौन सी तकनीक अपनाई गई थी।

537
संभवत: 'स्टोनहेंज़' का निर्माण लकड़ी से बनी किसी संरचना की आधारभूमि के रूप में किया गया होगा। इसपर बनाया गया लकड़ी का भवन हवा और आंधी से प्रभावित नहीं होता होगा। संभव है कि उस भवन का केवल आधार बच गया होगा। स्टोनहेंज़ क्यों बनाया गया और किस तरीके से, यह आज भी बहस का मुद्दा बना हुआ है परन्तु वैज्ञानिकों द्वारा खोजी गई एक प्रमुख विशेषता है इसका खगोल विज्ञान से सम्बन्ध। इस निर्माण को अंज़ाम देने वाले लोग स्वर्ग और अभियंत्रण (इंजीनियरिंग) दोनों का ही बहुत विकसित ज्ञान रखते थे।

538
दक्षिण अमेरिकी शहर ताइह्वांसो में प्रयुक्त किए गए टनों भारी इन पत्थरों को इस्पात के तारों, घिरनियों और अन्य निर्माण उपकरणों की मदद के बिना ढो पाना संभव नहीं है।

539
अनुमानत: 10 टन भारी "दि गेट ऑफ दि सन" (सूरज का दरवाज़ा) किसी ऐसे मानव समाज द्वारा नहीं बनाया गया होगा जिसके पास तकनीकी साधन न रहे हों, जैसाकि विकासवादियों का दावा है। ऐसे निर्माण विकासवादियों के इस दावे को ख़ारिज कर देते हैं कि इतिहास प्राम्भिक से विकसित अवस्था की ओर आगे बढ़ा है।

540
**11,000 साल पूर्व गोबेक्ली टेपे के पाषाण-कार्य में निपुण राजमिस्त्री**

इन तस्बीरों में दर्शित पत्थर की कलाकृतियां और इनकी बारीक आकृतियां 11,000 साल पहले उन्हें बनाने वाले लोगों की कलात्मक अभिरुचि झलकाते हैं। परन्तु इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि इन पत्थरों को तराशने के लिए कलाकारों ने अवश्य ही धातु के बने औजारों का उपयोग किया होगा, न कि एक पत्थर से दूसरे पत्थर को घिस कर। ऐसी उत्कृष्ट रचना धातु के बने लेथ, रेतियों और आरियों के प्रयोग से ही बनाई जा सकती हैं, जैसाकि पत्थर की कारीगरी के लिए वर्तमान युग में भी होता है।

ऊपर दाहिनी ओर दिए गए चित्र में ऐसी ही तकनीकों का इस्तेमाल करते पत्थर की तराशी करने वाले एक आधुनिक राजमिस्त्री को दिखाया गया है। आज से 11,000 वर्ष पूर्व के कलाकारों ने भी ऐसी ही पद्धतियों के इस्तेमाल से अपनी कलाकृतियां बनाई होंगी।

**20,000 टन भारी निर्माण आधार**

पेरू में कुज़्को के निकट स्थित इन्का सभ्यता के प्राचीन सक्साहुमान नगर में एक दीवार का निर्माण किया गया था जिसमें टनों भारी पत्थरों का प्रयोग किया गया। प्रत्येक पत्थर एक-दूसरे में इस प्रकार फिट किया गया है कि आप उनके बीच में कागज का एक टुकड़ा भी नहीं घुसा सकते। इसके अलावा, कहीं भी सिमेंट या मोर्टार का प्रयोग नहीं किया गया और फिर भी पत्थर के इन ब्लॉकों को अव्वल दर्ज़े की कुशलता और बारीकी से एक-दूसरे पर रखा गया है। आधुनिक तकनीक के प्रयोग के बावज़ूद यह नहीं जाना जा सका है कि पत्थर के इन विशाल खंडों को ऐसे आकारों मे कैसे ढाला जा सका कि वे एक-दूसरे में इतनी अच्छी तरह फिट हो जाएं।

इससे भी ज़्यादा आश्चर्यजनक तो यह है कि इस निर्माण में प्रयुक्त पत्थर का एक ब्लॉक तो और सबसे भी अधिक भारी है जिसका वज़न है लगभग 20,000 टन! सक्साहुमान के निर्माताओं ने कैसे इसे ढोया होगा यह आज भी रहस्य ही बना हुआ है। यहांतक कि आधुनिक युग की मशीनरी के इस्तेमाल से भी ऐसे आश्चर्यजनक रूप से भारी-भरकम पत्थर को उठा पाना नामुमकिन लगता है। आज की दुनिया में उपलब्ध बड़ी से बड़ी भारोत्तोलक 'पुली' या घिरनी के प्रयोग से भी ऐसे विस्मयकारी वज़न को उठा पाना अत्यंत कठिन ही होगा। इन्का सभ्यता के तत्कालीन लोगों ने ज़रूर कोई ऐसी तकनीक का प्रयोग किया होगा जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

**निर्माण में विशालकाय पत्थरों के प्रयोग के लिए भारी कुशलता चाहिए**

दसियों-हजारों टन भारी पत्थरों के प्रयोग से बनाई गई संरचनाएं आज भी लोगों को हैरत में डाल देती हैं। ऐसे भारी-भरकम पत्थरों को घिरनियों और इस्पात के केबुल जैसे आधुनिक साधनों के सहारे ही इधर-उधर ले जाया जा सकता है। लकड़ी, कुन्दों, रस्सियों और आसानी से टूट-फूट जाने वाले ताम्बे के औजारों जैसे जिन उपकरणों

के बारे में विकासवादी हमें बताते हैं -- इन पत्थरों को ज़मीन से खोद निकालना भी संभव नहीं है, फिर उन्हें ढोने-ढुलकाने, उन्हें उनकी जगह पर फिट करने और उन्हें तराशने की तो बात ही छोड़ दीजिए। छोटे से चित्र के माध्यम से यह दिखाया गया है कि विशालकाय रॅमसेस स्टॅच्यू के सिर वाले हिस्से को कैसे केवल घिरनियों और स्टील केबुल्स के सहारे ही ले जाया जा सका होगा।

**जुपीटर (वृहस्पति) का मन्दिर, बाल्बेक**

इस भवन के निर्माण में भी पत्थर के विशालकाय खंडों का इस्तेमाल किया गया था जिसे हम आज जुपीटर (वृहस्पति) के मन्दिर के नाम से जानते हैं। छोटे चित्र में लाल रंग से चिह्नित पत्थर-खंड उन तीन विशाल खंडों में से एक है जिन्हें आधार-दीवार के निर्माण में प्रयुक्त किया गया था। इनमें से प्रत्येक खंड लगभग 4.5 मीटर (15 फीट) ऊंचा, 3.5 मीटर (11फीट) चौड़ा और 19 मीटर (62 फीट) लम्बा है। उनका औसत भार करीब 800 टन है। ऐसे वज़नदार पत्थरों को खोदा गया और वहां से उन्हें ढो कर ले जाया गया, यह इस बात का द्योतक है कि निर्माण के सुविकसित साधनों को इस्तेमाल में लाया गया था।

542

**ओबेलिस्क जिनके बारे में विकासवादियों के पास कोई जवाब नहीं**

ओबेलिस्क ऐसे आश्चर्यजनक अवशेष हैं जो अतीत की सभ्यताओं से लेकर आजतक बचे हुए हैं। इन सीधे खड़े पत्थरों को -- जो औसत रूप से 20 मीटर (65 फीट) लम्बे और टनों-टन भारी हैं - खोदकर निकालने, ढोकर ले जाने, उनकी सतह तराशने और उन्हें सीधी स्थिति में जमाकर रखने के लिए अवश्य ही सुविकसित तकनीक अपनाई गई होगी। इन विशाल ओबेलिस्कों में से एक कारनक (इज़िप्ट) में करीब 1,400 ईसा पूर्व में निर्मित है। इसकी ऊंचाई है 29.5मीटर (17फीट), चौड़ाई 1.62मीटर (5.3फीट) और वज़न 325टन। एक सीधे-साबूत टुकड़े के रूप में, ऐसे बड़े और वज़नी पत्थर को उसे खोद निकाली गई जगह से वर्तमान स्थान तक लाने के लिए तकनीकी कुशलता और समुचित अध:संरचना की ज़रूरत है। पीतल और ताम्बे के बने औजार आसानी से मुड़ जाते हैं और उन्हें प्रयोग में नहीं लाया जा सकता। अत: स्पष्ट है कि लोहे और इस्पात के बने औजार काम में लाए गए होंगे। इससे विकासवादियों का यह दावा खंडित हो जाता है कि लोहा और इसके समान धातु उस समय के लोगों के लिए अज्ञात थे।

ओबेलिस्क के शीर्ष पर कल्पित भाग (लाल घेरे से दर्शित) संभवत: यह संकेत देता है कि ये खड़े पत्थर प्रदीपन छड़ों के रूप मे इस्तेमाल किए जाते रहे होंगे।

आसवन के निकट ग्रेनाइट की खान में एक अधूरा ओबेलिस्क। अन्य ओबेलिस्कों की तुलना में दुगुनी ऊंचाई का यह ओबेलिस्क 41.75 मीटर (137फीट) ऊंचा और करीब 1,968टन वज़नदार है। इस विशाल आकार के पत्थर को खोदकर निकालने और इसकी मंज़िल तक पहुंचाने के लिए अवश्य ही काफी उन्नत तकनीक का प्रयोग किया गया होगा।

543

**प्यूमा पुंकू में प्राप्त वस्तुएं विकास का खंडन करती हैं**

प्यूमा पुंकू के पिरामिड के अवशेषों के वृहद पत्थरों के आकार आगंतुकों को हैरत में डाल देते हैं। 'स्टेप' पिरामिड का एक ब्लॉक जिसके आधार का माप 60 मीटर (197 फीट) * 50 मीटर (164फीट) है, लगभव 447 टन भारी है। अन्य प्रयुक्त पत्थरों का वज़न 100 से लेकर 200 टन है। विकसवादियों की तर्ज़ पर यह मान लेना तर्क से परे होगा कि पत्थरों के इन दैत्याकार खंडों को लकड़ी के कुन्दों और मोटे रस्सों के सहारे ढोकर लाया गया होगा।

विकासवादियों का पुरातत्व प्यूमा पुंकू के ढेर सारे विशाल पत्थरों को आपस में जोड़े जाने के निशानों के बारे में कुछ भी कहने में असमर्थ है। ये धातु के बने क्लैम्प जैसे लगते हैं। बहुत समय तक यह माना जाता रहा कि टी-आक्कर के ये क्लैम्प पहले किसी भट्ठी में गलाए गए होंगे और फिर ठंढा करके उन्हें पत्थर-खंडों के तराशे गए दांतेदार हिस्सों में भरा गया होगा। परन्तु बाद में, इलेक्ट्रोन माइक्रोस्कोप स्कैनिंग की मदद से किए गए अनुसंधानों से पता चला कि उन्हें दांतेदार हिस्सों में गर्म पिघले रूप में ही ढाला गया था। स्पेक्ट्रोग्राफ से किए गए विश्लेषण से यह मालूम हुआ कि इन क्लैम्पों में मिश्रित धातु का प्रयोग किया गया था जिसका अनुपात था : 2.05% आर्जेनिक (संखिया), 15.15% ताम्बा, 0.26% लोहा, 0.84% सिलिकॉन और 1.70% निकेल (रांगा)। यह सब इस बात का प्रमाण है कि निर्माण प्रक्रिया के दौरान विगत समाज के लोगों ने उच्च कोटि के साधनों का इस्तेमाल किया था। 42

**धातु के क्लैम्प का एक निशान**

ऐसे कई निशान प्यूमा पुंकू में अक्सर देखने को मिले हैं

ओलांटोटैंबो के पत्थर-खंडों में देखे गए धातु के क्लैम्प के निशान

अंकोरवाट (कंबोडिया) की पाषाण-संरचना में देखे गए धातु के क्लैम्प के निशान

545
मिस्र (इज़िप्ट) में अपनाई गई ममी बनाने की तकनीक से यह पता चलता है कि उनके पास उच्च कोटि का मेडिकल ज्ञान भी था।

546
मिस्र के फ़राओ तूतनख़ामेन का मृत शरीर एक के अन्दर एक दो ताबूतों में सुरक्षित रखा गया था।

स्मिथ पेपिरस जो यह दर्शाता है कि किस प्रकार प्राचीन मिस्रवासी कपड़े की कतरनों से पट्टियां बनाया करते थे।
547

(1,2) सोने, चांदी और अन्य अर्धकीमती रत्नों से उत्कृष्ट रूप में निर्मित राजा के चित्र

(3) बड़ी बारीकी से बनाई गई चप्पलें

(4) कठोर सोने से बना एक छोटा और लम्बे मुहाने वाला घड़ा जिसकी मज़बूती और चमक आज भी बरकरार है।

(5) तूतनख़ामेन की ममी की गर्दन के पास से प्राप्त एक स्वर्ण आभूषण में बहुत ही उत्कृष्ट सोने का प्रयोग किया गया है। इसी ममी से 150 के लगभग अन्य आभूषण भी प्राप्त किए गए थे।

(6) चांदी के आवरण वाले स्लेज पर रखा हुआ एक सोने की परत वाली मंजूषा

(7) टैनिस से प्राप्त एक सोने, लैपिज़ और टर्क्वाइज़ निर्मित चित्र
इस आभूषणों में दर्शित उच्च कोटि की कारीगरी से पता चलता है कि स्वर्णकारी के बहुत ही उम्दा साधनों का इस्तेमाल किया जाता था। ऐसे साधनों के अभाव में ऐसी उत्कृष्ट कारीगरी संभव ही नहीं है। मिस्र की स्वर्णकारी की गुणवत्ता और लालित्य आज के युग के समकक्ष ही है।

548
मिस्र की सुविकसित सभ्यता का एक निर्विवाद परिचायक है वास्तुशिल्प और अभियंत्रण के बारे में उनका प्रशस्त ज्ञान।

549
प्रचीन मिस्र की पोशाकों के नमूने

550

रिंड पेपिरस

551

**गीज़ा के पिरामिड के बारे में आश्चर्यजनक तथ्य**

गीज़ा के पिरामिड के बारे में किए गए कुछ शोधों से पता चला है कि प्राचीन मिस्रवासियों के पास गणित और ज्यामिति का बहुत ही उच्च कोटि का ज्ञान था। गणित और ज्यामिति के ज्ञान के अलावा, पिरामिडों की योजना बनाने वाले लोगों को पृथ्वी के माप-जोख, इसकी परिधि, इसके अक्षांश के झुकाव के कोण वगैरह की भी अच्छी-खासी ज़ानकारी थी। 2,500 से 2,000 ई.पू. में निर्मित होने वाले इन पिरामिडों के बारे में यह जान कर और भी अधिक अश्चर्य होता है कि उन्हें पाइथागोरस, आर्किमेडीज़ और इल्युसिड जैसे महान ग्रीक (यूनानी) गणितज्ञों के भी जन्म से भी पहले बनाया गया था।

- ग्रेट पिरामिड के कोण नील नदी के डेल्टा क्षेत्र को दो बराबर हिस्सों में बांटते हैं।

- गीज़ा के तीन पिरामिडों का निर्माण इस प्रकार किया गया है कि वे एक पाइथागोरियन त्रिभुज की रचना करते हैं जिनकी भुजाओं का अनुपात 3:4:5 है।

- पिरामिड की ऊंचाई और उसकी परिधि के बीच का अनुपात किसी वृत्त की त्रिज्या और उसकी परिधि के समानुपातिक है।

- ग्रेट पिरामिड एक विशालकाय सूर्य-घड़ी है। अक्टूबर-मध्य और मार्च के प्रारंभ में इसकी छायाएं ऋतुओं और वर्ष की लम्बाई बताती हैं। पिरामिड के इर्द-गिर्द के पत्थरों की लम्बाई दिनभर की छाया की लम्बाई के बराबर है।

- पिरामिड के चौकोर आधार की सामान्य लम्बाई 365.342इज़िप्शियन यार्ड (उस समय के माप की एक ईकाई) के बराबर है। यह एक सौर वर्ष में दिनों की संख्या के बहुत ही निकट है (वर्ष के दिनों की गणना 365.224 की गई है)।
- ग्रेट पिरामिड तथा पृथ्वी के केन्द्र के बीच की दूरी उतनी ही है जितनी कि पिरामिड और उत्तरी ध्रुव के बीच की।

- पिरामिड में, आधार की परिमिति में इसकी ऊंचाई के दोगुने से भाग देने पर संख्या 'पाइ' प्राप्त होती है। पिरामिड की चारों भुजाओं का सतह क्षेत्र इसकी ऊंचाई के चतुर्भुज के बराबर है। 56

552

च्योप्स (खुफ़ु) के ग्रेट पिरामिड में लगभग 2.5 मिलियन पत्थर के टुकड़े लगाए गए हैं। मान लें कि एक दिन में 10 टुकड़े भी लगाए गए -- और इसके लिए भी कामगारों को बहुत ही कठिर परिश्रम करने की ज़रूरत है -- तू 2.5

मिलियन टुकड़ों को जमाने के लिए 684 साल का समय लगेगा। परन्तु माना गया है कि इन पिरामिडों को बनाने में औसतन 20 से 30 वर्ष का समय लगा था। इस मामूली सी संगणना से ही यह प्रकट हो जाता है कि इन पिरामिडों के निर्माण-कार्य के लिए मिस्रवासियों ने एक अलग ही किस्म का और बहुत ही उन्नत टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल किया।

553
पत्थरों के बड़े-बड़े खंडों से बनाई गई अतीत की भवन-संरचनाओं से यह साफ पता चलता है कि उस समय भी ऐसी ही मशीनरियों का इस्तेमाल किया गया होगा जैसीकि आजकल के निर्माण-कार्यों में इस्तेमाल की जाती हैं। निर्माण-यंत्रों में स्वर्ण जैसी आभूषण सामग्री का प्रयोग भी बड़ा विलक्षण लगता है। 1920 के दशक में पनामा से प्राप्त यह सामग्री ऐसी लगती है मानों वह एक 'पेन्डेंट' के रूप में लटकने वाली कोई चीज हो। यह तथा ऐसी ही अन्य सामग्रियां विकासवादियों के इस दावे का खंडन कर देती हैं कि अतीत के समाज पूर्णत: आदिम थे। सम्पूर्ण मानव इतिहास में तकनीक और ज्ञान के क्षेत्र में स्पष्ट: क्रमिक प्रगति उपलब्ध की गई थी, परन्तु इसका यह आशय नहीं है कि अतीत के लोग जानवरों की तरह रहा करते थे। अतीत के लोगों ने भी अपनी ज़रूरतों के सापेक्ष अनेक उपाय विकसित किए थे।

उस समय के फाबड़े का एक संभावित मॉडेल

आधुनिक फाबड़े का एक मॉडेल

तूतनख़ानेम के राज सिंहासन के पृष्ठ भाग का विस्तृत आरेख, कैरो (इज़िप्शियन म्युजियम)

554
**प्राचीन मिस्र की कब्रों से प्राप्त एक ग्लाइडर का मॉडेल**

अनेक सभ्यताओं के अवशेषों से यह भी संकेत मिलता है कि अत्यंत पुरा काल में वायु परिवहन का उपयोग भी होता था। यह बात माया सभ्यता के अवशेषों, मिस्र के पिरामिडों की तस्बीरों और सुमेर सभ्यता के अभिलेखों से स्पष्ट परिलक्षित होता है। उनके आधार पर हम यह तो कह ही सकते हैं कि हजारों साल पहले लोग ग्लाइडरों, हवाई जहाजों तथा हेलिकॉप्टरों का इस्तेमाल भी करते थे।

वस्तुत: क़ुरान से यह संकेत मिलता है कि बहुत पहले वायु परिवहन का अस्तित्व था:

"और हमने सोलोमन को हवा पर नियंत्रण करने की शक्ति दी -- एक महीने की यात्रा सुबह में और एक महीने की दोपहर बाद ...।" (सूरा-ए-सबा : 12)

यह बहुत हद तक संभव लगता है कि इस आय़त में जिस लम्बी दूरी का ज़िक्र किया गया है, उसे पैगम्बर सोलोमन के दिनों में बड़ी जल्दी पार कर लिया जाता हो। यह परिवहन वायु-संबलित यानों से होता होगा जिसे आजकल के हवाई जहाजों में प्रयुक्त तकनीक से ही चलाया जाता रहा होगा। (भगवान जानें क्या सच है!)

अतीत की सभ्यताओं के लोग वायु परिवहन का इस्तेमाल किया करते थे, इस बात का एक प्रमाण इज़िप्ट से प्राप्त ग्लाइडर का एक मॉडेल है। 1998 में खोज निकाला गया यह ग्लाइडर लगभग 200 वर्ष ईसा पूर्व का प्रतीत होता है। निस्संदेह आज से 2,200 वर्ष पूर्व के एक ग्लाइडर मॉडेल का दिखना बड़ी उल्लेखनीय बात है। इस पुरातात्विक खोज से इतिहास सम्बन्धी विकासवादी अवधारणा का बिल्कुल सफाया हो जाता है। इससे भी कहीं अधिक रोचक तस्बीर तब उभरती है जब उस मॉडेल की तकनीकी विशेषताओं पर गौर किया जाता है। लकड़ी से बने इस मॉडेल के डैनों का आकार और अनुपात ऐसा था कि बहुत ही कम गति के प्रयोग से वह वायुयान काफी ऊपर उठ सकता था, जैसाकि आजकल के कॉनकोर्ड वायुयानों में होता है जोकि आधुनिक सुविकसित तकनीक

का नतीजा है। इससे यह भी पता चलता है कि प्राचीन मिस्रवासी वायुगतिमयता (एयरोडायनेमिक्स) के बारे में गहन ज्ञान रखते थे।

पीछे का दृश्य

बगल का दृश्य

ऊपर का दृश्य

अनुमानत: 200 वर्ष ईसा पूर्व का एक मॉडेल ग्लाइडर

555
डॉ. रूथ हाइवर द्वारा एवाइडियस टेम्पुल की दीवारों पर खोज निकाले गए ये यंत्र आधुनिक जेट विमानों और हेलिकॉप्टरों से बहुत ही रोचक समानता रखते हैं।

556
**नज़्का से पाप्त एक वायुयान का ठोस सोने से बना एक मॉडेल**

अतीत की सभ्यताओं से सम्बन्धित वायुयान के अवशेष केवल मिस्र देश में ही प्राप्त नहीं किए गए हैं। इस तस्बीर में दिखलाया गया वायुयान का मॉडेल दक्षिण अमेरिका में कोलम्बिया की एक गुफा से प्राप्त हुआ था। अनुमानत: 1,000 वर्ष पूर्व का यह मॉडेल अब वाशिंगटन डी.सी. के स्मिथसोनियन संस्थान में रखा हुआ है।

इस छोटे से मॉडेल की वायुगत्यात्मक संरचना जिसमें इसके रडर के किनारे 'टेल' सेक्शन में प्रक्षेपित किए गए हैं, आधुनिक विमानों से भिन्न नहीं हैं। अपनी पुस्तक "दि पज़ल ऑफ ऍन्श्येंट मैन" में डोनाल्ड ई. शिटिक सोने के बने इस मॉडेल की व्याख्या इन शब्दों में करते हैं:
निस्संदेह, इस खोज के बारे में इसकी सुविकसित तकनीक के अलावा और भी बहुत सारी व्याख्याएं दी जा सकती हैं, परन्तु जब हाथ से बने इन सारे आविष्कारों को एक जगह रखकर देखा जाता है और उनके अर्थ का सावधानीपूर्वक आकलन किया जाता है तो केवल एक ही व्याख्या संभव होती है कि ये अत्यंत ही उन्नत टेक्नोलॉजी से सम्पन्न सभ्यताओं के अवशेष हैं।

* डोनाल्ड ई. शिटिक, दि पज़ल ऑफ ऍन्श्येंट मैन", पृ. 109-110

वेरा क्रूज़ से प्राप्त 200 ई.पू. की इस मूर्ति की तुलना शोधकर्ताओं ने होवरक्राफ़्ट से की है, जो वर्तमान युग का एक ऐसा यान है जो ज़मीन और पानी दोनों पर चल सकता है। इसके अगल-बगल लगे 'रोटर' (घूर्णक) वृत्ताकार घूम सकते हैं और इसका पुच्छल (टेल) 'रडर' का काम करता है। यहांतक कि इसमें धुएं के विसर्जन के लिए भी एक भाग और एक नियंत्रण पैनेल भी है। पायलट जो युनिफॉर्म पहने है, उससे बाकी तुलना भी पूरी हो जाती है।

557
**क्या "डोगस" से तात्पर्य आज से हजारों साल पहले रहने वाले पायलटों से है?**

'डोगस' मिट्टी की वे मूर्तियां हैं जिनकी ऊंचाई 7 से 30 सेंटीमीटर (2.8 से 12 इंच) के बीच है। अभीतक ऐसी 3,000 मूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिन्हें अनुमानत: 300 से लेकर 10,000 ईसा पूर्व में गढ़ा गया होगा। इस कारण वे इज़िप्ट और सुमेरिया सहित पिछली सभी सभ्यताओं से अधिक पुरानी हैं। ये डोगस 'जोमन' लोगों द्वारा बनाए गए थे जिनके बारे में माना गया है कि वे जापान के अबतक ज्ञात प्राचीनतम निवासी थे। ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के आधार पर 'जोमन' सभ्यता के लोग मिट्टी के बरतनों का प्रयोग करने वाले प्रथम लोग थे।* क्युशु की फुकुई

गुफा से एक 12,000 साल पुराना मिट्टी का बरतन खोज निकाला गया।

'डोगू' के चित्र-आरेख अतीत की अन्य सभ्यताओं से कतई भिन्न हैं। जब हम उन्हें सावधानीपूर्वक देखते हैं तो उनके वस्त्रों में विविध प्रकार के तकनीकी घटकों का समावेश मिलता है जो बहुत कुछ 20वीं सदी के पहले चौथाई कालखंड में पायलटों और गहरे समुद्र के गोताख़ोरों द्वारा पहने जाने वाले युनीफॉर्म से मिलते-जुलते से लगते हैं। डोगू के चित्रों में यह साफ दिखता है कि 'मूवमेंट्स' को सरल बनाने के लिए कई जगह 'ज्वाइंट्स' बनाए गए हैं। सांस लेने की सहुलियत के लिए सुराख़ें बनी हुई हैं। सुरक्षा के लिए आंखों पर खास 'गॉगल्स' भी बने हैं। हाथों पर उतारे जा सकने वाले दस्ताने हैं। हेल्मेट के डिज़ाइन भी खास तौर पर रोचक हैं। वे गोल आकार के हैं और उनमें सांस लेने के उपकरण, वायु-नलिकाएं और हेडफोन लगे हैं।

* छः हजार साल पुरानी अंतरिक्ष पोशाक (स्पेस सूट), वॉग्न एम. ग्रीन, भूमिका : ज़ेखारिया सिशिन

20वीं सदी के 'फ्लाइट सूट्स' और गोताख़ोरों की पोशाक से बड़े अनोखे ढंग से मिलते-जुलते ये चित्र यह बताते हैं कि विगत काल के लोगों के पास उच्च रूप से विकसित तकनीक थी। इन खोजों से यह संकेतित होता है कि इतिहास की धारा में 'विकास' नामक कोई प्रक्रिया घटित नहीं हुई है।

क़ुरान में ईश्वर का वचन है कि पैगम्बर सोलोमन (पूह) के समय की सभ्यता के पास वायु परिवहन और पानी के अन्दर गोताख़ोरी करने का स्तर बहुत ही ऊंचा था। (ईश्वर को बेहतर मालूम है)। यहां दो आय़तें दी गई हैं जिनसे संकेत मिलता है कि ईश्वरदूत सोलोमन की सेवा में लगे ज़िन्न गोताख़ोरी करना जानते थे :

इसलिए हमने हवा को उसके अधीन किया, वह जिस ओर भी निर्देशित करे, उसके आदेश पर सहजतापूर्वक प्रवाहित होने वाला बनाया। और हर दैत्य, हर शिल्पकार और गोताख़ोर को ..... (सूरा सद : 36-37)

558

**दो हजार साल पुराना ऍनालॉग कंप्यूटर : विकासवादी परिदृश्य को चकित कर देने वाली खोज**

सन 1900 में, पानी के अन्दर प्राप्त आधुनिक पुरातत्व की प्रथम महत्वपूर्ण खोज के रूप में ऍगिअन समुद्र के पश्चिमी मुहाने पर अवस्थित क्रीट और काइथेरा टापुओं के दरम्यान एक डूबा हुआ जहाज प्राप्त हुआ। यह जहाज चित्रों और कलात्मक सुराहियों से लदा हुआ था जिनके अब टुकड़े-टुकड़े हो चुके हैं।

माना गया कि ज़्यादातर कलाकृतियां आरंभिक ईसा-पूर्व अवधि में यूनानी कलाकारों द्वारा बनाई गईं थीं। परन्तु उन कलाकृतियों के बीच चूने में तब्दील हो चुका ताम्बे का एक टुकड़ा मिला जिसका कोई अर्थ समझ में नहीं आ सका। बाद में कई सालों के शोध के बाद यह ज्ञात हुआ कि यह रहस्यमय कलात्मक टुकड़ा आश्चर्यजनक रूप से जटिल एक वैज्ञानिक यंत्र था।

जब यह रोचक यंत्र धीरे-धीरे सूखने लगा तो इसके लकड़ी के पंजर और अन्दर के हिस्सों में दरार आई और इससे चार सपाट हिस्से बाहर उभरे। एक गियरदार पहिये के भीतरी भाग में एक लिखावट मिली जिसके अर्थ को समझना बड़ा ही कठिन था। वैज्ञानिकों का मत था यह एक प्रकार का नाविक यंत्र था। इस सामग्री के बारे में कई सुझाव रखे गए किन्तु कोई सुनिश्चित निष्कर्ष नहीं मिला। 1951 में येल प्रोफेसर डेरेक जे. डि सॉला प्राइस के अनुसंधानों के घटित होने से पूर्व तक इसके बारे में तरह-तरह के बस अन्दाज़ ही लगाए जाते रहे।

उस यंत्र को फिर से बनाने के इरादे से प्राइस और उनके ग्रीक सहकर्मियों ने एक्सरे और गामा किरणों से बमबारी कर-कर के इसकी गहन जांच की। यंत्र के अन्दर उन्होंने एक के ऊपर एक सुव्यवस्थित रखे गए भिन्न-भिन्न आकार के गियर देखे। इन गियरों के मूल संभावित अनुपातों के बारे में लम्बी-चौड़ी संगणना करने के बाद प्राइस एक चकित कर देने वाले निष्कर्ष पर पहुंचे। प्राचीन ग्रीसवासियों ने सूर्य, चन्द्र और ग्रहों की विगत, वर्तमान

और भावी गतियों के वास्तविक निर्धारण के लिए यह एक तरीका विकसित किया था। यह "ऍन्टीकाइथेरा" उपकरण 2,000 साल पुराना एक ऍनालॉग कंप्यूटर था। 1

इस खोज ने विकासवादियों के उन दावों को चकित करके रख दिया कि 'हेलेनिस्टिक युग' (चतुर्थ से प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का समय) से पहले केवल अविकसित प्रकार के बुनियादी आविष्कार ही किए गए।

अपने मूल रूप में यह लकड़ी के आयताकार बक्से में रखा ताम्बे का बना एक यंत्र था। सामने और पीछे की ओर तांबे के बने दरवाज़े लगे थे जिसपर शिल्पी आविष्कारक ने विस्तृत सूचना अंकित कर रखी थी। यंत्र द्वारा प्रस्तुत की गई सूचना को पढ़ने के लिए तीन 'डायल' बने थे। पहले डायल में दो 'स्केल' या पैमाने थे जिनमें से एक राशि-चक्र के चिह्नों को प्रदर्शित करता था और दूसरे पर वर्ष के महीनों के ग्रीक नाम अंकित किए गए थे।

* पहला डायल साल के प्रत्येक दिन में राशि-चक्रों से गुजरते हुए सूर्य की स्थिति को प्रदर्शित करता था।
* दूसरा डायल सौर ग्रहणों के 18 वर्षीय चक्र को दर्शाता था।
* तीसरा डायल चन्द्रमा की विविध कलाओं को रूपांकित करता था।

'इनपुट' डालने के लिए एक हैंडिल का प्रयोग किया जाता था जिसे समानान्तर धरातलों पर जड़े हुए ताम्बे के लगभग उनतालिस (39) गियरों वाले एक चक्के को घुमाने के उद्देश्य से दिनभर में एक बार घुमा दिया जाता था। ऐसा करने से एक ड्राइविंग ह्वील गतिशील हो उठता था जोकि एक दांतेदार टर्नटेबुल के माध्यम से जोड़े गए गियरों की दो कतारों को गतिशील कर देता था। टर्नटेबुल एक विभेदक 'गियर ट्रेन' का काम करता था और जब इनपुट हैंडल को घुमाया जाता था तो दो डंडे विभिन्न गतियों से घूमने लगते थे। विभेदक गियर, जिन्हें आधुनिक वाहनों में मोड़दार स्थितियों में टायरों को अलग-अलग गतियों में घुमाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है, का आविष्कार १७वीं सदी में किया गया था। प्राइस ने उस यंत्र को "आधारभूत यांत्रिक आविष्कारों में सार्वकालिक रूप से सर्वश्रेष्ठ" कहा था।2

इस खोज से दुनिया भर में बड़ी आपाधापी मची। इससे विकासवादियों की "तकनीकी विकास" सम्बन्धी सारी काल्पनिक रूप-रेखा ही पलट गई। विकासवादियों के अनुसार, 2,000 साल पुरानी किसी भी सभ्यता के पास परिष्कृत टेक्नोलॉजी तो होनी ही नहीं चाहिए थी। वे तो बस मामूली कल-पुर्जों से अपना काम चलाते थे। परन्तु यूनान के प्रचीन मेकैनिकों द्वारा आविष्कृत इस यंत्र से यह बात झलक गई कि बीते युग की सभ्यताएं वैसी नहीं थीं जैसीकि विकासवादी कल्पना करते थे। उन्होंने शताब्दियों पहले एक खगोलीय कंप्यूटर बना डाला था और वे कई मध्यकालीन सभ्यताओं से कहीं आगे थे। (पहला ऍनालॉग कंप्यूटर 1931 में वॅनेवर बुश द्वारा विकसित किया गया था.)3 अपनी पुस्तक "दि पज़ल ऑफ ऍन्श्येंट मैन : ऍडवांस्ड टेक्नोलॉजी इन पास्ट सिविलाइजेशन्स?" में डोनाल्ड ई. शिटिक ने यह टिप्पणी की है :

संभवत: कहीं ज़्यादा आश्चर्यजनक है ईसा पूर्व काल में ऍगियन समुद्र में डूब चुके एक जहाज से खोजी गई वस्तु। यह एक प्रकार का यांत्रिक संगणक उपकरण लगता था। आधुनिक कंप्यूटर दो प्रकार के हैं: ऍनालॉग एवं डिजिटल। ईसा पूर्व काल में डूब चुके जहाज पर प्राप्त यह वस्तु स्पष्ट रूप से एक परिष्कृत ऍनालॉग कंप्यूटर था।4

इस अनुसंधान के सम्बन्ध में, हेलेना स्मिथ द्वारा "दि ऑब्जर्वर" में लिखित एक आलेख का शीर्षक था : "रिवील्ड: वर्ल्ड्स ओल्डेस्ट कंप्यूटर" (दुनिया का प्रचीनतम कम्प्यूटर : अब प्रकट)। निम्नांकित अंश उसी आलेख से उद्धृत है :

समुद्र-सतह पर कॅल्शियम के कवच वाले ताम्र यंत्र की खोज के बाद, निगूढ़ लिखावट से यह परिलक्षित होता है कि यह दुनिया का प्राचीनतम कम्प्यूटर था जिसकी मदद से सूर्य, चन्द्रमा और ग्रहों की गतियों

का आकलन किया जाता था। इस यंत्र के बारे में शोध कर रहे ऐंग्लो-ग्रीक पुरातात्विक दल के ज़ेनोफोन मूसास कहते हैं : "बहुत ही जल्द हम रहस्यों का पता लगा लेंगे. यह खगोलीय एवं गणितीय ज्ञान के बारे में एक पहेली है ..."। लंदन साइन्स म्युज़ियम के पूर्व क्युरेटर ने कहा है कि उक्त उपकरण इस बात का सर्वोत्तम प्रमाण है कि प्राचीन लोग तकनीकी रूप से कितने उन्नत थे। "जिस निपुणता से इसे बनाया गया उससे उपकरण-निर्माण के क्षेत्र में एक ऐसे स्तर का पता चलता है जिसका पुनर्जागरण काल से पहले तक कोई सानी नहीं था"।

बहुत से विशेषज्ञों का कहना है कि यह विज्ञान का इतिहास लिखे जाने की पूरी प्रक्रिया को ही बदल डालने वाली खोज है। ऍथेन्स के राष्ट्रीय तकनीकी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थियोडोसियस के अनुसार: "कई तरह से देखने पर, यह पहला ऍनालॉग कंप्यूटर लगता है। इससे प्राचीन तकनीकी विकास को देखने का हमारा सारा नज़रिया ही बदल जाएगा।"

विशेषज्ञों द्वारा की गई ये टिप्पणियां बड़ी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ऐंटीकाइथेरा यंत्र जैसे कंप्यूटर के निर्माण में मानव जाति को लगभव 20 से भी अधिक सदियां लग गईं जबकि 2,000 साल पूर्व ग्रीक लोगों को ऍनालॉग कंप्यूटर बनाने का ज्ञान था। इन सबसे यह पता चलता है कि उतने पुराने युग में रहने वाले लोगों के पास कालान्तर में विकसित हुए समाजों की तुलना में भी कहीं उन्नत सभ्यता थी -- एक ऐसा तथ्य जिसकी व्याख्या विकासवाद के नज़रिये से नहीं की जा सकती।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिस समय यूनान (ग्रीस) के लोग अपनी सुविकसित सभ्यता के आनन्द में निमग्न थे, उसी समय दुनिया के कई हिस्सों में पिछड़ी हुई सभ्यताएं भी सांस ले रही थीं, परन्तु यह सच्चाई कि कुछ समाज उन्नत और कुछ समाज अवनत थे, इस बात की परिचायक नहीं है कि मानवजाति लंगूरों से विकसित हुई प्रजाति है या यह कि कोई समाज किसी पूर्ववर्ती समाज का ही विकसित प्रारूप है, जैसाकि डार्विनवादियों का दावा रहा है। ऐसी व्याख्या तथ्यहीन तथा तर्क और विज्ञान के प्रतिकूल है।

1. http://www.dreamscape.com/morgana/triton2.htm
2. उपरोक्त
3. इंसायक्लोपीडिया ब्रिटैनिका ऑनलाइन - www.britanicca.com/eb/article-9018261/Vannevar-Bush
4. डोनाल्ड ई. शिटिक, "दि पज़ल ऑफ ऍन्शेंट मैन : ऍडवांस्ड टेक्नोलॉजी इन पास्ट सिविलाइजेशंस?", क्रिएशन कम्पास, 1998, पृ. 34-35
5. "रिवील्ड: वर्ल्ड्स ओल्डेस्ट कंप्यूटर" : हेलेना स्मिथ, 'दि ऑब्ज़र्वर', अगस्त 20, 2006. http://observer.guardian.co.uk/world/story/0,,1854232,00.html

यहां दिया गया चित्र एक गियरदार पहिये का है जिसे ऍगियन समुद्र से प्राप्त किया गया था। माना गया है कि यह एक प्राचीन कंप्यूटर का हिस्सा था।

560

**क्या प्राचीन मिस्र में बिजली थी?**

डेंडेरा के हैथर मन्दिर में खुदी हुई चित्र-आकृतियों से यह संभावना प्रकट होती है कि प्राचीन मिस्रवासियों को बिजली का ज्ञान था और वे इसका उपयोग करते थे। इन चित्र-आकृतियों पर गौर करने से आपको लगेगा कि आजकल की ही तरह उस समय भी उच्च-वॉल्टेज़ इंस्युलेशन का प्रयोग ज़रूर किया गया होगा। बल्बनुमा आकृति को एक आयताकार खंभे (द्ज़ेड स्तम्भ के नाम से प्रसिद्ध और अनुमान है कि वह इंस्युलेटर का काम करता था) के सहारे खड़ा किया गया है। तस्बीर में दिए

गए आकार और बिजली के लैम्पों में जो समानता दिख रही है वह चकित कर देने वाली है। 58 1933 में प्राचीन मिस्र की धातु-सामग्रियों का विश्लेषण करते हुए डॉ. कॉलिन जी. फिन्क - जिन्होंने टंगस्टन के फिलामेंट वाले बिजली के बल्बों का आविष्कार किया था - ने पाया कि आज से 4,300 वर्ष से भी पूर्व मिस्रवासी ताम्बे पर ऐंटिमोनी नामक धात्विक तत्व की प्लेटिंग करने की विधि जानते थे । इस विधि द्वारा वही परिणाम प्राप्त होता था जोकि आज के युग में इलेक्ट्रोप्लेटिंग विधि से प्राप्त होता है। 59

इन चित्र-आकृतियों में वर्णित प्रणाली के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों ने यह जानने के लिए प्रयोग किए हैं कि क्या उससे प्रकाश भी विकीर्ण होता था। ऑस्ट्रिया के विद्युत अभियंता वाल्टर गार्न ने उन आकृतियों का गहन अध्ययन किया और द्ज़ेड स्तम्भ इंस्युलेटर, बल्ब और ट्विस्टिंग वायर को नए सिरे से बनाकर देखा। उन्होंने जो मॉडेल बनाया वह वाक़ई काम करने लगा और उससे प्रकाश भी उत्पन्न हुआ। 60

प्राचीन मिस्रवासियों ने बिजली का प्रयोग किया होगा इस बात का एक सबूत यह तथ्य है कि उनकी कब्रों और पिरामिडों की आंतरिक दीवारों में किसी प्रकार की कालिख देखने को नहीं मिली। यदि, विकासवादियों के कहे अनुसार, उन्होंने टॉर्चों और तेल के दीयों का इस्तेमाल किया होता तो कहीं ना कहीं कालिख के भी निशान होते। परन्तु ऐसा कहीं कोई निशान नहीं है, घुप्प अंधेरे हिस्सों में भी नहीं। यह संभव नहीं है कि आवश्यक प्रकाश के अभाव में ये संरचनाएं पूरी की गई होंगी और न ही दीवारों पर बने भव्य पेन्टिंग्स ही बनाए जा सकते थे। इससे इस संभावना को बल मिलता है कि प्राचीन इज़िप्ट में निस्संदेह विद्युत का प्रयोग किया जाता रहा होगा।

डेंडेरा के हैथर मन्दिर की इन चित्र-आकृतियों का आधुनिक बल्बों से मिलता-जुलता लगना वैज्ञानिकों को हैरान करने वाली बात लगी।

इज़िप्ट के चित्रों में अक्सर दर्शाया गया द्ज़ेड स्तम्भ -- संभव है यह एक प्रकार का विद्युत साधित्र रहा हो। संभव है कि कॉलम जेनरेटर रहा हो जिससे प्रकाश मिलता हो।

561
फिलिप जॉनसन

562
3,000 ईसा पूर्व के बाद से सतत रूप से बड़े-बड़े नगर-राज्यों की स्थापना करते हुए सुमेरियाई लोगों ने विशाल भू-भागों पर अपने साम्राज्य स्थापित किए।

प्राचीन समाजों द्वारा स्थापित की गई गहन सभ्यताओं से यह प्रमाणित होता है कि "आदिम अवस्था से सभ्य अवस्था की ओर विकास" वाली डार्विनवादी परिकल्पना सच्चाई से परे है। सुमेरियाई सभ्यता इसका एक उदाहरण है।

563
चित्र में दर्शित असीरियाई रथ जिस प्रकार किसी उद्वेलक बल के अभाव में भी चलता है, वह उल्लेखनीय है। सिपाही का कवच यह दर्शाता है कि उस समय धातु-कला कितनी विकसित अवस्था में थी। उनके कपड़े पूरी तरह कवच में ढंके हैं ... इस प्रकार कि सिर से पैर तक सुरक्षित रहते हुए भी वे बड़ी सहजता से चल-फिर सकते थे। रथ भी इतना मज़बूत लगता है कि युद्ध की परिस्थितियों और भीषण आघातों को झेल सके, खास तौर पर इसलिए कि इसका उपयोग दुर्गभेदक के रूप में भी किया

जाता था। रथ की शक्ति और मज़बूती और इसमें प्रयुक्त की गई सामग्रियां खास तौर पर चकित करने वाली हैं। (2,000 ई.पू. से 612 ई.पू.)

564
अपने आकलनों के आधार पर सुमेरियाई लोगों ने सोचा कि हमारा सौरमंडल 12 ग्रहों से बना है जिसमें सूरज और चन्द्रमा भी शामिल हैं। 12वां ग्रह, जिसे कतिपय स्रोतों में 'निबीरू' नाम से अभिहित किया गया है, वह वास्तव में दसवां ग्रह है जिसे 'प्लैनेट-एक्स' के नाम से जाना जाता है और जिसके अस्तित्व को वैज्ञनिकों ने भी हाल ही में स्वीकार किया है।

तारक पट्टी (ऍस्टेरॉयड बेल्ट)
मंगल
चन्द्रमा
पृथ्वी
बुध
शुक्र
प्लूटो
नेपच्यून (वरुण)
सूर्य
वृहस्पति
शनि
यूरेनस (यम)

ऊपर के चित्र में सुमेरियाई लोगों का सौरमंडलीय आरेख दिखाया गया है। सूर्य बीच में दर्शित है तथा सारे ग्रह उसकी परिक्रमा कर रहे हैं।

565
सुमेरियाई लोग एक बारहमासा पंचांग प्रयोग में लाते थे। उन्होंने कई तारामंडलों के आरेख बनाए और बुध, शुक्र तथा वृहस्पति जैसे ग्रहों की गति का पता लगाया। उनकी संगणना कितनी सही थी इसकी पुष्टि हमारे समय के अनुसंधानों तथा कंप्यूटर के आकलनों से होती है।

ज़िगुरत

निमरूद लेंस

सन् 1850 में पुरातत्वविद सर जॉन लेयार्ड द्वारा किए गए एक आविष्कार से यह सवाल उठा कि सर्व-प्रथम लेंस का उपयोग किसने किया? वर्तमान में जिसे हम इराक के नाम से जानते हैं, वहाँ किए गए कई उत्खननों से लेयार्ड ने 3000 साल पुराना एक लेंस खोज निकाला। वर्तमान में ब्रिटिश म्युजियम में प्रदर्शित यह टुक़डा दर्शाता है कि पहले-पहल ज्ञात लेंस का उपयोग असीरियन सभ्यता के युग में किया गया था। रोम विश्वविद्यालय के प्रोफेसर ग्योवॅनी पेटिनैटो का विष्वास है कि यह अश्म-स्फटिक लेंस - जोकि उनके अनुसार वैज्ञानिक इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश डालने वाली एक महत्वपूर्ण खोज है - इस बात का भी विश्लेषण कर सकता है कि प्राचीन असीरियाई लोग खगोल विज्ञान के बारे में इतना कैसे जानते थे कि उन्होंने शनि ग्रह और इसके वलयों का पता लगाया। 66

आखिर इस लेंस का क्या उपयोग किया जाता था? इस प्रश्न के उत्तर पर बहस की जा सकती है, परन्तु फिर भी यह स्पष्ट है कि अतीत के सभी समाज साधारण जीवन ही नहीं जी रहे थे, जैसाकि विकासवादी वैज्ञानिकों का मत रहा है। अतीत के समाज विज्ञान और तकनीक का भी उपयोग कर रहे थे, उन्होंने ठोस रूप से स्थापित सभ्यताओं का भी निर्माण किया था और विकसित जीवन-शैली का लुत्फ उठा रहे थे। उनके रोज़मर्रा के जीवन के बारे में आज हमारे पास बहुत ही सीमित जानकारी उपलब्ध है परन्तु व्यावहारिक रूप से हम जितना भी कुछ जानते हैं उनसे यह दर्शित होता है इनमें से कोई भी समाज विकास की प्रक्रिया से नहीं गुज़रा था।

3000 साल पुराना लेंसनुमा टुक़डा एक ऐसी महत्वपूर्ण खोज के रूप में वर्णित किया गया है जो संभवत: "वैज्ञानिक इतिहास का पुनर्लेखन" कर सकेगा और यह सिद्ध कर सकेगा कि इतिहास हमें बतलाता है कि जब से मानवजाति का अस्तित्व है, वह इसी मस्तिष्क, इसी क्षमता, इन्हीं अभिरुचियों से सम्पन्न रही है जैसीकि वह आज है।

बगदाद बैट्री

सन् 1938 में, जर्मन पुरातत्वविद् विल्हेम कूनिग ने "बगदाद बैट्री" नामक एक गुलदस्तानुमा वस्तु का पता लगाया। परन्तु यह निष्कर्श कहाँ से निकला कि लगभग 2000 साल पुरानी यह वस्तु एक बैट्री के रूप में इस्तेमाल की जाती थी? अगर वस्तुत: यह एक बैट्री के रूप में इस्तेमाल की जाती थी - जैसाकि शोध से साफ पता चलता है - तो वे सारे सिद्धांत जो हमें बताते हैं कि सभ्यता हमेशा विकसित होती है और यह कि अतीत के सारे समाज आदिम स्थितियों में रह रहे थे, पूर्णत: ख़ारिज हो जाते हैं। मिट्टी के इस पात्र में, जोकि एस्फाल्ट और बिटयुमेन से सीलबंद है, तांबे का एक बेलन है। इस बेलन की पेंदी तांबे के एक डिस्क से आवृत है। एस्फाल्ट के बने रोधक में लोहे की एक छ़ड रखी है जोकि बेलन को बिना छुए उसमें लम्बित है।

इस पात्र को इलेक्ट्रोलाइट से भरे जाने पर विद्युत-धारा उत्पन्न करने वाली बैट्री परिणामित होती है। इस घटना को विद्युत-रसायनिक प्रतिक्रिया के नाम से जाना जाता है और यह वर्तमान युग में काम करने वाली बैट्रियों से बहुत ज्यादा भिन्न नहीं है। प्रयोगों के दौरान, बगदाद बैट्री पर आधारित कुछ पुनर्निमितियों से 1.5 से लेकर 2 वोल्ट तक का विद्युत जनित किया जा सका।

इससे एक बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल उठ ख़डा होता है : 2000 साल पहले भला बैट्री का इस्तेमाल किस कार्य के लिए किया जाता रहा होगा? चूंकि ऐसी बैट्री मौ़जूद थी, अत: स्पष्ट है कि उसे ऊर्जा प्रदान करने वाला कोई यंत्र या उपकरण भी रहा होगा। इससे एक बार फिर यह स्पष्ट हो जाता है कि 2000 साल पहले रहने वाले लोगों के पास उससे कहीं ज्यादा सुविकसित तकनीक थी -- और कहीं ज्यादा बेहतर जीवन शैली -- जैसाकि पहले सोचा गया था।

यदि इस पात्र को इलेक्ट्रोलाइट से भर दिया जाए तो विद्युत-तरंग उत्पन्न करने वाली एक बैट्री बन जाएगी। इस परिदृश्य को विद्युतीय-रसायनिक प्रक्रिया के नाम से जाना जाता है और वर्तमान काल की बैट्रियां जिस विधि से काम करती हैं वह उससे भिन्न नहीं है। बगदाद बैट्री के नमूने के आधार पर नए सिरे से बनाई गई बैट्री से 1.5 से लेकर 2 वोल्ट तक की बिजली पैदा की गई।

इससे एक बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल उठता है : आज से 2,000 साल पहले बैट्री का भला क्या उपयोग होता होगा? चूंकि ऐसी बैट्री थी, अत: स्पष्ट है कि ऐसे यंत्र और उपकरण भी रहे होंगे जो इससे शक्ति पाते होंगे। इस बात से एक बार पुन: परिलक्षित हो जाता है कि आज से 2,000 वर्ष पूर्व रहने

वाले लोग उससे कहीं अधिक उन्नत तकनीक से सम्पन्न थे - और इस प्रकार उनका जीवन-स्तर उससे कहीं ज़्यादा ऊंचा था -- जितना कि पहले सोचा गया था।

ऍस्फाल्ट से बना रोधक
ताम्बे का बेलन
लोहे की छड़
इलेक्ट्रोलाइट का घोल

2,000 वर्ष पूर्व की "बगदाद बैट्री" नामक इस वस्तु के सम्बन्ध में किए गए शोध यह दर्शाते हैं कि इसे बिजली पैदा करने के लिए एक बैट्री के रूप में प्रयोग में लाया जाता था।

568
**प्राचीन माया सभ्यता में अक़्समल नगर के एक भवन के अवशेष**
कुछ विकासवादी वैज्ञानिक यह दावा करते हैं कि माया सभ्यता के लोग धातु के बने औजारों का इस्तेमाल नहीं करते थे। यदि यह सच है तो फिर माया सभ्यता के अवशेषों से प्राप्त पत्थरों की उच्च्कोटिक कलाकृतियों के बारे में हम क्या व्याख्या दे सकते हैं? आर्द्र जलवायु वाले युकाटान के बरसाती जंगलों में धातु के बने हुए उपकरणों का बड़ी तेजी से ऑक्सीकरण होगा और वे नष्ट हो जाएंगे। संभवत: यही कारण है कि माया सभ्यता की धात्विक सामग्रियां आज के दौर तक अपना अस्तित्व नहीं बचा सकी हैं। परन्तु पत्थर की जो संरचनाएं बच गई हैं वे यह स्पष्ट कर देती हैं कि ऐसी लालित्यपूर्ण और बारीक कलात्मकता वाली कलाकृतियों का निर्माण महज़ पत्थर के औजारों से किया जाना नामुमकिन ही था।

569
**पुन:निर्मित रोजॅलिया टेम्पुल का ऊपरी हिस्सा**

पत्थर पर की गई गहन नक्काशी से ज्ञात होता है कि माया सभ्यता के लोगों को पत्थरों पर कारीगरी करने के लिए आवश्यक तकनीक का ज्ञान था, और स्पष्ट है कि आरी, छेनी, बरमा जैसे औजारों के अभाव में ऐसा कर पाना लगभग असंभव ही था।

माया सभ्यता के लोगों द्वारा प्रयुक्त पंचांग वर्तमान में प्रचलित 365-दिवसीय ग्रिगोरियन कॅलेंडर से लगभग मिलता-जुलता था। माया के लोगों ने गणना की कि एक वर्ष की अवधि 365 दिनों से कुछ ज़्यादा होती है। (दाहिने)

अज़तेक का एक कॅलेंडर पत्थर (ऊपर)

570
**चिचेन इत्ज़ा में योद्धाओं का मन्दिर**

अतीत के लोगों की उन्नत सभ्यता का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है वह खगोलीय ज्ञान जिससे वे उस एक दिन की गणना कर सकते थे जिसे प्रत्येक 6,000 वर्ष पर शुक्र के परिक्रमण-पथ से घटाने की ज़रूरत होती है।

571
नीचे: मायाई शासक पाश्कल की कब्र की ताबूत के आवरण पर बनी गहन चित्राकृति। वह वाहन जिसपर पाश्कल को बैठा हुआ दिखाया गया है, एक प्रकार का मोटरबाइक लगता है जो, संभव है, उस

समय, किसी बाहरी शक्ति-स्रोत से चलाया जाता रहा हो।

572

बिना किसी वैज्ञानिक प्रमाण के भी विकासवादी यह मान्यता रखते हैं कि पुराकाल के लोग आदिम तरीके से रहने वाले आदिम लोग थे और बुद्धि-विवेक का विकास उनमें बाद में जाकर हुआ। परन्तु पुरातात्विक खोजों से इस बात का खंडन हो जाता है। उदाहरण के लिए, माया सभ्यता के प्राचीन शहर टिकल मे किए गए उत्खननों से अभियंत्रण और नगर-नियोजन के अश्चर्यजनक प्रमाण मिलते हैं। हवाई फोटोग्राफों से ऐसा लगता है कि माया सभ्यता के नगर सड़कों के एक विस्तृत नेटवर्क के ज़रिये एक-दूसरे से अच्छी तरह जुड़े हुए थे। इन तमाम बातों से यह साफ हो जाता है कि सुविकसित सभ्यताएं इतिहास की हर अवधि में विद्यमान रही हैं।

**कोपन से प्राप्त मायाई सभ्यता के यांत्रिक पहिये**

574

अभी भी अनसुलझी नाज़का लाइनें

नाज़का लाइनें, लीमा के पेरूवियन शहर के बाहर, ऐसी खोजों में से एक हैं जिन्हें समझा पाने में वैज्ञानिक असमर्थ हैं। इन सबसे आश्चर्यजनक लाइनों का पता न्यूयॉर्क की लॉन्ग आइलैंड युनिवर्सिटी के डॉ. पॉल कोसोक द्वारा वर्ष 1939 में विमान द्वारा किए गए अध्ययन से लगाया गया था। कई किलोमीटर लंबी ये लाइनें हवाई अड्डे की हवाई पट्टी जैसी दिखाई पड़ती हैं और इनमें विभिन्न पक्षियों, बंदरों तथा मकड़ियों का चित्रण भी है। इन लाइनों को शुष्क पेरूवियन रेगिस्तान में किसने, क्यूं और कैसे बनाया था, यह अभी भी एक रहस्य बना हुआ है। दूसरी ओर, जिसने भी इन्हें बनाया वे स्पष्ट तौर पर आदि मानव तो नहीं रहे होंगे जैसाकि कुछ वैज्ञानिक मानते हैं।

ये लाइनें, जोकि सिर्फ ऊपर से सही नज़र आती हैं, बिना कोई गलती किए बनाई गई थी, जोकि ऐसी असामान्य चीज है जिसपर पर्याप्त ध्यान देने की जरूरत है।

1. 45 मीटर (150 फीट) लंबी मकड़ी का चित्र
2. एक मानव आकृति
3. एक 140 मीटर (450 फीट) लंबे गिद्ध का बिंब
4. एक बंदर की बड़ी आकृति, 58 मीटर

(190 फीट) चौड़ी और 93 मीटर (305 फीट) लंबी

5. एक पेड़ और हाथों की आकृतियां
6. एक कुत्ते की आकृति

575

इतिहास काल के दौरान, भारी वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति सहित सभी क्षेत्रों में शानदार सुधार किए गए हैं। लेकिन इन बदलावों का, "विकास" के रूप में जैसाकि भौतिकवादी कहते हैं, उल्लेख करना अतार्किक और अवैज्ञानिक है। संस्कृति एवं ज्ञान के भंडार का धन्यवाद जिसकी वजह से ऐसे क्षेत्रों में विज्ञान और तकनीक की तरह लगातार प्रगति हुई है।

तथापि, जिस प्रकार आज के लोगों और आज से हजारों साल पहले के लोगों में कोई शारीरिक अन्तर नहीं है, उसी प्रकार बुद्धि और क्षमता की दृष्टि से भी उनमें कोई भिन्नता नहीं रही है। यह विचार कि 20वीं सदी के लोगों के पास कहीं ज़्यादा उन्नत सभ्यता है क्योंकि उनकी बौद्धिक क्षमता का काफी विकास हुआ है, एक भ्रमित विचार है, विकासवादी प्रचार का नतीजा है।

576
दुनिया में अनेक भाषाएं बोलने वाली अनेक प्रजातियां हैं और ये सभी भाषाएं काफी दुरूह हैं। विकासवादी सोच भी नहीं सकते कि ऐसी दुरूहता भला क्रमिक तरीके से कैसे आई होगी!

577
रिचार्ड डॉकिन्स
नोएम कॉम्स्की

579
चार्ल्स डार्विन

इतिहास के हर कालखंड में सूर्य की उपासना करने वाले लोग रहे हैं। आज के युग में भी ऐसे झूठे अंधविश्वास फल-फूल रहे हैं जबकि लोग अत्याधुनिक दशाओं में जी रहे हैं। इससे यह पता चलता है कि वे लोग भ्रमित विश्वास वाले अनीश्वरवादी हो सकते हैं, न कि आदिम।

580
बगल की तस्बीर में सुमेरियाई लोगों के भ्रमित विश्वास से उपजे "बिजली के देवता" को दिखाया गया है। ऐसे 'देवता' तब उभरते हैं जब सच्चा आध्यात्मिक विश्वास विकृत हो जाता है।

जब सुमेरियाई पाटियों का अनुवाद किया गया तो यह तथ्य प्रकट हुआ कि बेबिलोन के उपासना गृहों में अनेकों झूठे देवी-देवताओं का 'प्रादुर्भाव' हो गया। यह काल-क्रम में एकमेव सत्य परमेश्वर के ही अनेक नामालंकरणों की गलत व्याख्या के कारण हुआ।

बेबिलोन के उपासना गृह के झूठे देव मरडूक

581
फ़राओ अख़नातून एक ईश्वर में विश्वास करता था और उसने सभी मूर्तियां विनष्ट करवा दी थीं। अपनी आस्था का इज़हार उसने एक श्लोक की निम्नांकित पंक्तियों में की है :
"कितने हैं तुम्हारे कर्म हालांकि वे हमारी नज़रों से ओझल हैं। हे एकमेव परमेश्वर जिसके सिवा और कोई नहीं! अपनी ही इच्छा से तूने इस पृथ्वी की रचना की। तू ही है एकाकी समस्त जन-गण, पशु-गण, जन्तु समुदाय। समस्त वे जो धरती पर विचरते हैं पैरों से, उड़ते हैं उच्च गगन में पंखों से ..."

मानवशास्त्रीय शोधों से ज्ञात हुआ है कि बहुदेववादी धारणा का अभ्युदय एकेश्वरवाद की विकृति से हुआ है। यह एक प्रमाण है कि धार्मिक "विकास" जैसी कोई प्रक्रिया घटित नहीं हुई है, जैसाकि कुछ लोग हमसे मनवाना चाहते हैं।

582
अंधविश्वासी हिन्दू धर्म में भी कई झूठे देवी-देवता हैं। तथापि, शोध से यह ज्ञात हुआ है कि हिन्दू धर्म के आरंभिक दिनों में लोग एक ही ईश्वर में विश्वास करते थे।

583
अपनी पुस्तक "द रिलीजन ऑफ ग्रीस इन प्रि-हिस्टरिक टाइम्स" में प्राचीन यूनान के धार्मिक विश्वासों के बारे में शोध करने वाले एक्सेल डब्ल्यू पर्सन का कहना है : ".... बाद में वहां भारी संख्या में कमाधिक महत्वपूर्ण व्यक्तित्वों का विकास हुआ जिनसे ग्रीस की धार्मिक दंतकथाओं में हमारा आमना-सामना होता है"।

585

समय का अस्तित्व हमारे मस्तिष्क में अनेक प्रकार के दृष्टांतों की तुलनात्मक सोच के रूप में हुआ करता है। यदि व्यक्ति के पास स्मृति नहीं होती तो उसका मस्तिष्क ऐसे विश्लेषण नहीं कर पाता और इस तरह समय की कोई अवधारणा ही नहीं होती। यदि लोगों के पास स्मृतियां नहीं होतीं तो वे बीते हुए समय की किसी अवधि का विचार ही नहीं कर पाते, वरन उस एक "क्षण" का ही अनुभव कर पाते जिसमें वे जी रहे हैं।

587

द्वितीय विश्वयुद्ध का आदि और अंत, अंतरिक्ष में प्रथम रॉकेट का छोड़ा जाना, प्राचीन मिस्र के पिरामिडों की पहली आधारशिला का रखा जाना और स्टोनहेंज के टनों भारी पत्थरों को खड़ा किया जाना -- ईश्वर की दृष्टि में ये सब एक ही क्षण में विद्यमान हैं।

**संदर्भ**


1. रिचार्ड लीके, "दि ऑरिजिन ऑफ ह्यूमनकाइंड" (साइंस मास्टर्स सीरीज). न्यूयॉर्क: बेसिक बुक्स, 1994, पृ. 12
2. एल.बी.एस. लीके, "ऍडम्स ऍन्सेस्टर्स : द इवॉल्युशन ऑफ मैन ऐंड हिज कल्चर", न्यूयॉर्क ऐंड एवॅन्सटन, हार्पर ऐंड रो पब्लिशर्स, 4था संस्करण, 1960, पृ. 9-10
3. ऐब्रम कार्डिनर, 'साइंटिफिक अमेरिकन', जून 1918, में "पोस्टह्यूमस एसेज़ बाइ ब्रैनिस्लो मॅलिनॉस्की" से सारगर्भित, पृ. 58
4. मेल्विल हस्कोंविट्स, "मेन ऐंड हिज वर्क्स", न्यूयॉर्क, नॉफ़, 1950, पृ. 467
5. उपरोक्त, पृ. 476
6. एडवार्ड ऑगस्टस फ्रीमैन, "रेस ऐंड लैग्वेज़" के 'एसेज, इंगलिश ऐंड अमेरिकन' में - परिचय, चित्रों और टिप्पणियों सहित, न्यूयॉर्क: पी.एफ. कॉलियर ऐंड संस, [सी 1910], हार्वर्ड क्लासिक्स, सं. XXVIII
7. अहमद थॉमसन, "मेकिंग हिस्ट्री", लन्दन: ता-हा पब्लिशर्स लि., 1997, पृ. 4
8. जाख़ ज़ोरिक, "डिड होमो एरेक्टस कॉडल हिज ग्रैंडपैरेंट्स?", डिस्कवर, खंड 27, सं. 01, जनवरी 2006, पृ. 67
9. रोजर लेविन, "दि ऑरिजिन ऑफ मॉडर्न ह्यूमन्स", न्यूयॉर्क : डब्ल्यू. एच. फ्रीमैन ऐंड कम्पनी, 1993, पृ. 116
10. क्लेयर इम्बर, "एप-मैन: ऑरिजिन ऑफ सॉफिस्टिकेशन", बीबीसी न्यूज़, 22 फरवरी 2000, http://news.bbc.co.uk/1/hi/sci/tech/650095.stm पर ऑनलाइन
11. लेविन, "दि ऑरिजिन ऑफ मॉडर्न ह्यूमन्स", पृ. 148-149
12. उपरोक्त, पृ. 149
13. डॉ. डेविड ह्वाइटहाउस, "ओल्डेस्ट' प्रि-हिस्टरिक आर्ट्स अन-अर्थेड", बीबीसी न्यूज़, 10 जनवरी 2002, http://news.bbc.co.uk/1/hi/sci/tech/1753326.stm पर ऑनलाइन
14. जीन क्लॉट्स, "शॉवेट केव: फ्रांस्ज़ मैजिकल आइस एज आर्ट", नेशनल ज्योग्राफिक, अगस्त 2001, पृ. 156
15. डॉ. डेविड ह्वाइटहाउस, "आइस एज स्टार मैप डिस्कवर्ड", बीबीसी न्यूज़, 9 अगस्त 2000, http://news.bbc.co.uk/1/hi/sci/tech/871930.stm पर ऑनलाइन
16. http://goldenageproject.org.uk/108catalhuyuk.html
17. फेनोमेन, 15 सितम्बर 1997, पृ. 45
18. रॉबिन डॅनेल, "दि वर्ल्ड्स ओल्डेस्ट स्पियर्स", 'नेचर', खंड 385, 27 फरवरी 1997, पृ. 767
19. उपरोक्त
20. उपरोक्त, पृ. 768

21. हार्टमुट थीम, "लोअर पॅलियोलिथिक स्पियर्स फ्रॉम जर्मनी", 'नेचर', खंड 385, 27 फरवरी 1997, पृ. 807
22. 'तास देवरिंदे यासम' ("लाइफ इन द स्टोन एज"), टेर्रा एक्स डॉक्युमेंट्री फिल्म, टोरंटो
23. बिलिम वे तेकनीक ("साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी" पत्रिका), सितम्बर 2000
24. फिलिप कोहेन, "ओपेन वाइड", 'न्यू साइंटिस्ट', अंक 2286, 14 अप्रिल 2001, पृ. 19
25. ग्लिन इज़ाक, बारबरा इज़ाक, "दि आर्केयोलॉजी ऑफ ह्यूमन ऑरिजिन्स", कॅम्ब्रिज, कॅम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, 1989, पृ. 71; सी.बी.एम. मॅकबर्नी, 'दि हौआफ़्तेह' (सिरिनाइका), कॅम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, 1967, पृ. 90
26. वेदिम एन. स्तेपैंचुक, "प्रोलॉम II, ए मिडिल पॅलियोलिथिक केव साइट इन द इस्टर्न क्रीमिया विद नॉन-युटिलिटॅरियन बोन आर्टिफॅक्ट्स", प्रोसीडिंग्स ऑफ दि प्रि-हिस्टरिक सोसायटी, 59, 1993. पृ. 17-37, पृ. 33-34
27. पॉल मेलर्स, दि निएनडर्थल लिगॅसी, प्रिंस्टन : युनिवर्सिटी प्रेस, 1996, पृ. 17, वेदिम एन. स्तेपैंचुक, "प्रोलॉम II, ए मिडिल पॅलियोलिथिक केव साइट इन द इस्टर्न क्रीमिया विद नॉन-युटिलिटॅरियन बोन आर्टिफॅक्ट्स", प्रोसीडिंग्स ऑफ दि प्रि-हिस्टरिक सोसायटी, 59, 1993. पृ. 17-37, पृ. 17
28. "निएन्डर्थल्स लिव्ड हार्मोनियसली", दि ए ए ए एस साइंस न्यूज़ सर्विस, 3 अप्रल 1997
29. रूथ हैंके, "ऑफ़रेक्त ऑस देन बॉमेन", 'फ़ोकस', खंड 39, 1996, पृ. 178
30. इलैन मोरगन, "दि स्कार्स ऑफ इवॉल्यूशन", न्यूयॉर्क, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, 1994, पृ. 5
31. 'ची', अप्रिल 2005, पृ. 46
32. माइकेल बैगेन्ट, "ऍन्श्येंट ट्रेसेज : मिस्ट्रीज इन ऍन्श्येंट ऐंड अर्ली हिस्ट्री", इंग्लैंड, पेंग्विन बुक्स, 1999, पृ. 10-11
33. डेविड ब्रूस्टर, "क्वेरिज ऐंड स्टेट्मेंट्स कन्सर्निंग अ नेल फाउंड इमबेडेड इन अ ब्लॉक ऑफ सैंडस्टोन ऑब्टेन्ड फ्रॉम किंगूडी (मिल्नफील्ड) क्वार्री, नॉर्थ ब्रिटेन", ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर दि ऍडवांसमेंट ऑफ साइंस की वार्षिक रिपोर्ट, 1844, पृ. 51
34. बैगेन्ट, "ऍन्श्येंट ट्रेसेज ..", पृ. 14
35. जॉन बेन्स, जॅरोमिर मैलेक, "एस्की मिसिर मेदेनियेती", इस्तांबुल: लेतिसिम यायिन्लैरी, 1986, परिचय
36. विलियम हॉवेल्स, "गेटिंग हियर : दि स्टोरी ऑफ ह्यूमन इवॉल्यूशन", वाशिंगटन डी.सी., कम्पास प्रेस, 1993, पृ. 229
37. www.kuranikerim.com/telmalili/hud.htm
38. रुडयार्ड किपलिंग, "दि एलिफैंट्स चाइल्ड", 'जस्ट सो स्टोरिज' से, १९०२. http://www.boop.org/jan/justso/elephant.htm
39. स्टिफेन जे. गोल्ड, ब्जॉर्न कर्टेन के "डांस ऑफ दि टाइगर : अ नॉवेल ऑफ दि आइस एज", न्यूयॉर्क, रैडम हाउस, 1980, पृ. xvii-xviii के "इंट्रोडक्शन" से
40. स्टिफेन जे. गोल्ड, "दि पंडा'ज थम्ब : मोर रिफ़्लेक्शंस इन नेचुरल हिस्ट्री" [1980], लन्दन, पेंग्विन, 1990, पुन:मुद्रित सं. पृ. 158 के "दि रिटर्न ऑफ होपफुल मॉन्स्टर्स" में
41. साइमन वैसबार्ड, "दि वर्ल्ड्स लास्ट मिस्ट्रीज" (दूसरा संस्करण), रीडर्स डाइजेस्ट, 1978, पृ. 138
42. ग्राहम हैंकॉक, सांथा फाइया, "हैवेन्स मिरर : क्वेस्ट ऑफ दि लॉस्ट सिविलाइजेशन", न्यूयॉर्क : थ्री रिवर्स प्रेस, 1998, पृ. 304
43. मुस्तफ़ा गज़ाला, "हिस्टोरिकल डिसेप्शन : दि अनटोल्ड स्टोरी ऑफ ऍन्श्येंट इज़िप्ट", बॅस्टेट पब्लिशिंग, ईरी, पीए, यूएसए, 1996, पृ. 295, 296
44. डायरेक्टर ऑफ दि पिरामिड्स डॉ. ज़ाही हॉवास से साक्षात्कार, http://www.pbs.org/wgbh/nova/pyramid/excavation/hawass.html

45. गज़ाला, "हिस्टोरिकल डिसेप्शन ..", पृ. 296
46. http://www.amonline.net.au/teachers_resources/background/ancient_egypt04.htm
47. अफ़ेत इनान, "एसकी मिस्र तारिही मेदेनियेत" (ऍन्श्यैंट इज़िप्शियन हिस्ट्री ऐंड सिविलाइजेशन)अंकारा : तुर्क़ तारीह कुरुमु बासिमेवी, 1956, पृ. 318
48. उपरोक्त, पृ. 87
49. उपरोक्त, पृ. 201
50. जेम्स हेनरी ब्रेस्टेड, "ऍन्श्यैंट टाइम्स ऑर अ हिस्ट्री ऑफ दि ऍन्श्यैंट वर्ल्ड", 1916, पृ. 64
51. मुस्तफ़ा गज़ाला, "इज़िप्शियन हार्मनी : दि विज़ुअल म्युजिक", एनसी: तेहुटी रिसर्च फाउंडेशन, 2000, पृ. 64
52. http://www.waterhistory.org/histories/cairo/
53. गज़ाला, "हिस्टोरिकल डिसेप्शन ..", पृ. 115
54. उपरोक्त, पृ. 116
55. उपरोक्त
56. "दि आइज़ ऑफ दि स्फिंक्स", न्यूयॉर्क, बर्कले पब्लिशिंग ग्रुप, 1996, पृ. 119
57. २ नोवा प्रोडक्शंस, "हू बिल्ट दि पिरामिड्स?", www.pbs.org
58. फ़्रैंक डॉर्नेबर्ग, "इलेक्ट्रिक लाइट्स इन इज़िप्ट?". http://www.world-mysteries.com/sar_lights_fd1.htm
59. विलियम आर. कॉर्लिस, "ऍन्श्यैंट मैन : अ हैंडबुक ऑफ पज़लिंग आर्टिफैक्ट्स", मेरीलैंड. दि सोर्सबुक प्रोजेक्ट, 1978, पृ. 443
60. http://www.unsolved-mysteries.net/english/
61. हेनरी जी., "इन सर्च ऑफ डीप टाइम : बियोंड दि फॉसिल रिकॉर्ड टू अ न्यू हिस्ट्री ऑफ लाइफ", द फ्री प्रेस, साइमन ऐंड स्शूस्टर इन्कॉर्पोरेटेड का एक प्रभाग, 1999, पृ. 5
62. फिलिप ई. जॉनसन, "रीज़न इन द बॅलेंस : दि केस अगेंस्ट नैचुरलिज़्म इन साइंस", लॉ ऐंड एज़ुकेशन, डॉनर्स ग्रोव, इलिनॉयस : इंटरवर्सिटी प्रेस, 1995, पृ. 62.
63. टेमेल ब्रिटैनिका, खंड 16, अना याइंचिक, इस्तांबुल, जून 1993, पृ. 203
64. जॉर्ज्स कॉन्टेन्यु, "एवरीडे लाइफ इन बेबिलोन ऐंड असीरिया", लन्दन, एडवार्ड आर्नोल्ड पब्लिशर्स, 1964
65. सैमुअल नोआ क्रेमर, "हिस्ट्री बिगिन्स ऐट सुमेर". "थर्टी नाइन फस्ट्स इन रिकॉर्डेड हिस्ट्री. फिलाडेल्फिया, युनिवर्सिटी ऑफ पेंसिल्वेनिया प्रेस, 1981
66. डॉ. डेविड ह्वाइटहाउस, "वर्ल्ड्स ओल्डेस्ट टेलिस्कोप?", बीबीसी न्यूज़, 1 जुलाई 1999, http://news.bbc.co.uk/1/low/sci/tech/380186.stm
67. दि मायन कॅलेंडर, http://webexhibits.org/calendars/calendar-mayan.html
68. डेविड प्रेमॅक, "गैवागी' ऑर दि फ़्यूचर हिस्ट्री ऑफ दि अनिमल लैंग्वेज़ कंट्रोवर्सी", कॉग्नीशन, 19, 1985, पृ. 281-282
69. डेरेक बिकर्टन, "बेबेल्स कॉर्नरस्टोन", 'न्यू साइंटिस्ट', अंक 2102, 4 अक्टूबर 1997, पृ. 42
70. रिचार्ड डॉकिंस, "अनवीविंग द रेन्बो", बोस्टन : ह्यूज़टन मिफ़्लिन कं., 1998, पृ. 294
71. वेंडी के. विल्किंस तथा ज़ेनी वेकफील्ड, "ब्रेन इवॉल्यूशन ऐंड न्यूरोलिंग्विस्टिक प्रि-कंडिशंस", 'बेहैवियरल ऐंड ब्रेन साइंसेज, 18 (1) : 161 - 226
72. नोएम चॉम्स्की, "पावर्स ऐंड प्रॉस्पेक्ट्स : रिफ़्लेक्शंस ऑन ह्यूमन नेचर ऐंड दि सोशल ऑर्डर", लन्दन, प्लूटो प्रेस, 1996, पृ. 16
73. स्टिफेन एच. लैंग्डन, "सिमॅटिक माइथोलॉजी, माइथोलॉजी ऑफ ऑल रेसेज", खंड ५, आर्केऑल इंस्टीच्यूट, अमेर, 1931, पृ. xviii
74. स्टीफेम एच. लैंग्डन, "दि स्कॉट्समैन", 18 नवम्बर 1936

75. एच. फ्रैंकफ़ुर्त, "थर्ड प्रिलैमिनरी रिपोर्ट ऑन एक्सकॅवेशंस ऐट तेल अस्मार (एश्नुआना) : पी.जे. वाइजमैन द्वारा "न्यू डिस्कवरीज इन बेबिलोनिया अबाउट ज़ेनेसिस', लन्दन, मार्शल, मॉरगन ऐड स्कॉट, 1936, पृ. 24, में उद्धृत
76. पी. ले पेज़ रिनॉफ़, "लेक्चर्स ऑन दि ऑरिजिन ऐंड ग्रोथ ऑफ रिलीजन ऐज इलस्ट्रेटेड बाइ दि रिलीजन ऑफ ऍन्श्येंट इज़िप्ट", लन्दन, विलियम्स ऐंड नॉर्गेट, 1897, पृ. 90
77. सर फ़िंडर्स पेट्री, "दि रिलीजन ऑफ ऍन्श्येंट इज़िप्ट", लन्दन, कॉन्स्टेबुल, 1908, पृ. 3,4
78. एडवार्ड मैक्रेडी, "ज़ेनेसिस ऐंड पैगन कॉस्मोगोनिज", विक्टोरिया इंस्टिच्यूट के 'ट्रांजैक्शंस', खंड 72, 1940, पृ. 55
79. मैक्स मूलर, "हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिट्रेचर", सैमुअल ज्वेमेर द्वारा उद्धृत, पृ. 87
80. ऍक्सेल डब्ल्यू. पर्सन, "दि रिलीजन ऑफ ग्रीस इन प्रि-हिस्टरिक टाइम्स", युनिवर्सिटी ऑफ कॅलिफोर्निया प्रेस, 1942, पृ. 124
81. आइरीन रॉज़ेंज्वीग के "रिचुअल्स ऐंड कल्ट्स ऑफ प्रि-रोमन इगूवियम" की जॉर्ज एम. ए. हैंफमैन द्वारा की गई समीक्षा, 'अमेरिकन जरनल ऑफ आर्केयोलॉजी', खंड 43, सं. 1, जन.-मार्च 1939, पृ. 170, 171
82. टिम फॉगलर, "फ्रॉम हियर टू इटर्निटी", 'डिस्कवर', खंड 21, सं. 12, दिसम्बर 2000